

प्रकाशक  
पो० कण्ठमणि शास्त्री 'विशारद'  
सञ्चालक :  
विद्याविभाग, कांक्रोली  
(राजस्थान)

प्रथमावृत्ति, २००० प्रतियाँ  
दीपमालिका २००८ वि०  
मूल्य ३)

मुद्रक :  
प्रभुदयाल मीतल,  
अग्रवाल प्रेस, मथुरा.

# आमुख



हैं कि आज हिन्दी-साहित्य-जगत्, विशेषकर अष्टछाप-प्रेमी सुधी समाज के सम्मुख गोविंदस्वामी का पद-संग्रह प्रस्तुत किया जा रहा है, जो द्वारकेश अथमाता का २०वां पुष्प है। साहित्य-जगत् को अष्टछाप की अमर वाणी के रस का आस्वादन कराना प्रस्तुत प्रयास का एक अन्यतम उद्देश्य है। अष्टछाप के महानुभावों का विशाल साहित्य है, जो शवेषणा के अभाव में या तो इधर उधर बिखरा पड़ा है, अथवा संप्रहीत होने पर भी प्रकाश में नहीं आ सका है। अष्टछाप के कवि हिन्दी साहित्य के प्राण होते हुए भी, भक्त होने के नाते पुष्टिमार्ग के सर्वस्व हैं। उन्हें प्रेरणा और ज्योति ही पुष्टिमार्ग से मिलती है। अतः कीर्तन-सेवा-प्रणाली के संग्रन्ध से जितना साहित्य पुष्टिमार्ग के विभिन्न सस्थानों में संग्रहीत वा केन्द्रित है, उतना हिन्दी साहित्य में अन्यत्र नहीं। इसी पद-साहित्य के साथ-साथ यहाँ का विशाल साम्प्रदायिक साहित्य-सम्प्रदाय के शास्त्रार्थ, तिलकायतों, अष्टछाप महानुभावों और भक्त कवियों एवं आन्ध्र-जातीय विद्वानों के चरित्र एवं समग्र पुष्टिमार्गीय साहित्य का तल्लस्पर्शी परिज्ञान हिन्दी साहित्य की अद्यावधि निर्यात इतिहास-मर्यादा को प्रामाणिक, निर्विकल्प और असंदिग्ध बनो सकता है। अतएव पुष्टिमार्ग के इन विशाल साहित्य-संग्रहालयों का मन्यन कर सामग्री को प्रकाश में लाने के उद्देश्य से काँकरोली विद्याविभाग आज विगत पच्चीस वर्षों से प्रयत्नशील है। उसका अपना एक विशाल संग्रहालय है। सरस्वती-भण्डार के हस्त-लिखित कोई पाँच हजार ग्रन्थों में से अनेक पद-कीर्तन-रत्नों का अनुशीलन कर अष्टछाप साहित्य का सम्पादन, प्रकाशन और अष्टछाप-स्मारक का निर्माण यहाँ की प्रमुख-प्रवृत्ति है, जिसे इसकी सहयोगी संस्था 'शुद्धाद्वैत एकेडमी' संचालित कर रही है।

प्रस्तुत गोविंदस्वामी का संग्रह उसी के मंत्रयन का परिणाम है, जिसका सम्पादन शु० वृ० पीठाधीश्वर काँकरोलीस्थ गोस्वामि श्रीव्रजभूषण-लालजी महाराज ने स्वयं ठत्साह पूर्वक किया है। आप हिन्दी अष्टछाप साहित्य के मर्मज्ञ विद्वान् और साम्प्रदायिक सेवा-पद्धति, भावना और सिद्धान्त के तत्वज्ञ हैं। गोविंदस्वामी पर एक विश्लेषणात्मक दृष्टि से निवचक श्री गोकुलानंद तैलङ्ग. सा० भू० द्वारा लिखाया गया है, जो एक अध्ययन की वस्तु है। प्रस्तुत संग्रह के साथ गोविंदस्वामी की वार्ता एक नवीन पद्धति पर दी जा रही है। साहित्य के सम्मुख इस सामग्री से एक नवीन दिशा की और गतिशील होने का उपक्रम किया जा रहा है।

अभी तक हिंदी-साहित्य सप्ताह को अष्टछाप के आठों कवियों का कितना साहित्य है, यह विदित नहीं हो सका है। अतएव प्रस्तुत सस्था ने आठों कवियों के पदों की प्रतीक-सूचियाँ और पद-संग्रह तैयार कराये हैं, जो यथा साधन-सुविधा क्रमशः प्रकाशन की योजना के अन्तर्गत हैं। सूरसागर, परमानन्द-सागर सरीखे ग्रन्थों का सम्पादन-प्रकाशन तो विशाल समय और अर्थसाध्य कार्य है, फिर भी तदर्थ प्रयत्न किया जा रहा है। अतएव निदर्शन पहिले स्वरूप छोटे कवियों की रचना को हाथ में लिया गया है। 'गोविंदस्वामी' इस योजना का एक अंग है।

अभी तक की गवेषणा के फल-स्वरूप गोविंदस्वामी के ५७५ पद उपलब्ध हुए हैं। इनका सङ्कलन सरस्वती-भण्डार काँकरोली के विविध स्वतन्त्र संग्रहों एवं समस्त हिन्दी बन्धों में समागत हस्त-लिखित कीर्तन-संग्रहों के आधार पर किया गया है। 'गोविंद', 'गोविंद प्रभु' वा 'गोविंददास' छाप के जितने भी पद मिले हैं, उन्हें सङ्कलित कर लिया गया है। संभव है इन संग्रहों के प्राचीन लिपिकारों के अनवधान से उसमें कुछ पद अन्य कवियों के भी 'छाप' परिवर्तन के कारण न्यूनानधिक रूप में आ गये हों, किंतु इसका निर्णय वा सन्तुलन तभी हो सकता है, जब समस्त आठों कवियों, बल्कि अन्य भक्त कवियों के पद-साहित्य का भी गवेषणात्मक और तुलनात्मक अभ्ययन कर लिया जाय। किन्तु यह कार्य एक लम्बे समय, परिश्रम, तथा अर्थव्यय की अपेक्षा रखता है। अतः एक बार साहित्यजगत् में यावत्प्राप्य सामग्री सामने आ जाय, फिर यथासौकर्य उस पर विद्वज्जन विचार, मनन करते रहें, इस दृष्टिबिन्दु से यह संग्रह प्रकाशित किया जा रहा है।\*

### † तालिका ( ७ )

\* सूरसागर-प्रकाशन का कार्य नागरी-प्रचारिणी सभा काशी के अथक प्रयत्न से सम्मुख आ चुका है, जिस पर अब अपनी दृष्टि से विचार करने का साहित्यिकों को अवसर मिला है।

'परमानन्द सागर' का मौलिक सम्पादन हमारे यहाँ प्रस्तुत कर लिया गया है, जो मात्र प्रकाशन की अपेक्षा रखता है।

नन्ददास का संग्रह साहित्य प्रयाग विश्वविद्यालय के द्वारा प्रकाश में आ ही चुका है, जो विद्वानों के लिये नवीन दृष्टि से विचार करने का अवसर देता है।

हमारे सम्पादन की आधार-सामग्री विभिन्न कालों में विभिन्न लिपिकारों द्वारा लिखी गयी है। अतएव उन सग्रहों में विसंवाद होना स्वाभाविक ही है। पाठान्तर इसी का परिणाम है। किस पाठ को मूल में रखना और किसे पाठान्तर में देना, यह एक समस्या हिन्दी जगत् के समक्ष रही है। इसी प्रकार एक ही पद की प्रतीक-तुक (टेक) गायन-भेद से उसके पूर्वाद्ध, उत्तराद्ध अंशों वा एरी प्यारी, अरी, आज, माई आदि अंशों को लेकर कई प्रकार से प्रारंभ होती है, जो पद-प्रतीक-तालिका में कोष्ठान्तर्गत पक्तियों से विदित होगी। ऐसी अवस्था में हमने प्राचीनतम लिपि में लिखित सग्रह को ही प्राथमिकता दी है। साथ ही वर्ण्य विषय के आधारभूत श्रीमद्भागवत के प्रसंग एव सम्बन्धित शुद्धाद्वैत साम्प्रदायिक ग्रन्थों के मूल तथ्यों के साथ पुष्टिमार्गीय भावना, सेवापद्धति, काव्य-सौंदर्य तथा परम्परागत कीर्तन-प्रणाली का भी ध्यान रखा गया है और ऐसा किये बिना अष्टछाप का मौलिक स्वरूप निर्धारित नहीं हो सकता।

प्रस्तुत सग्रह के अनेक कीर्तनों में अष्टछाप के अन्य कवियों के भाव, शब्द-योजना वा पद-विन्यास की अविकल स्थिति से उनके अन्य-कृत होने का भ्रम उपस्थित हुआ है, हो सकता है। किन्तु यह भ्रम निर्मूल है। अष्टछाप के आठों कवि सयुक्त रूप में एक भावना और एक ही आत्मानुभूति की तीव्रता को लेकर प्रभु का लीला-गान करते आये हैं। अतः कभी-कभी वे भाव एक दूसरे से मिलते से प्रतीत होते हैं। सभव है सभी कवि समस्या-पूर्ति की तरह पद-निर्माण कर प्रतिदिन वा वर्षोत्सवों में उन्हें गाते रहे हों और प्रत्येक समय लीला भावना अपरिवर्तनीय होने से उनके पदों की कल्पनाओं में साम्य आ जाता हो। फिर निरवधि सयुक्त सेवा, निरुत्तम सम्पर्क और परस्पर काव्य-चर्चा से एक दूसरे की उद्भावनाएँ उनकी स्मृति में बनी रहने से गाते समय भी आ जाती हों। यही पद-साम्य लिपिकारों की स्थूल बुद्धि के कारण छाप-परिवर्तन का कारण हो सकता है।

पुष्टिमार्गीय सेवा-सविधान के आरम्भ में जो कीर्तनकार हुए वे परम भावुक, लीलामर्मज्ञ एवं उत्कृष्ट साहित्यसृष्टा, साथ ही साहित्य-पारखी थे। अनन्तर की परंपराओं में कीर्तनकारों की वह क्षमता न्यूनतर होती गई और मात्र वेतनभोगी, मर्मज्ञता-विहीन, जड़ परंपराओं पर अग्रसर कीर्तनियार्यों की सर्वत्र बहुलता हो गयी, जो सुने-सुनाये वा लिखे-लिखाये पदों को बुद्धि-प्रयोग के बिना लीला, सिद्धान्त, भावना वा इतिहास और अर्थज्ञान से रहित शुद्ध-अशुद्ध रूप में

अविकल गाते रहे हैं। फिर अशिक्षित लिपिकारों तथा हिन्दी, विशेषकर गुजराती भाषा-भाषी अनधिकारी साहित्य-संगीत-कला से अपरिचित व्यवसायी प्रकाशकों द्वारा उसी अन्धानुकरण-परिपाटी को अपनाया गया और उसी की पुनरावृत्तियाँ की गयीं। आज के प्रकाशित वा हस्त-लिखित साहित्य के विकृत और अशुद्ध रूप का यही कारण है, जिसने हम साहित्य का एक विकृत रूप उपस्थित किया है। यही बात उन हिन्दी जगत् के अष्टछाप साहित्य के समालोचक या प्रकाशकों के लिये चरितार्थ होती है, जो शुद्धाद्वैत सम्प्रदाय की त्रिविध प्रणाली से अनभिज्ञ रह कर केवल अपनी कान्यगत विद्वत्ता के आधार पर यद्वा तद्वा यत्र तत्र प्रकाशन कर देना एक परम पुरुषार्थ माने हुए हैं।

इन्हीं कारणों से हमारे सम्पादन में बड़ी असुविधा ग्ही है। अनेक गतानुगतिक 'मल्लिका स्थाने मल्लिका' की प्रणाली से प्रतिलिपिबद्ध संग्रहों का सवाद करने पर भी कई स्थलों में मौलिक पाठ नहीं लाया जा सका है और कतिपय स्थल तो अनिर्णीत रूप में ज्यों के त्यों दे देने पड़े हैं। फिर प्रेस की दूरी के कारण भी अनेक अशुद्धियाँ रह गयीं हैं, जिनके लिये एक संशोधन पत्र† हम अन्यत्र दे रहे हैं। आशा है त्रिविशताश्रों को ध्यान में रख कर साहित्य-प्रकाशन के सद्दुद्देश्य को ही सर्वोपरि महत्त्व देते हुए पाठक गण इन त्रुटियों को सुधार कर पढ़ेंगे।

शब्दों के रूप-निर्धारण के सम्बन्ध में हमारी यह नीति रही है कि प्राचीनतम प्रतियों में किसी शब्द के जितने भी रूप प्रयुक्त होने हैं, सभी को स्वीकार कर लिया जाय। एक ही नियम ब्रजभाषा में सर्वत्र निभाना कठिन है। वे सभी रूप ब्रजभाषा के ही रूप हैं, प्रयुक्त हैं, अतः ग्राह्य हैं। फिर भी प्राचीन प्रतियों व लिपियों के आधार पर भाषा की मौलिकता, अर्थात्-व्यञ्जकता, सौन्दर्य एवं प्रकृति प्रत्यय के सामञ्जस्य को सम्मुख रखकर कुछ शैली का निर्धारण किया गया है, जो समग्र अष्टछाप-साहित्य के आलोचन के अनन्तर ही परिशुद्ध की जा सकेगी।

गोविंदस्वामी एक अच्छे कवि होने हुए भी, उनके छन्द-बन्ध में अनेक स्थलों में शैथिल्य है। कोई तुरु अनुपात से ब्रह्म लम्बी-लम्बी चली गयी है, कुछ छन्द और लय की दृष्टि से भी छोटी हैं। मभव है, भावावेश में सङ्गीत क

अद्विरल प्रवाह के साथ वे पद-रचना करते गये हों और काव्य की दृष्टि से वे पद शुद्धिपूर्ण होने पर भी ताल, स्वर तथा राग-रागनियों में ठीक बँध जाते हों। तथापि भावसौंदर्य की दृष्टि से उनका काव्य गेय और अनुशीलनीय है।

अष्टछाप के प्रत्येक कवि के ऐसे संग्रहों में हमारा विचार उस कवि के सम्बन्ध में सम्पूर्ण अध्ययन-सामग्री देने का रहा है—उनके ऐतिह्य वा काव्य सामग्री के विषय में ही नहीं, किंतु वर्णित पुष्टिमार्गीय समग्र सिद्धान्त, साहित्य, कला, लीला, भावना आदि के सम्बन्ध में भी। कुछ सामग्री हम दे भी रहे हैं। तथापि दैनिक एवं वार्षिक उत्सवों की भावना, सेवाक्रम—विशिष्ट आचार्य परम्परा, पारिभाषिक शब्दकोष, विशिष्ट व्याकरण-नियमानुसार शब्दों का रूप-निर्धारण, राग-रागनियों तथा वाद्यों के विस्तृत विवरण, वस्त्र-आभरण के स्वरूप, चित्र—भोग-पाक सामग्रियों के प्रकार—पुष्टिमार्गीय सस्थान, मन्दिर, निधि, साहित्य का निदर्शन, व्यवहार आदि विषयों पर सम्प्रति समयभाव से प्रकाश नहीं डाला जा सका है। अग्रिम किसी संस्करण वा अन्य कवि के प्रकाशन के साथ यह सामग्री भी देने का प्रयत्न किया जायगा। अष्टछाप स्वयं एक व्यापक विषय हैं। अतएव अभी जो शक्य हो सका है, संग्रह, तालिका, समीक्षा के रूप में दिया जा रहा है। समालोचनात्मक वा तुलनात्मक अध्ययन तो अभी दूर की बात है।

साहित्य एवं पुष्टि-भक्ति-सम्प्रदाय के भावुक अध्ययनशील विद्वान् इस प्रयत्न को परखेंगे, समझेंगे और भविष्य के प्रकाशनों के लिये दिशा-सूचन देंगे, इस आशा के साथ प्रस्तुत वक्तव्य को विश्राम दिया जा रहा है। हमारे चरित नायक 'गोविंदस्वामी के सर्वस्व श्रीद्वारकाधीश प्रभु ऐसी पुण्य साहित्य-सेवा में प्रेरणा देते रहेंगे, यह एकमात्र अभ्यर्थना उनके श्रीचरणों में है। शम्भु,

दीपमालिका  
स० २००८ वि०

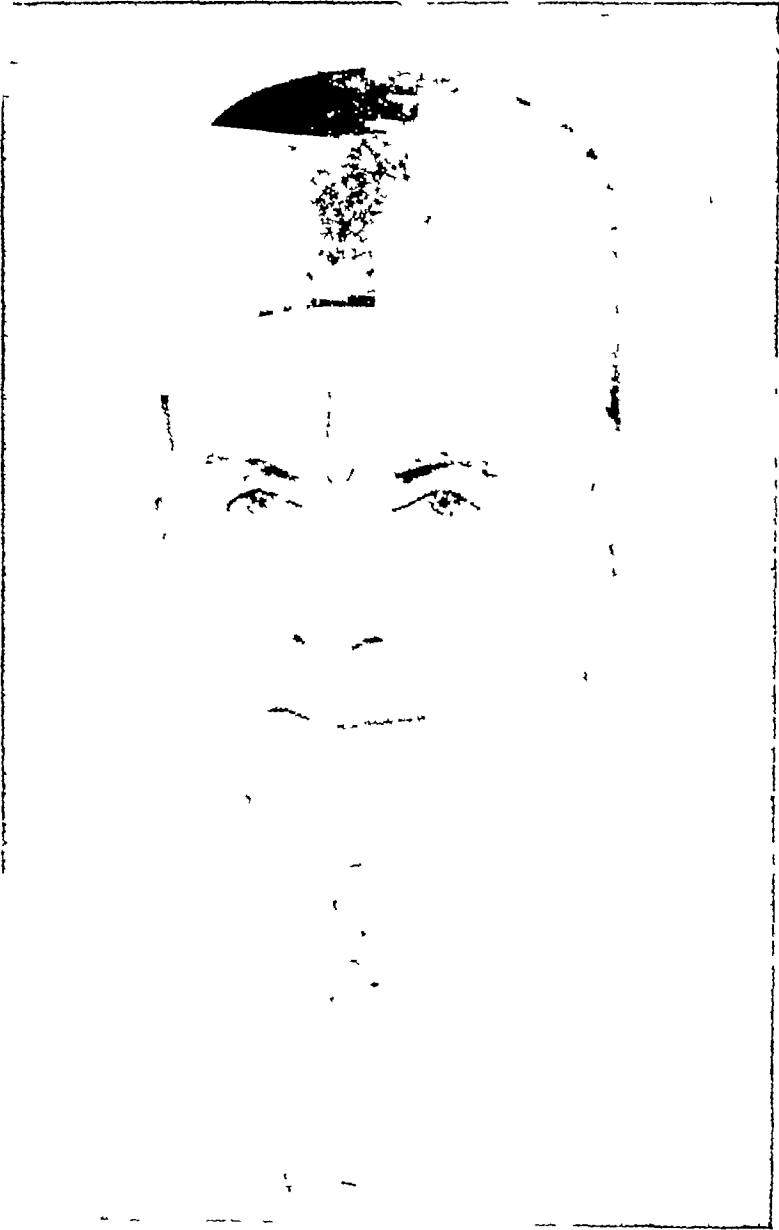
विधेय—

पो. कण्ठमणि शास्त्री 'विशारद'

संचालक

विद्या विभाग, काँकरोली (राजस्थान)





प्रस्तुत प्रकाशन में विशिष्ट अर्थ-महायक—  
प. भ. सेठ श्री सांकरलाल बालाभाई  
अहमदाबाद.





# “गोविन्दस्वामी”

( एक विश्लेषण )

[ क० गोकुलानन्द तैलङ्ग साहित्यभूषण ]

★

संस्कृति और साहित्य एक दूसरे के पूरक हैं । उनका सम्बन्ध प्राण और शरीर का है । संस्कृति परम्पराओं के मनन विश्लेषण और सन्तुलन के बाद निर्धारित एक भावना विशेष है जो किसी भी राष्ट्र, जाति वा समाज के हित-सम्पादन के लिये साहित्य में अनुगत रूप में प्रतिष्ठित होती है । साहित्य देश-काल-वातावरणों के विविध प्रभावों से संपृक्त होकर विविध रूपों में हमारे समक्ष उपस्थित होता है, किन्तु उसमें एक ही परम्परानुगत मूल भावना निर्विकल्प अक्षुण्ण रूप में अनुस्मृत होती है, जिसका हमारे रक्त से सम्बन्ध है, और जिसे हम संस्कृति कहते हैं ।

साहित्य का चरम लक्ष्य मानव की चिरन्तन कल्याण-साधना है । इसे हम पार्थिव और अपार्थिव; दो रूपों से देखते हैं । भारतीय तत्त्वचिन्तकों का दृष्टिकोण सदा से अपार्थिव वा आध्यात्मिक पक्ष की ओर अधिक उन्मुख रहा है, जब कि पाश्चात्य विचारधारा केवल पार्थिव वा आधिभौतिक स्वार्थों तक ही मर्यादित है । भौतिक भोग-लिप्साओं में ही जीवन की सार्थकता मान कर पाश्चात्य संस्कृति और साहित्य की गति जहाँ कुण्ठित होजाती है; वहाँ भारतीय साहित्यिक तत्त्ववेत्ता इस स्थूल जगत् से ऊपर उठ कर उस मूढम सच्चिदानन्द-धन-रूप मत्ता को समधिगत करने के लिये निरवधि गतिशील है, जो पूर्ण है, सनातन है. अप्रमेय और अखण्ड रसमय है !

जब-जब भौतिक जीवन की विषमताओं से जन-जीवन सन्त्रन्त हुआ है, साहित्यकार अपनी अमर साधना से मानव-मन को एक मञ्जीवन-स्रोत के मूल उद्गम में ले जाकर अनुष्ठित करता है । जीवन के संघर्ष और विडम्बनाओं में तब मानव का आकुल हृदय निवृत्ति पाता है !

## पृष्ठभूमि

विविध धार्मिक एवं भक्ति-परम्पराएँ—

भारतीय इतिहास में पन्द्रहवीं-सोलहवा और सत्रहवीं शताब्दी का समय सांस्कृतिक संघर्ष का युग रहा है। विदेशियों के अनुदिन वृद्धिगत वर्चस्व से भारतीय संस्कृति आक्रान्त हो रही थी। हिन्दुओं के राजनैतिक स्वत्वों के साथ-साथ उनकी नैतिक पवित्रता, धार्मिक और सांस्कृतिक भावनाएँ नित्य ही पद-दलित हो रही थीं। दैनिक साम्प्रदायिक संघर्षों से उनका अस्तित्व ही भयाभिभूत था। ऐसी स्थिति में नानक, कबीर, दादू आदि सन्तों ने अपने समय में निर्गुण उपासना—एकेश्वरवाद का तत्वज्ञान भारतीय जनता के समक्ष रखा। उन्होंने तत्कालीन सामाजिक, धार्मिक कुप्रथाओं तथा आडम्बरों की निर्मम आलोचना कर विभिन्न जाति और सन्प्रदायों को एकता के सूत्र में आवद्ध करने की चेष्टा की। किन्तु उनके उपदेशों से वेदान्त के शुष्क दार्शनिक गम्भीर तत्वों को हृदयङ्गम करने में सामान्य सन्त्रस्त जनता ने अपने को असमर्थ पाया। विधर्मियों के अत्याचारों से परिपीडित जनता चाहती थी—करुणा-ववलिप्त हृदय के प्रति एक सम्वेदनशील वाणी, हृदय की कोमलता—जीवन के माधुर्य की ओर प्रवृत्त करने वाली सरल उपासना।

प्रेममार्गीय निर्गुण उपासना के विधायक जायसी आदि सूफी सन्तों ने विदग्ध जनता की इस पिपासा को एक सीमा तक शान्त किया। लौकिक प्रेम द्वारा जगत् से अज्ञात् जगत् की ओर ले जाते हुए, जीवात्मा-परमात्मा का प्रेम-दिग्दर्शन कराना इनका लक्ष्य था, किन्तु सर्वत माधुर्य-भाव-प्रधान मानव-हृदय भौतिक विरक्ति और निर्गुण आध्यात्मिक अनुरक्ति के इस अटपटे ग्रन्थिवन्धन से परितुष्ट न हो सका। सन्तों की वाणी और मूर्फियों के उपदेशों में व्यक्तिगत जीवन के उत्कर्ष का माधन था—लोक सप्रही शक्ति कम !

इस सन्तवाणी की पूर्व पीटिका भारतीय भक्तिमार्ग के आचार्य निर्मित कर चुके थे। श्रीशङ्कराचार्य के अद्वैत सिद्धान्त और मायावाद के विरोध में वैष्णवों के चार प्रमुख सम्प्रदाय स्थापित हुए। श्रीविष्णु-न्यामी का सिद्धान्त, जो आगे चल कर श्रीवल्लभाचार्य द्वारा शुद्धाद्वैत रूप में परिष्कृत हुआ, श्रीरामानुजाचार्य के विशिष्टाद्वैत, श्रीनिम्बार्का-

चार्य के द्वैताद्वैत और श्रीमध्वाचार्य के द्वैतवाद की दार्शनिक धाराएँ अवतारोपासनारूप राम और कृष्ण में सगुण ब्रह्म वा विष्णु-शक्ति का आरोप लेकर मधुर भावना की प्रतिष्ठापना कर चुकी थीं। अपने-अपने समय में रामानन्द, चैतन्य, नामदेव, तुकाराम आदि सन्तों ने इस भावना को पल्लवित, पुष्पित किया।

भक्तिमार्ग के इन्हीं आचार्यों और उनके अनुगामी सगुणोपासक सन्त-परम्परा के महानुभावों ने भारतीय जनता को साहित्य और संस्कृति के विधायक मूल तत्वों का ढान दिया। इस भक्तिकाल में प्रमुखतः राम और कृष्ण में विष्णु-शक्ति के दर्शन करके मर्यादा पुरुषोत्तम और लीला पुरुषोत्तम चरितनायकों की साहित्य में प्रतिष्ठापना की गयी। इस युग में तुलसी और मूर सरीखे महानुभावों ने लोक-सग्रही शक्ति के साथ-साथ विदग्ध जनता को अपेक्षित सान्त्वना देते हुए जनता के भौतिक कल्याण एवं अध्यात्मवाद का एक सफल आदर्श उपस्थित किया।

### पुष्टिमार्ग और सेवाप्रणाली—

इन महानुभावों के काव्य की अभूतपूर्व सफलता का सारा श्रेय श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु प्रवर्तित एवं प्रमुचरण श्रीविद्वन्नाथजी द्वारा सम्बद्धित शुद्धाद्वैत सम्प्रदाय और पुष्टिमार्ग को है। महाप्रभु का प्रादुर्भाव ऐसे समय में हुआ, जब कि भारतीय संस्कृति और वैदिक धर्म विजातियों की राजनैतिक महत्वाकान्क्षाओं एवं नास्तिक भाया-वादियों के अनभीष्टित प्रचार के लक्ष्य बन रहे थे। वैभव, विलास एवं पशुवृत्तियों के उन्माद में पागल जनता अपने अध्यात्मिक स्वरूप को भूलकर भौतिक विकास की दौड़ में मानों होड़ लगा रही थी। शाङ्कर, शैव, शाक्त, सन्यासी अद्वैत सिद्धान्तानुयायियों के प्राबल्य से वैष्णव सिद्धान्त—भक्तिमार्ग पराभूत और तिरोहित सा हो रहा था। महाप्रभु ने अपने अभिनव प्रकाण्ड पाण्डित्य एवं गहन शास्त्र तत्व-ज्ञानानुशीलन के बल पर अनगणित शास्त्रार्थ-सभाओं में अपने वैदिक रहस्य-फलितार्थ रूप शुद्धाद्वैत सिद्धान्त के प्रतिपादन पूर्वक भक्तिमार्ग की प्रतिष्ठा की। समस्त वैष्णव-सम्प्रदायों को महाप्रभु की इस सार्वभौम धर्म-विजय से एक सजीवनी शक्ति मिली और भारतीय संस्कृति, भारतीय जनता विधर्मियों के प्रतिरोध में सत्तम हुई। आचार्यचरणों ने पुष्टिमार्ग की भूमिका इन सूत्रों में बँधी—

एक शास्त्रं देवकीपुत्रगीत एको देवो देवकीपुत्र एव ।  
मन्त्रोप्येकस्तस्य नामानि यानि कर्माप्येक तस्य देवस्य सेवा ॥

भक्ति, ज्ञान और कर्म के अद्भुत सामञ्जस्य का यह एक प्रतीक था। उन्होंने प्रमाणचतुष्टय के आधार पर बताया कि श्रीपुरुषोत्तम का अनुग्रह वा पोषण 'पुष्टि' है, जो साधन और फल स्वरूप है और जिसके द्वारा अहन्ता-ममता-रूप ससार से मुक्ति, भगवन्माहात्म्य का ज्ञान, भगवत्साक्षात्कार और भगवल्लीला में प्रवेश हो, वही 'पुष्टिमार्ग' है। इसी लक्ष्य से अभिप्रेरित होकर महाप्रभु ने भ्रान्त चित्त दैवी जीवों को उनके उद्धार का सरल मार्ग भगवदुपदिष्ट आत्मनिवेदन रूप ब्रह्मसम्बन्ध-दीक्षा का विधान किया। इस प्रकार अध्यासों की निवृत्ति के अनन्तर इस पुष्टिमार्ग के उपदेश से असत्य मानव-समुदाय ने सेवाधिकार एवं वैष्णवता प्राप्त की और प्रशस्त-कल्याण-साधनरूप भागवत-धर्म वा भक्तिमार्ग का अनुसरण किया। आचार्यचरणों में समस्त भारतवर्ष की अनेक बार स्वयं पृथ्वी-परिक्रमा कर भक्तिमार्ग का प्रचार किया।

कलि-कलुष-निकन्दिनी पुण्यसलिला कालिन्दी के पुनीत सान्निध्य में, सर्वस्व आराध्य श्रीकृष्ण की जन्मभूमि और हरिदासवर्य गिरिराज की मनोरम तलहटी में पुष्टिमार्ग की स्थापना हुई। महाप्रभु ने श्रीकृष्ण के मधुर वात्सल्य पूर्ण यशोदोत्संगलालित परब्रह्म रूप श्रीकृष्ण के स्वरूप की आराधना उनकी क्रीडास्थली ब्रजभूमि से आरम्भ की। भक्तों की भावना को अनुष्ठित करने के उद्देश्य से वैष्णवों के परमाराध्य श्री कृष्ण को ही सर्वोपरि मानते हुए अपने मेव्य स्वरूपों में आचार्यचरण ने श्रीनाथजी को प्रधानता दी और अनन्तर श्रीगुसाईजी ने अपने सात पुत्रों में सात स्वरूप बाँट कर सात पीठ वा सात घरों की स्थापना पूर्वक इस सेवामार्गैकप्राण साम्प्रदायिक सम्यान को विस्तृत किया।

### अष्टछाप और कीर्तन-भक्ति—

श्रीगुसाईजी ने सम्प्रदाय की सेवा-प्रणाली में मानव-जीवन के ममन्त सत्य-शिव-सुन्दर लोककल्याणकारी तत्वों एवं ललित कलाओं का सुन्दर अभिनिवेश किया। साम्प्रदायिक मधुर भावनाओं के अनुष्ण मद्गीत-साहित्य-काव्य-कला आदि ममन्त उन्कृष्ट लोकानु-

रञ्जनकारी शक्तियों के विनियोग पूर्वक सेवा-पद्धति में नवधा-भक्ति विहित कीर्तन-भक्ति को स्थान दिया गया और यहीं से भक्ति-काव्य-साहित्य के अमूल्य रत्न अष्टछाप-काव्य का सूत्रपात होता है ।

आचार्यचरणों ने सूरदासादि को अपने पुनीत चरणों में शरण देकर श्रीनाथजी की दैनिक [कीर्तन-सेवा] में नियुक्त किया । थथा समय ये ही सूरदासादि आठ परम उत्कृष्ट भक्त कवि शिष्य श्रीगुसाईजी द्वारा 'अष्टछाप' के रूप में सम्प्रदाय एवं साहित्य के लोकमन्त्र पर अनुष्ठित हुए हैं । भावात्मक लीला की दृष्टि से प्रभु के ये बाल सखा माने जाते हैं । अतएव 'अष्टसखा' के रूप से भी विख्यात हैं । श्रीनाथजी की सेवा-प्रणाली में आठों दर्शनों में पृथक्-पृथक् आठों कवियों को कीर्तनकार रूप में नियुक्त किया गया था । इन अष्टछाप के कवियों में सूरदास, परमानन्ददास, कुम्भनदास और कृष्णदास—ये चार भक्त कवि श्रीवल्लभाचार्य के तथा छीतस्वामी, गोविन्दस्वामी, चतुर्भुजदास और नन्ददास श्रीविठ्ठलनाथजी के शिष्य थे ।

इन आठों महानुभावों ने आत्मानन्द में लीन होकर जो भक्तिविधायनी सरस रचना की, वह वास्तव में साहित्य में अनूठी देन है और हिन्दी साहित्य कभी उससे उच्चरुण नहीं हो सकता । इनमें अग्रतिम काव्य-प्रतिभा, देहानुसन्धानरहित प्रेमोन्मत्तता, भाव-तल्लीनता, स्वाभाविक त्याग और निरपृहता एव श्रीनाथजी के चरणों में पूर्ण भावानुरक्ति थी । काव्य और सङ्गीत का उन्हें पारङ्गत शास्त्रीय ज्ञान था—उन्हे सानुभवता प्राप्त थी । अतएव नित्य नवीन पदों की रचना कर भगवद्भाव में विभोर रहना ही उनका एक मात्र ध्येय था । उनकी भावपूर्ण रचना, सरस पदावली गम्भीर विवेचन, स्वाभाविक वर्णन, अनूठी उत्तिर्था आदि काव्य के मनोरम गुणों की किसी भी साहित्य से तुलना नहीं की जा सकती ।

अष्टछाप का सम्पूर्ण पद-साहित्य अमर गीत-काव्य है । इसमें श्रीकृष्ण के बालजीवन की लीलाओं का मार्मिक चित्रण, मातृहृदय की वात्सल्यपूरित स्निग्धता का विकास एवं राधिका की चटुल प्रणय-बाल-केलि तथा शृङ्गार क्रीड़ा का दिग्दर्शन और उनके सर्वोपरि इस समस्त लीला-गायन में दार्शनिक विचारों का सुष्ठु सम्मिलन अष्टछाप की एक अद्वितीय सफलता है । अष्टछाप ने साहित्य

एव भक्तिजगत् में प्रेमाराधना, भावसिद्धि, रस-परिपाक और विनय-आश्रय की एक मर्यादा स्थापित की। उसकी मौलिक भावधारा ने सभी सम्प्रदाय और साहित्य के निर्माताओं को एक प्रेरणा दी और सभी परवर्ती अन्य कवियों पर इसका पूर्ण प्रभाव पडा। सभी की काव्य-सरिता उसी भाव-भूमि पर निस्तून हुई। पुष्टिमार्ग की इस भक्त-कवि-परिपाटी ने इसी पुनीत विचारधारा के साथ साहित्य में अनेक वैष्णव, रीतिकालीन एवं राष्ट्रकवियों को जन्म दिया। आज भी इन्हीं महानुभावों के पदचिह्नों पर ब्रजभाषा-काव्य उपजीवित है। हमारे चरितनायक गोविन्दस्वामी का अष्टछाप में एक विशिष्ट स्थान है।

### ऐतिह्य

अन्य महानुभावों की भाँति गोविन्दस्वामी का ऐतिह्य-चरित्र भी बहुत कम उपलब्ध होता है। उन्होंने अपने काव्य में अपने जीवन-सम्बन्ध में कहीं भी संकेत नहीं दिया है। अतः अन्तःसाक्ष्य-प्रमाण तो अनुपलब्ध ही हैं। अष्टसखान की वार्ता (स० ६), चौरासी वैष्णवों की वार्ता और उसका भावप्रकाश, सम्प्रदायकल्पद्रुम, श्रीगिरिधरलाल जी के १२० वचनमृत तथा श्रीहरिरायजी, श्रीद्वारकेश जी श्रीमदृजी महाराज आदि के स्फुट पदों के बहिःसाक्ष्य और किञ्चदन्तियों के आधार पर उनकी जीवनी के कुछ सूत्र निर्धारित किये जा सकते हैं। गोविन्दस्वामी‡ की वार्ता ही इसमें अधिकांश प्रमाण है।

### पारिवारिक परिचय—

इनके वल्लभ-सम्प्रदाय-प्रवेश का समय स० १५६२ वि० माना जाता है। † इस आधार पर वार्ता के अनुसार उनके प्रौढावस्था तक प्रहस्यजीवन, शिष्यपरम्परा, काव्य-सङ्गीत-शास्त्रादि में उनकी तलस्पर्शिता और एक उच्चकोटि के गायक कवि तथा सन्त के रूप में उनकी कीर्ति-लवणता को देखते हुए उनका जन्म संवत् उसके ३० वर्ष पूर्व अर्थात् १५६२ वि० अनुमानित होता है।

‡ संपूर्ण 'वार्ता' ग्रन्थ (पो० श्रीकण्ठमणि शास्त्री द्वारा सम्पादित)

† श्रीचिद्बलनाथजी कृत 'सम्प्रदायकल्पद्रुम'

इनके माता-पिता वा पारिवारिक जीवन के सम्बन्ध में विशेष वृत्तान्त ज्ञात नहीं हुआ है ! इतना कहा जा सकता है किये सम्प्रदाय-प्रवेश के पूर्व ग्रहस्थ थे और उनकी एक पुत्री भी थी । कान्हवाई नामक इनकी एक बहिन थी, जो श्रीगुसाईंजी की शिष्या होगयी थी और इन्हीं के साथ इनकी विरक्तावस्था में गोकुल, महावन में रहती थी ।

ये जाति के सनाढ्य ब्राह्मण ( सनोड़िया ) थे । इनका जन्म-स्थान वर्त्तमान भरतपुर राज्यान्तर्गत आंतरी ग्राम था । गृहस्थ-त्याग के अनन्तर ये ब्रज में गोकुल के समीप महावन-ग्राम में ऊँचे टीले पर रहते थे ।

इनके प्रारम्भिक जीवन और शिक्षा के सम्बन्ध में भी विशेष ज्ञात नहीं । किन्तु इतना निश्चित है कि ये साधारणतः पढ़े लिखे अवश्य होंगे और सत्सङ्ग तथा अनुभव से बहुश्रुत ज्ञान इन्हे प्राप्त था । मुख्यतः तो ये काव्य एवं सङ्गीत शास्त्र के उच्च कोटि के विद्वान् थे । गान-विद्या के आचार्य और त्यागी विद्वान् सन्त होने के नाते इनके अनेक शिष्य थे, इसीलिये ये 'स्वामी' कहलाते थे । ब्रज में रह कर ये भगवद्भजन और कीर्तन करते थे । स्वरचित पदों को ये प्रायः महावन के टीलों पर वा पृछरी के समीप न्यामडाक पर शास्त्रोक्त विधि में सन्वर गाया करते थे और सुविख्यात थे । सङ्गीत कला में ये इतने निपुण थे कि हरिदासस्वामी के शिष्य सम्राट अकबर के सुप्रसिद्ध राजगायक नवरत्न तानसेन प्रायः इनसे गाना सीखने आया करते थे और इन्हीं की प्रेरणा से तानसेन श्रीगुसाईंजी के शरणागत हुए । श्रीगुसाईंजी इनके पदों और उनके गायन की शैली पर इतने मुग्ध थे कि जो व्यक्ति इनसे पद सीख कर गोकुल जाते थे, उनके पदों को सुनकर वे बहुत प्रसन्न होते थे और उन्हें प्रसाद से सम्मानित करते थे । श्रीगोकुलनाथजी स्वयं टीले पर जाकर इनके पदों को सुना करते थे । ये ताल, स्वर, लय और छन्द की दृष्टि से शुद्ध राग के पक्षपाती थे । अशास्त्रीय ढंग से न गाना ही ये उचित समझते थे, क्योंकि इस प्रकार प्रभु नहीं रीझते, यह उनका विश्वास था ।

### सम्प्रदाय-प्रवेश—

कुछ समय गृहस्थाश्रम भोगने के अनन्तर इनके हृदय में भगवत् प्राप्ति की इच्छा जागृत हुई और विरक्त होकर इन्होंने ब्रज का आश्रय



लिया। ये ब्रज के विविध स्थलों में भ्रमण करते रहे। अपने पद, सङ्गीत के प्रभाव से श्रीगुसाईंजी से परोक्ष रूप में तो ये परिचित हो ही गये थे। एक समय वृन्दावन में श्रीगुसाईंजी के एक सेवक से इनका सत्सङ्ग हुआ। श्रीप्रभु की साक्षात् लीला के दर्शन की आतुरता इन्होंने उसके समक्ष प्रकट की, उस वैष्णव की प्रेरणा से ये गोकुल गये और श्रीगुसाईंजी के दर्शन तथा श्रीठाकुरजी के वाललीला के रसात्मक स्वरूप का साक्षात्कार इन्हें हुआ। तभी ये श्रीगुसाईंजी के शरणागत हुए। शरण आने के समय गुरु भेट रूप में इन्होंने “श्रीवल्लभनन्दन रूप अनूप” (पद सं० १००) गाकर अपनी आसक्ति प्रकट की, जिससे श्रीप्रभुचरण बहुत प्रसन्न हुए। तब से ये ‘गोविन्दस्वामी’ से ‘गोविन्ददास’ बन गये।

उनके आश्रय में ये श्रीगोकुल-महावन और अनन्तर श्रीगिरिराज की कदमखण्डी में स्थायी निवास करने लगे। यह मनोरम स्थल आज भी ‘गोविन्द स्वामी की कदमखण्डी’ के नाम से विख्यात है। स०१६०२ के लगभग जब श्रीगुसाईंजी ने अष्टछाप की स्थापना की तो उसमें गोविन्द स्वामी को भी सम्मिलित किया गया। अष्टछाप के कवियों में सूरदास और परमानन्ददास के बाद गोविन्दस्वामी ही सुप्रसिद्ध गायक थे।

पुष्टि साम्प्रदायिक भावना के अनुसार इनका लीलात्मक स्वरूप श्रीप्रभु के अन्तरङ्ग सखा, स्वामिनीजी के भ्राता श्रीदामा का है, जो दिन में उनके साथ खेलते हैं। श्रीठाकुरजी इन्हें माला रूप, अनएव परम प्रिय मानते हैं। रात्रि में ये भामा सखी रूप हैं। भगवदङ्ग स्वरूप ये नेत्र स्थानापन्न माने जाते हैं। श्रीद्वारकाधीश स्वरूप में इनकी आसक्ति है। लीलाओं में ये आँखमिचौनी तथा हिंडोरा में आसक्त रहते हैं। इनको शृङ्गारासक्ति टिपारा में है। इस प्रकार भावाविष्ट हो ये श्रीनाथजी के गुण गाते हैं तथा पुलकित हृदय और प्रेमाश्रुपूर्ण आँखों से गद्गद् होजाते हैं। उनके कीर्तन का मुख्य समय ‘बाल’ था। वैसे आठों समय में आठों सखा सम्मिलित कीर्तन यथावकाश करते थे।

\* श्रीद्वारकाधीश कृत छप्पय—“सूरदास सो कृष्ण” तथा उस पर टिप्पणी  
 † श्रीद्वारकाधीश कृत पद—“सूरदास सिर पाग विराजे” और उस पर भावार्थ  
 ‡ श्रीमद्वृजी महाराज कृत पद—“जे जन अष्टछाप गुन गावत”

गोविन्दस्वामी का देहावसान श्रीगुसाईंजी के लीला-संवरण ( सं० १६४२ वि० का० कृ० ७ ) के साथ ही हुआ † । जैसे ही श्री गुसाईंजी गोवर्धन पूजनीय शिला के द्वार से लीला में पधारे, ये भी उन्हीं के साथ सदेह लीला में लीन होगये । उनके स्मारक में अद्यावधि एक चवूतरा वहाँ बना हुआ है ।

### ग्रन्थ-रचना—

गोविन्दस्वामी ने कोई ग्रन्थ विशेष तो लिखा नहीं है । स्फुट पद-रचना की है, अतः इनका रचना-काल भी निश्चित नहीं । शरणा-गति के पूर्व से लेकर देहान्त तक यथासमय श्रीनाथजी के सेवा-कीर्तन सम्बन्ध से ये पद-रचना करते रहे होंगे । इनके २५२ पदों के संग्रह विभिन्न समय के लिपिबद्ध प्राप्त होते हैं । कीर्तन संग्रहों में स्फुट पद भी अनेक उपलब्ध होते हैं । प्रस्तुत पद-संग्रह विशाल कीर्तन-साहित्य के मथन का परिणाम है । जहाँ आज तक गोविन्दस्वामी के नाम पर केवल २५० पदों के संग्रह की प्रसिद्धि है, वहाँ आश्चर्य, साथ ही सन्तोष का विषय है कि हमारे समस्त ५७५ पदों का एक अप्रत्याशित पुष्कल सङ्कलन प्रकाशित हो रहा है ।

उनके अद्यावधि सङ्कलित पद-संग्रह का वर्ण्य विषय प्रधानत प्रभु की मङ्गला से लेकर शयन पर्यन्त की आठों सेवा ‡ के उपयोगी तत्तत् समय की लीला-भावना के अनुरूप कीर्तनों की सामग्री है । इस सम्बन्ध के कोई सवा तीन सौ पद हैं । इसमें श्रीकृष्ण का बाल सौंदर्य, राधा कृष्ण की सर्वाङ्ग रूप माधुरी, शृङ्गार, दधिमन्थन, ब्रजव सियों की दर्शनोत्कण्ठा, माता यशोदा का वात्सल्य, प्रिया प्रियतम की प्रणय कातरता, खण्डिता प्रेयसियों की उद्भावनाएँ, व्रतचर्या, दाम्पत्य रस केलि, स्वप्न-संयोग, कलेऊ, छाक, व्याल, भोजन, सखा-क्रीड़ा, मोहन-मोहिनी, निकुञ्ज की नैसर्गिक शोभा, मान, वेणुवादन, नृत्य, वनविहार, गोचारण, प्रेम की महत्ता, प्रणय-चातुरी चापल्य, गोदोहन, बाललीला, दान, उराहना आदि वर्णित किये गये हैं ।

इसके अतिरिक्त पुष्टि-सम्प्रदाय की पद्धति के अनुसार इसमें जन्माष्टमी से लेकर रक्षाबन्धन तक के समस्त वर्षोत्सवों \* में गेय पदों

† श्रीगिरिधरलालजी के वचनामृत १००

‡ विषय सूची ( ख )

• विषय सूची ( क )

के कीर्तन भी है। इस प्रकार के पद सवा दो सौ के करीब है। इनमें जन्माष्टमी, राधाष्टमी की बधाई, नन्दोत्सव, ब्रजशोभा, श्रीकृष्ण की बालकेलि, दानलीला, वामनावतार, विजय-अश्वारोहण, रासक्रीडा नृत्य गीत वादन, वैष्णवयाग, गोवर्द्धन पूजा-इन्द्रदमन भ्रातृद्वितीया, गोचारण, देव प्रबोधन, श्रीमहाप्रभुजी, श्रीगुसाईजी तथा सातो बालकों की बधाई एव उनकी स्वरूप महिमा, वसन्त श्री शोभा, दम्पति फाग क्रीडा (धमार)-माधुर्य, डोल, फूल मण्डली, रामजयन्ती चन्दन धारण, ग्रीष्म वर्णन, जलविहार, रथविजय, पावस-सौन्दर्य मल्हार, हिण्डोला भूलन, पवित्रा, रक्षा बन्धन आदि विषयों का समावेश है।

यमुना, गोवर्द्धन, वरसाना, गोकुल आदि की शोभा का वर्णन, गुरुमहिमा तथा आत्मनिवेदन, शरणागति, आश्रय और विनती के कतिपय प्रकीर्ण पद भी इस संग्रह में समधिगत होते हैं।

इस समस्त पद-रचना का आधार प्रायः वर्षोत्सवों तथा नित्यक्रम में साम्प्रदायिक सेवा पद्धति और लीला भावनादि में श्रीमद्भागवत तथा साम्प्रदायिक सिद्धान्त ग्रन्थ हैं। साहित्यिक काव्य परम्परा अष्टछाप के शिरमौलि महाभागवत सूर की भक्ति एवं रीति प्रधान उद्भावनाओं पर आधारित है। इन पदों की भाषा विशुद्ध ब्रजभाषा और छन्द मुक्तक पद है। प्रमुखतः शृङ्गार और शान्त रस से यह ग्रन्थ ओत प्रोत है। वात्सल्य, सख्य और दाम्पत्य-शृङ्गार भावना इसमें आपूरित हैं। ये पद समयानुकूल विभिन्न रागों<sup>†</sup> में गाये गये हैं। भैरवीराग का इसमें केवल एक पद है—‘उठु गोपाल प्रातकाल (पद सं० २२३) जिसके विषय में वार्ता में विशेष उल्लेख है कि गोविन्द स्वामी जिस समय भैरवी राग अलाप रहे थे एक यवन ने उनके स्वरालाप की ‘वाह वाह’ कह कर प्रशंसा कर दी। इस पर इन्होंने उसे यवन से स्पृहा मान लिया और आगे कभी भैरवीराग में कोई रचना नहीं की। इसी प्रकार एक धमार—“श्रीगोवर्द्धनराइलाला .. ” (पद सं० १२६) के विषय में भी वार्ता में चर्चा है कि गोविन्दस्वामी इस पद की तीन तुक गाकर चुप हो गये, क्योंकि “अचका अचका आइके भाजी गिरिधर गाल लगाइ” के अनुसार

† विषय सूची (ग)

‡ तालिका (१)

वमारि के भाग जाने से खेल अधूरा रह गया। मानों कवि का मन गिरिधरलाल को अरगजा कुङ्कुम लगा कर भाग जाने वाली गोपिका विशेष की लीला के साथ उलझ गया—चला गया। तब श्रीगुसाईजी ने “इहि विधि होरी खेलिके ...” तुक की पूर्ति कर धमार सम्पूर्ण की। इस प्रकार भावावेश में गोविन्दस्वामी श्रीनाथजी के समस्त अनेक राग और पदों में कीर्तन करते थे। इन्हें अनेक वाद्यों\* का भी अच्छा ज्ञान था, जिनका कीर्तनों में इन्होंने उल्लेख किया है।

### भक्ति-भावना—

गोविन्दस्वामी के सर्वस्व आराध्य श्रीकृष्ण हैं—वे पूर्ण लोला पुरुषोत्तम हैं। वे ही साक्षात् स्वरूपात्मक पुष्टिमार्ग की समस्त भगवन् मूर्तियों में विराजमान हैं। श्रीनाथजी इसी रूप में पुष्टिमार्ग के ध्येय, गेय, आराध्य रूप में उन्हीं श्रीकृष्ण के स्वरूप हैं। श्रीकृष्ण स्वयं पूर्ण परब्रह्म स्वरूप है। किन्तु नर-रूप में, यशोदोत्सङ्गलालित होकर भक्तों के कष्ट निवारणार्थ, उन्हें अपनी प्रेमलक्षणा भक्ति का अमर दान देने के लिये और गो-ब्राह्मण प्रतिपालन के लक्ष्य से इस भूतल पर अवतरित होते हैं। भक्तों की भावना के अनुसार वे विविध रूप धारण कर उन्हें अपनी अहैतुकी कृपा द्वारा परितुष्ट करते हैं। इम दृष्टि से सखा, स्वामी, बन्धु, प्रेष्ठ अनेक रूपों में उनकी आराधना की जा सकती है। पुष्टिमार्ग से में पुष्टि अनुग्रह द्वारा ही भगवत्प्राप्ति होती है। यह नवधा भक्ति में से किसी भी विधि से हो सकती है। किन्तु दास्य, कीर्तन, सख्य और आत्मनिवेदन, इन चारों प्रकारों को पुष्टिमार्ग में प्रधानता दी गयी है। यह भक्ति वात्सल्य भाव में अधिष्ठित है। हमारे चरित नायक भी सख्य भक्ति के उपासक हैं। वे प्रभु श्रीनाथजी के सखा हैं, सहचर हैं—प्राकृत बालक की भाँति वे उनके साथ खेलते हैं।

### सम्प्रदायिक सिद्धान्त—

पुष्टिमार्ग का दार्शनिक पक्ष उसका शुद्धाद्वैतवाद है। उसके अनुसार अखण्ड विश्व ब्रह्माण्ड में जीव की स्थिति अणुवत् है। वह उसी अणु अणु व्यापी सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म का अंश है। इन जगत की सृष्टि विविध शक्तियों के द्वारा सच्चिदानन्द विशुद्ध ब्रह्म से

के कीर्तन भी है। इस प्रकार के पद सवा दो सौ के करीब हैं। इनमें जन्माष्टमी, राधाष्टमी की बधाई, नन्दोत्सव, ब्रजशोभा, श्रीकृष्ण की वालकेलि, दानलीला, वामनावतार, विजय-अश्वारोहण, रासक्रीडा नृत्य गीत वादन, वैष्णवग्राग, गोवर्द्धन पूजा-इन्द्रदमन भ्रातृद्वितीया, गोचारण, देव प्रबोधन, श्रीमहाप्रभुजी, श्रीगुसाईजी तथा सातो वालकों की बधाई एवं उनकी स्वरूप महिमा, वसन्त श्री शोभा, दम्पति फाग क्रीडा (धमार)-माधुर्य, डोल, फूल मण्डली, रामजयन्ती चन्दन धारण, ग्रीष्म वर्णन, जलविहार, रथविजय, पावस-सौन्दर्य मल्हार, हिएडोला भूतन, पवित्रा, रक्षा बन्धन आदि विषयों का समावेश है।

यमुना, गोवर्द्धन, वरसाना, गोकुल आदि की शोभा का वर्णन, गुरुमहिमा तथा आत्मनिवेदन, शरणागति, आश्रय और विनती के कतिपय प्रकीर्ण पद भी इस सग्रह में समधिगत होते हैं।

इस समस्त पद-रचना का आधार प्रायः वर्षोत्सवों तथा नित्यक्रम में साम्प्रदायिक सेवा पद्धति और लीला भावनादि में श्रीमद्भागवत तथा साम्प्रदायिक सिद्धान्त ग्रन्थ हैं। साहित्यिक काव्य परम्परा अष्टद्वाप के शिरमौलि महाभागवत सूर की भक्ति एवं रीति प्रधान उद्गावनाओं पर आधारित है। इन पदों की भाषा विशुद्ध ब्रजभाषा और छन्द मुक्तक पद हैं। प्रमुखतः शृङ्गार और शान्त रस से यह ग्रन्थ ओत प्रोत है। वात्सल्य, सख्य और दाम्पत्य-शृङ्गार भावना इसमें आपूरित हैं। ये पद समयानुकूल विभिन्न रागों में गाये गये हैं। भैरवीराग का इसमें केवल एक पद है—‘उठु गोपाल प्रातकाल

( पद स० २२३ ) जिसके विषय में वार्ता में विशेष उल्लेख है कि गोविन्द स्वामी जिस समय भैरवी राग अलाप रहे थे एक यवन ने उनके स्वरालाप की ‘वाह वाह’ कह कर प्रशंसा कर दी। इस पर इन्होंने उसे यवन से स्पृहा मान लिया और आगे कभी भैरवीराग में कोई रचना नहीं की। इसी प्रकार एक धमार—“श्रीगोवर्द्धनराइलाला .. ” ( पद स० १२६ ) के विषय में भी वार्ता में चर्चा है कि गोविन्दस्वामी इस पद की तीन तुक गाकर चुप हो गये, क्योंकि “अचका अचका आडके भाजी गिरिधर गाल लगाड’ के अनुमार

‡ विषय सूची ( ग )

‡ तालिका ( १ )

धमारि के भाग जाने से खेत अधूरा रह गया। मानो कवि का मन गिरिधरलाल को अरगजा कुङ्कुम लगा कर भाग जाने वाली गोपिका विशेष की लीला के साथ उलझ गया—चला गया। तब श्रीगुमाईजी ने “इहि विधि होरी खेलिके ...” तुक की पूर्ति कर धमार सम्पूर्ण की। इस प्रकार भावावेश में गोविन्दस्वामी श्रीनाथजी के समस्त अनेक राग और पदों में कीर्तन करते थे। इन्हें अनेक वाद्यों\* का भी अच्छा ज्ञान था, जिनका कीर्तनों में इन्होंने उल्लेख किया है।

### भक्ति-भावना—

गोविन्दस्वामी के सर्वस्व आराध्य श्रीकृष्ण हैं—वे पूर्ण लोला पुरुषोत्तम हैं। वे ही साक्षात् स्वरूपात्मक पुष्टिमार्ग की समस्त भगवन मूर्तियों में विराजमान हैं। श्रीनाथजी इसी रूप में पुष्टिमार्ग के ध्येय, गेय, आराध्य रूप में उन्हीं श्रीकृष्ण के स्वरूप हैं। श्रीकृष्ण स्वयं पूर्ण परब्रह्म स्वरूप है। किन्तु नर-रूप में, यशोदोत्सङ्गलालित होकर भक्तों के कष्ट निवारणार्थ, उन्हें अपनी प्रेमलक्षणा भक्ति का अमर दान देने के लिये और गो-ब्राह्मण प्रतिपालन के लक्ष्य से इस भूतल पर अवतरित होते हैं। भक्तों की भावना के अनुसार वे विविध रूप धारण कर उन्हें अपनी अहैतुकी कृपा द्वारा परितुष्ट करते हैं। इस दृष्टि से सखा, स्वामी, बन्धु, प्रेष्ठ अनेक रूपों में उनकी आराधना की जा सकती है। पुष्टिमार्गसे में पुष्टि अनुग्रह द्वारा ही भगवत्प्राप्ति होती है। यह नवधा भक्ति में से किसी भी विधि से हो सकती है। किन्तु दास्य, कीर्तन, सख्य और आत्मनिवेदन, इन चारों प्रकारों को पुष्टिमार्ग में प्रधानता दी गयी है। यह भक्ति वात्सल्य भाव में अधिष्ठित है। हमारे चरित नायक भी सख्य भक्ति के उपासक है। वे प्रभु श्रीनाथजी के सखा हैं, सहचर हैं—प्राकृत बालक की भाँति वे उनके साथ खेलते हैं।

### सम्प्रदायिक सिद्धान्त—

पुष्टिमार्ग का दार्शनिक पक्ष उसका शुद्धाद्वैतवाद है। उसके अनुसार अखण्ड विश्व ब्रह्माण्ड में जीव की स्थिति अणुवत् है। वह उसी अणु अणु व्यापी सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म का अंश है। इस जगत् की सृष्टि विविध शक्तियों के द्वारा सच्चिदानन्द विशुद्ध ब्रह्म से

\* तालिका ( = )

हुई है। अतएव जगन् भी सच्चिदानन्द स्वरूप ब्रह्म का एक कौतुक विलास रूप क्रीडाभाण्ड है और यहाँ पर रह कर भी भगवल्लीला की प्राप्ति की जा सकती है। कार्यरूप में दृश्यमा जीवजगत् तत्त्व कारण रूप से अभिन्न है। हमारे आराध्य श्रीकृष्ण पूर्ण निराकार निर्गुण विरुद्धधर्माश्रय स्वरूप परब्रह्म होकर भी भक्तों की भावना के फल रूप सगुण साकार होकर यशोदा के आँगन में बालक बन कर क्रीडा करते हैं। वे ब्रज-भक्तों के तापनाश के लिये अर्थात् माया आवरण द्वारा उस परब्रह्म से वियुक्त अज्ञानतिभिरावृत जीव के गेहिक पापों और अधकार के शमन के लिये शीतल सुधांशुरूप में घोषमण्डल में उदित होते हैं। कवि के ही रूपकमय शब्दों में इस तत्व को समझिये—

जसुमति उदर उदधि आनन्द कर वल्लभकुल कमल विकासी हो ।

रूप किरनि वरसत निसि वासर ब्रज जन के नैन चकोर हुलासी हो ॥  
राका राधापति परिपूरन पोढस कला गुन रासी हो ।

बालक वृन्द नद्यन्न मानों वृदावन व्योम विलासी हो ॥  
द्विवम विरह रति ताप नसावत पीवत नैन सुधा सी हो ।

हरत तिमिर सब घोषमण्डल कौ 'गोविन्द' हृद्वै जोन्ह प्रकासी हो ॥  
( पद स० ३ )

**भक्ति की श्रेष्ठता—**

प्रसुप्राप्ति के लिये ज्ञान, कर्म और भक्ति तीनों ही साधन माने गये हैं। किन्तु अनेक भक्त महानुभावों की तरह गोविन्द स्वामी भी ज्ञान और कर्म को भक्ति के समक्ष गौण मानते हैं, साथ ही दुष्कर भी। रूप, गुण, शील, ज्ञान, सत्कुल, शास्त्रज्ञान आदि भक्ति के पूरक वा हृदय की शुद्धता में सहायक साधन अवश्य हो सकते हैं, साध्य नहीं। उनके प्रियतम तो प्रेम से ही प्राप्त हो सकते हैं—

प्रीतम प्रीत ही ते पैंये ।

जदपि रूप गुन सील सुवरता इन वातनि न रिक्कैंये ।

सत कुल जनम करम सुम लच्छन वेद पुरान पठैंये ।

'गोविन्द' प्रभु विन स्नेह सुवा लों रसना कहा नचैंये ॥

( पद स० ३४३ )

यह प्रेम भी अनन्य होना चाहिये । एक मात्र अपने आराध्य में ही निष्ठा—उसी को सर्वस्व मानना, उसी की उपलब्धि का लक्ष्य रखना, अन्य शक्ति साधनों का तदंगत्वेन उपयोग करते हुए उन्हें ही सब कुछ न समझ लेना अनन्यता है । इष्टप्राप्ति के लिये सभी बाधक तत्वों को छोड़ा जा सकता है । किन्तु वह इष्ट भी किसी माध्यम से समधिगत होगा और वह है गुरु । गुरु और गोविंद में अभेद माना गया है अर्थात् उनमें कोई अन्तर वा तारतम्य नहीं । गुरु-कृपा से ही, उनकी शरणागति और आत्मनिवेदन वा ब्रह्मसम्बन्ध से ही-अहन्ता-ममतात्मक सम्बन्धों की निवृत्ति से ही भगवद्भक्ति-पुष्टि मिलेगी । साधक तत्वों को लेकर कवि ने अपनी यह गुरु-निष्ठा इस प्रकार प्रकट की है—

गुरुनिष्ठा-आश्रय-अनन्यता—

मेरे विट्ठल से प्रभु समान, और न दूजो कोई ।  
हरि बदनानल श्रीवल्लभ, सुत स्वरूप सोई ॥  
मात तात आत ग्रहनि, ग्रह सर्वे बिसराऊँ ।  
श्रीविट्ठलेस करुना तें, पुष्टिभक्ति पाऊँ ॥  
द्विजवर वपु धरि अवनीतल, पवित्र कीनो ।  
कहत 'गोविंद' सरनागत कों, अभयदान दीनो ॥

( पद स० ६६ )

पुष्टिमार्ग के इन अनमोल तत्वों को कवि ने अपने काव्य में जहाँ-तहाँ लीला-गायन के रूप में झलकाया है । दान, मान, खण्डिता आदि की शृंगारिक उद्भावनाओं का वास्तविक लक्ष्य अपने प्रियतम की समुपलब्धि ही है । किन्तु प्रिय में इस एकात्मभाव-भावनाओं के द्वारा तादात्म्य की एकतान स्थिति, विना किसी अधिष्ठान-आधार के नहीं हो सकती । इसीलिए पुष्टिमार्ग में सिद्धान्त वा भावनाओं को व्यावहारिक रूप देने के लिये सेवा-पद्धति का प्रचलन हुआ है । मगला, शृंगार, ग्वाल, राजभोग, उत्थापन, भोग, सन्ध्या, शयन—जो आठ सेवा-समय हैं, इनमें भक्त अपनी दैनिक क्रियाओं को—विविध ऋतु काल के उन्सवानन्दों को प्रभु सेवा में सन्नियोजित, चरितार्थ पाता है और भावना, वाणी तथा क्रिया की समस्त प्रवृत्तियाँ प्रभु में समर्पित होकर हमारे हृदय में एक निम्सीम आनन्द की सृष्टि



करती हैं। हम सेवानुरक्त हो प्रभु में तन्मय, तद्रूप हो जाते हैं। जीवन का परम लक्ष्य भी तो यही आत्म-विस्मृति है।

इस प्रकार ब्रजभक्तों की भावना के अनुसार गोविन्दस्वामी ब्रजाधिपति कृष्ण, यमुना, गिरिराज, गौ वेणुध्वनि, वृन्दावन निकुंज, विहग, नन्दबाबा, यशोदा इन सबके आश्रय को छोड़ कर वैकुण्ठ भी जाना नहीं चाहते। ब्रजलीलाओं को प्रभु-सेवा में अनुभव करके वे उन्हीं का आश्रय जीवन के लिये सर्वस्व मानते हैं। उन्हीं के शब्दों में—

ब्रज की विभूतियाँ—

कहा करों वैकुण्ठे जाइ ।

जहाँ नहीं बसीवट जमुना गिरि गोवर्द्धन नंद की गाइ ॥

जहाँ नहीं ए कुंजलता द्रुम मट सुगध बाजत नहीं वाइ ।

कोकिल मोरहस नहीं कूजत ताकौ बसिवो काहि सुहाइ ॥

जहाँ नहीं बसी धुनि बाजत कृष्ण न पुरवत अधर लगाइ ।

प्रेम पुलक रोमाचय उपजत मन क्रम बच आवत नहीं दाइ ॥

जहाँ नहीं ए भुव वृदावन बाबा नंद जसोमति माइ ।

‘गोविंद’ प्रभु तजि नट सुवन कौं ब्रज तजि वहा बसति वलाइ ॥

( पद स० १०४ )

ये सब उद्भावनाएँ उनके अनन्य भावुक हृदय की परिचायक हैं। इनकी भक्ति का प्रतिफलित रूप ही उनका काव्य है, उनका सगीत और ललित कला।

कलाद्वय—शौन्दर्य

बाह्य और आन्तरिक रूप की तरह काव्य के भी दो रूप होते हैं—कलापन्न और भावपन्न। इनका शरीर और आत्मा का सद्बन्ध है—ये अन्योन्याश्रित हैं। वाणी और अर्थ के रूप में पूर्णाभिव्यक्ति के साथ ये उत्तम काव्य की सृष्टि करते हैं। इस दृष्टि में गोविन्दस्वामी की काव्यगत विशेषताएँ क्या हैं, हम पर हम यहाँ प्रकाश डाल रहे हैं।

## वर्ण्य विषय—

जैसा कि निर्दिष्ट किया जा चुका है, गोविंदस्वामी के पदों का वर्ण्य विषय मुख्त. प्रभु की आठों समय की सेवा और वर्षोत्सव है, जिन्हें उन्होंने भावात्मक रूप से चित्रित किया है। इनके अनेक पदों की कल्पनाएँ अपने सहयोगी अष्टछाप के सूर, परमानन्दादि की कल्पना और अभिव्यक्ति से प्रभावित हैं। कवि स्वयं भावविभोर होकर लीलाओं का प्रत्यक्ष अनुभव करता है और उसी अनुभूति को काव्य परिधान में सुसज्जित कर प्रभु के समक्ष गान करता है। अतएव उसकी उद्भावनाएँ मौलिक हैं, तथापि इनके पदों की कथा तथा लीला-भाग श्रीमद्भागवत पर आधारित है। कोई कोई स्थल तो उसके अविकल अनुवाद हैं। देखिये—

अहो पिय कैसेक धरत मृदुल चरन धरनि ।

गारि की काकरी अति कठिन नृन अंकुर रसना धर जियहि—

सुधि सुधि करि छृतियों जरनि ॥

सरसि सुजात गरभ की श्रिय सुपति हमारे कठिन उर—

सहसा ही न धरि सकें उरनि ॥ × ×\*

( पद सं० ३५७ )

×

×

×

वैनु बाजत री मोहन कल ।

वाम कपोल वाम भुज पर धरि बलगत भ्रुव रस चपल द्रगचल ॥

सिंदूरारुण अधरसुधा रस पूरत रध्र मृदुल अगुली दल । × × × †

( पद सं० ४२० )

मोहत व्योम विमान वनिता खसित नीवी सुष्यो न अञ्जल । × × × †

( पद सं० ४२१ )

×

×

×

\* शरदुदाशये साधुजातसत्सरजिोदर श्रीमुपाट्टशा, ।

यत्ते सुजात चरणाम्बुरहं स्तनेषु भीत शनैः प्रिय दधीमहि कर्कशेषु ।

( श्रीमद्भागवत द० पू० अ० ३० )

×

×

×

† वाम बाहुकृत वाम कपोलो बलगतभ्रुरधरापित वेणुम् ।

कोमलागुलिभिराश्रित वर्णं गोप्य ईरयति यत्र मुकुन्द ॥

व्योमयान वनिता. सहसिद्धैर्विस्तितास्तदुपधार्य संसजा ।

कम मार्गण समर्पण चित्ता करमल ययुरपस्मृत नीव्य ॥

( श्रीमद्भागवत द० पू० अ० ३५ )

धनि धनि वृ दारण्य कुरगिनि ।

श्रीमुख कमल पीवति मखी सादर कृष्णसार पति संगिनि ।

चरन कमल कुंकुम रूपित नृन कुच श्रवलेप करति—

तजति आधिमनसिज पुलंदिनि ।

‘गोविद’ प्रभु को जु अमृत नाद सुनि थकित प्रवाह तरङ्गिनि ॥१॥

( पद सं० १२० )

भाषा (शब्द समूह और लोकोक्तियाँ) —

गोविन्दस्वामी ने अपनी पद-रचना अष्टछाप के अन्य कवियों की भाँति नवनवोन्मेषशालिनी भाव-धारा के साथ ब्रजभाषा में ही की है। अपने साधना क्षेत्र, साध्यविषय, उपासना-प्रतीक और रस-निरूपण की दृष्टि से ब्रजभाषा ही उस समय की व्यापक लोक भाषा और काव्य-भाषा थी। उनके आराध्य की बालकेलि का चित्रण, उनके बाल-कुनूहल का निदर्शन, मातृ-हृदय के वात्सल्य का निर्वचन उन्हीं की तुलती मातृभाषा—ब्रजभाषा में सफलता पूर्वक किया जा सकता था। भाषा-विज्ञान की दृष्टि से भी इसमें सहज माधुर्य है और हृदय की कोमलतम वृत्तियों, सूक्ष्मतम भावनाओं और सरलतम उद्गारों की तरलतम अभिव्यञ्जना के लिये यही समर्थ भाषा है। कवि ने ब्रजभाषा के अनेक ठेठ शब्दों का प्रयोग किया है, इससे पदलालित्य और शब्द सौन्दर्य अल्लुण्ण रहा है। कहीं कहीं इनकी

† धन्यास्म मूढ मनयोऽपि हरिण्य पृता या नदनदनमुपात्रविचित्रवेपम् ।

आकर्ण्य वेणुरणितसह कृष्णसारा. पूजां दधुर्विरचितां प्रणयावलोके ॥

पूर्णं पुलिंद उरुणाय पदाब्जराग श्रीकु कुमेन दयितास्तनमण्डितेन ।

तदर्शन स्मररजस्तृण रूपितेन लिम्पन्त्य आनन कुचेपुजहुस्तदाधिम् ॥

( श्रीमद्भागवत द० पू० अ० ३२ )

‡ नालिका ( ३ )

भाषा में उर्दू, वुन्देलखण्डी, पूर्वी और अवधी के शब्दों का भी सुन्दर प्रयोग हुआ कुछ पद संस्कृत भाषा के भी अच्छे वन पड़े हैं। देखिये—

प्रणमामि श्रीमद्विद्वलम् ।

वेद धर्म प्रमाण कारण जीव मात्रग सुखरुम् (संस्कृत) × × (पद सं० १६)

× × ×

× × × यह हवाल 'गोविंद' प्रभु तेरे । ( उर्दू ) ( पद सं० ३०२ )

× × × अब कैसे जैत्रो मेरी माई । × × × (अवधी) (पद सं. ४१४)

× × ×

× × × ताकों रानी तुम हटको । × × × (वुंदेलखण्डी) (पद सं० ५४७)

× × ×

× × × सुरभी हूँक बछरुवा भागे । ( पूर्वी ) ( पद सं० २२४ )

इसके अतिरिक्त सेत्रा, शृङ्गार, उत्सव तथा ब्रज-परम्पराओं के पारिभाषिक विशेष शब्दों का भी यत्र तत्र उन्होंने प्रयोग किया है।

इनके काव्य में लोकोक्तियों और मुहावरों का भी यथा स्थान यथेष्ट प्रयोग हुआ है, जिससे भाषा में सजीवता, लाजित्य और सुव्यवस्था आ गयी है। भाषा का लालित्य देखिये—

× × × ललित गति विलास हास दपति मन अति हुलास

विगलित कच सुमन वास—स्फुटित कुसुम निकर

तैसीये सरद रेंनि जुन्हाई ।

नवनिकुञ्ज मधुर गुञ्ज कोकिल कल कृजत पुञ्ज

सीतल सुगंध मद मद पवन अति सुहाई ॥ × × ॥ (पद सं० ३०८)

**अलङ्कार—**

श्रोता अथवा पाठक के मन पर प्रस्तुत के रूप, गुण, क्रिया सम्बन्धी पड़े हुए प्रभाव में तीव्रता लाने के लिये काव्य में जिन चमत्कार पूर्ण शब्द वा अर्थ रूप उक्तियों का समावेश होता है, उन्हें अलङ्कार कहते हैं। अलङ्कार भावोत्कर्ष में सहायक होने के साथ साथ काव्य का वाह्य शृङ्गार करते हैं। गोविन्दस्वामी ने अष्टछाप की शैली पर प्राय सभी सुप्रसिद्ध अलङ्कारों को काव्य में प्रभावोत्पादक रूप में स्थान दिया है। अनुप्रास, उपमा, रूपक, उन्नेत्ता, स्वभावोक्ति आदि तो सम्पूर्ण काव्य में ओतप्रोत हैं। कहीं कहीं तो सर्वथा मौलिक

बद्धावनाएँ देकर कवि ने अपना स्वतन्त्र व्यक्तित्व स्थापित किया है ।  
कुछ प्रमुख अलङ्कारों का उदाहरण लीजिये--

× × × 'गोविंद' बलि सखी कहैं तुव पटतर कों नाँव त्रिनेत्र जुवनी  
सों वन करि सकैं तो सों दोति ॥

[ अन्नव्यय ] ( पद सं० ४६८ )

× × × चंद देखे आनंद में ही तुव मुख की उनहार री प्यारी ।  
इह छवि वाहि न पूजती कलक विदार री प्यारी ॥ × × ×

[ व्यतिरेक ] ( पद सं० १३४ )

× × × मुरली रटनि गम कौ रटनि मटकनि कटक मुकुट  
चटक पिय प्यारी लटक लपटि उरसि राजे ॥ × × ×

[ अनुप्रास ] ( पद सं० ६२ )

रास-नृत्य में मृदंग-वाद्यों के बोलों के अनुरूप शब्दों में  
अनुप्रास-योजना यहाँ कितनी सुन्दर हुई है ।

× × × राका निसि सरद चंद प्रगट अँग अँग अनग  
रह्यो रास रंग सरस तट कलिदिनी । × × ×

[ विरोधाभास ] ( पद सं० १५ )

शरदोज्ज्वल पूर्णिमा में राधिका के रास-नृत्य-निरत रूप  
माधुर्य को देख कर मालुम होता है कि आज काम अनङ्ग होते हुए भी  
मूर्तिमन्त होकर उपस्थित है ।

× × ×  
स्यामरूप चरि आई जब तैं हरिआई अँखियाँ भई री मेरी ।  
गुरुजन लाज सकुच करी वधन बहु भौंति जतन करि जेरी ॥  
परीगईतुराइ अगाध अगम की नैकन कहुँ अब इत उत हेरी ।  
गीधी प्रेम मुदित हरि 'गोविंद' घुँघट ग्वालि विरत नहि घेरी ॥

[ रूपक ] ( पद सं० ४२६ )

नेत्र वा मन को मयूर, चातक, चवोर, हरिण, मीन, कमल  
आदि की उपमाएँ पारम्परिक रूप में सभी कवियों ने दी हैं और  
उनके काव्य में भी रूपक तो असंख्य भरे पड़े हैं, किन्तु ब्रजस्थली की



× × × पट्पद की इह चाल । सु० । अलि कुसुम लपटानि ॥ कहीं० ॥  
 पहले मन पाछे सर्वसु । सु० । ए दीऊ लग समान ॥ कहीं० ॥  
 [ तुल्ययोगिता ] ( पद स० १३० )

तुल्य पदार्थ भ्रमर और प्रेमी का आत्मसमर्पण एक धर्म है । वे पुष्प वा प्रेमी से आर्त्तिगित होकर पहिले अपने हृदय सौंपते हैं और फिर सर्वस्व प्राण । इन क्रियाओं का उस आत्मसमर्पण धर्म मे योग होता है । इस बात को प्रस्तुत उदाहरण में समझाया गया है ।

× × ×

× × × चन्द्रबधू चटकत चपला चपला बनी ।

कारी घटा घुमडे गगन आभा बनी ॥ × × ×

[ यमक ]

( पद स० १६६ )

वहाँ 'चपला' शब्द का 'चञ्चल' और 'विजली' इन भिन्न-भिन्न अर्थों में एकाधिक बार प्रयोग हुआ है ।

× × ×

× × × अलक सवारन के मिस भामिनि फेरति पिय तन नैन निहारी । × × ×

[ स्वभावोक्ति ]

( पद स० ३५१ )

एक मानिनी, जिसके हृदय में प्रिय के दर्शन, मिलन की तीव्र उत्कण्ठा है, कृत्रिम मान से अपने को विरक्त सी बताती है, किन्तु उसकी स्वाभाविक अनुरागपूर्ण चेष्टा अलक सवारने के बहाने छिप नहीं सकी ।

× × ×

× × × सुनत न सुनति देखत हू न देखति

कछु की कछु कहति फिरति चालि चली । × × ×

[ विशेषोक्ति ]

( पद स० ४२६ )

सुनती हुई भी अनसुनी सी और देखती हुई भी अनदेखी सी कर रही है । कारण के होते हुए भी कार्य नहीं हो रहा है ।

× × ×

× × × ए ही गुनगान रसखान रसना एक सहस्र रसना क्यों न दई विधाता । ×

[ अतिशयोक्ति ]

( पद स० ५५० )

वृ चलि सखी री सिंगार हार सजि सेवती किन पिय प्यारी ।

माधुरी माधुरी बोलसरी परी गुलाव कुह्हे मनुहारी ॥

इह सुभाव न जाइ बरजी जुही केतकी ले समझाइ मान निवारी ।

मेरो जो मिखडी जो न मिले री 'गोविंद'प्रभु हौं तो पर—

केवरो नवल कुवर बिच चपो बिहारी ॥

[ श्लेष ]

( पद सं० ४७७ )

अनेक फूलों के नाम से सम्पूर्ण पद में मान-सम्बन्धी मिलन का श्लेषमय वार्तालाप है ।

छन्द—

गोविन्दस्वामी की पद-रचना गीति-काव्य में है । उसके आत्माभिव्यक्ति, सक्षिप्तता, भावों की एकरूपता और सर्गात् ये चार तत्व माने गये हैं । इनके पदों में ये सभी बातें हैं । कहीं-कहीं भावावेश वा लीलानुभव में ये लम्बे-लम्बे पद लिख गये हैं, अतः अनेक स्थलों पर शैथिल्य आ गया है, तथापि उनके भावोत्कर्ष में त्रुटि नहीं है । अष्टछाप के सभी महानुभाव उत्कृष्ट कीर्तनकार हुए हैं । उनका सम्पूर्ण साहित्य स्वतन्त्र पदों के रूप में है । अतः मुक्तक काव्य के रूप में प्रत्येक पद स्वतन्त्र भावव्यञ्जना लेकर पूर्वापर सम्बन्ध से मुक्त होते हुए भी एक ही भाव और रस के सूत्र में मोतियों की भाँति पिरोया हुआ है ।

गुण—

गोविन्दस्वामी ने अपनी काव्य-रचना प्रायः शृङ्गार, करुण तथा शान्त रसों में भक्ति और वात्सल्य की मञ्जुल भावनाओं की पुट के साथ की है । अतएव उसमें प्रसाद एव माधुर्य गुणों का निर्वाह बहुत सुन्दर हुआ है । ओजगुण तो इन रसों के उपयुक्त नहीं माना गया है । देखिये—

× × × ककन किंकिनि नूपुर धुनि विरमि धिरमि उपजत भूतकार ।

सम कन बदन मदन रस लपट राधा रमिकिनी नदकुमार ॥ × × ×

[ माधुर्य ]

( पद सं० १२३ )

×

×

×

× × × हार भार कुच चारु चपल द्रग सहज चलत अनुहारी ।

मनहुँ चारु खजन खेलत वारिज उडुराज मँकारी ॥ × × ×

[ प्रसाद ]

( पद सं० १४३ )



× × × रसन दसन धरिके रहसि उरसि लपटावें । × × ×  
( पद स० १८ )

× × ×

रीतिशास्त्र में अगणित नायिकाओं के स्वरूप और लक्षणों के उल्लेख हैं। किन्तु गोविंदस्वामी ने तो श्रीराधा-कृष्ण की रस-कैलि के प्रसङ्ग से ही कुछ चित्र उपस्थित किये हैं, जिनका नायिका-भेद में समावेश किया जा सकता है। देखिये—

दिन दिन होत कसुकी गाढी ।

मजल स्याम बन रति रस घरसत जोवन सरिता वाढा ॥

अति भय भीत उरोज भुजन पर मोहन मूरति चाढी ।

‘गोविंद’ प्रभु मिलिबे के कारन निकसि करारे ढाढी ॥

[ सुग्धा ] ( पद स० ४०५ )

लहेरिया मेरो भीजेगो वह देखो आवत है मेहु ।

सुरंग रंग रँग्यो सावरो अब ही धरेगो नेहु ॥

सघन कुज में चलो साँवरे ओट पीताबर देहु ।

‘गोविंद’ प्रभु पिय हँसि कहें तो बहिहै अधिक सनेहु ॥

[ वचनविदग्धा ] ( पद स० १८५ )

× × ×

सुरंग रँग रँगो स्यामल मंघ और श्यामसुन्दर का साम्य दिखा-  
कर सघन कुञ्ज की ओट पीताम्बर की ओट देकर चलने की कितनी  
सुन्दर रस-चातुरी है ।

पात समै स्यामा दर्पन लै अरस परस मुख कमल निहारत ।

रजनी जनित रग सुख सूचित निरखि निरखि उर नेन सिरावत ॥

सिथिल सिंगार विचित्र बनावत ठौर-ठौर रति चिह्न दुरावत ।

‘गोविंद’ सखी देखि दपति सुख तन मन धन या छवि पर बारत ॥

[ सुरत गोपना ] × × ( पद स० २४१ )

लालन जहीं जाऊ जाके रस लपट अति ।

आलस नेन देखियत रसमसे प्रगट करत प्यारी के रति ॥

अधर दसन छत बसन पीक सह प्ररु कपोल स्रमब्धिदु देखियति ।

नख लोखन तन लखी स्याम पर जय पताक जीत्यो रतिपति ॥

कितव विवाद तजहु पिय हम सों जैसें तन स्याम तैसे ई मन हो अति ।

‘गोविंद’ प्रभु पिय पाग सँवारहु गिरत कुसुम सिर मालति ॥

[ खण्डिता ] ( पद स० २४५ )

×

×

×

हरि सों कैसो मान छुबीली ।

न'दकुँवार रसीलो नाइक छाडि देहु अरखीली ॥

इह जोवन धन दिवस चारि कौ काहे कौ वृथा करत हो नबीली ।

मिलि हो जाय स केत सदन में स्यामसिधु में भीली ॥

उह प्रजराज किसोर रसीलो तू वृषभानुकिमोर रसीली ।

'गोविंद' प्रभु पिय आइ गये तब सरवसु दे विलसी री ॥

[ मानवती ]

( पद सं० ४८६ )

×

×

×

गुजरिया ! गरब गहीली कतरु नाहीं देत—

चलति गजगति गोरस की माती अति रगभरियां ॥

दिन दिन दान मारि गई छु हमारो तब कबहुँ पाले नहिं परियां ।

'गोविंद' प्रभु कहेँ सखनि सों घेरो-घेरो तब धाई अचलु धरिया ॥

[ दान-रूपगर्विता ]

( पद सं० २६ )

×

×

×

गुरु महिमा और अनन्य आश्रय के रूप में वैराग्य और निर्वेद

के भाव भी देखिये—

रे मन भज श्रीचिह्नलनाये ।

औरे कुपथ देखि जिन भूले करत सुजनम अकाथे ॥

जो भव सागर तरिबो चाहे धरि प्रभु कर माथे ।

गिरिधर 'गोविंद' के प्रभु कौं गावें गुन गुन गाथे ॥

[ शान्त रस ]

( पद सं० १७० )

×

×

×

कहो धों मेरे वारे हो लाल गोवर्द्धन कैसे क उठाइ कर लीनों ।

एकेई हाथ अवेले से ठाढ़े नेकु बलदाऊ न दीनों ॥

सुंदर कर चापति चूमति हृदं लावति अँचरा प्रेम जल भीनों ।

'गोविंद' प्रभु सपूत लरिकाई तें सबै धज जन मन सुख दीनों ॥

[ वात्सल्य ]

( पद सं० ७७ )

×

×

×

## ध्वनि बोधकता—

भाषा और भाव—शब्द और अर्थ की एकरूपता की भी इनके काव्य में सुन्दर छटा है। ध्वनिबोधक वर्णों द्वारा वस्तु और ध्वनि के गुणों का ज्ञान यथातथ्य हो जाता है। देखिये—

× × × कर ककन कटि किक्किनि राजत बाजठ रुनरुन कारी जू ॥ × × ×  
( पद स० १७२ )

## सौन्दर्याङ्कन और चित्रमयता—

बाह्य सौन्दर्य के साथ-साथ भाव-सौन्दर्य की अभिव्यक्ति के भी कुछ चित्र गोविन्दस्वामी ने सुन्दर खचित किये हैं। इसमें वस्तुगत और भागवत दोनों ही सौन्दर्य के भावपूर्ण यथातथ्य अङ्कन हैं। देखिये—

गोरे अगग्वारी गोकुल गाव की ।  
॥ वाकौ लहर लहर जोवन करै थहर थहर करै देह ॥  
धुकर पुकर छाती करै वाकौ बड़े रसिक सों नेह ॥  
कुअटा कौ पान्यौ भरै नई नई लेजु जे लेहि ।  
धूँ घट दावै दाँत सों उह गरब न ऊतरु देहि ॥  
ताकौ तिलक वन्यो अँगिया बनी अरु नूपुर झनकार ।  
बड़े बगर तें निकरि नन्दलाल खरे दरबार ॥  
पहिरें नवरग चूनरी अरु लावन्य लेहि संकोरि ।  
अरग थरग सिर गांगरी मु ह मटक हँसै मुख मोरि ॥  
चालि लल गजराज की ने ननि सों करै से न ।  
'गोविंद' प्रभु पर वारिके वीजे कोटिक में ॥

एक ग्रामीण पतिहारिन—ब्रजगोपिका युवती नायिका का कितना आस्तर मनोवैज्ञानिक और बाह्य चेष्टाओं का रसमय चित्रण है। ऐसे शब्द-चित्र, अन्यत्र भी अनेक हैं।

## प्रकृतिदर्शन—

इसी प्रकार वर्षा, शरद, वसन्त, ग्रीष्म आदि ऋतुओं के दृश्य वर्णन भी सुन्दर हैं। उनमें परम्परापालन मात्र ही नहीं, वे रूपकमय, शब्द-माधुरी-गर्भित और रसोद्दीपक हैं। राधाकृष्ण की पुण्य विभूतियों के सम्बन्ध से ही ऐसे वर्णन आये हैं।

देखो माई उत घन इत नैदलाल ।  
 उत वादर गरजत चहुँदिसि इत मुरली सवद रसाल ॥  
 उत राजत कोदंड इंद्र कौ इत राजत वनमाल ।  
 उत दामिनिचमकत है अति छवि इत पीत वसन गोपाल ॥  
 उत धुरदा इत चित्र किये हरि बरखत अमृत धार ।  
 उत नग पाँति उदत वादर में इत मुक्ता फल हार ॥  
 उत कोकिल कोलाहल कूजत इत बाजत किऊनी जाल ।  
 'गोविद' प्रभु की बानिक निरखत मोहि रहीं व्रजवाल ॥  
 [ वर्षा ] ( पद सं० १०८ )

÷

×

×

रिनुराज नृप घर वसंत आयो । कामिनी रूप कंदर्प बैठायो ॥  
 केतकी मालती जुही बंधायो । कोकिला कीर पिक कहे सुनायो ॥  
 विविध द्रुम कुसुम वन त्रिपिन द्वायो । सुरति दंपति केलि कर सिखायो ॥  
 मान तजि वेगि चलि 'गोविंद' प्रभु पै । रेंनि अनुदिन करि आपने मनभायो ॥  
 [ वसंत ] ( पद सं० १०२ )

×

×

×

सीतल दसीर ग्रह छिरको गुलाब नीर,  
 तहाँ बैठे पिय प्यारी केलि करत है ।  
 अरगजा अग लगाइ कपूर जल अँचाय,  
 फूल के हार आछे हिय दरसत है ॥  
 सीतल झारी बनाइ सीतल सामिग्री धराइ,  
 सीतल पान मुख वीरा रचत है ।  
 सीतल सिज्या धिठाय खस के परदा लगाइ,  
 'गोविंद' प्रभु तहाँ छवि निरखत है ॥  
 [ ग्रीष्म ] ( पद सं० १६४ )

×

×

×

राधाकृष्ण तथा ग्वाल-गोपियों के विविध लीला ऋतु समय के यों तो अनेक सौन्दर्य शृंगार वर्णन हैं, किन्तु राधिका के सर्वांग सौंदर्य को विरह के क्षणों में स्मृति रूप में श्रीकृष्ण किस प्रकार अपने शृङ्गार द्वारा धारण कर रहे हैं, यह भाव सर्वथा मौलिक है—

प्यारी री बदा कनक तेरो या तें धरेंई रहत हों कमल ।  
 वरुहा चंद्र देखि कछु अनुसरत या ही तें धरेंई रहत माये पर ॥  
 दमन जोति अनुपरत या ही तें धरत कठ मोतिन लर ।  
 कंचन बरन तेरो या ही तें धरें रहत पीताम्बर ॥  
 तब स्वर्ग कउ मिलत बछु या ही तें धरत बसी अधर ।  
 'गोविंद' बलि इमि कहत प्यारी सों इन बातनि नैंकि रह्यो जात वीत वासर ॥  
 ( पद सं० ४७१ )

### शब्द-चित्र—

रास, रसावेश, वात्सल्य, रूप-सौन्दर्य के कुछ शब्द-चित्र, जो प्रसाद माधुर्य पूर्ण हैं, देखिये—

नृत्त गोपाल सग राधिका बनी ।  
 कंचन तन नील बसन म्याम चक्षुकी विचित्र  
 ककन करि कटि सुरेम रुनित किंकिनी ॥  
 थेई थेई थेई बदन मान उरपि तिरपि करत गान  
 सरस तान राग रागिनी ।  
 ताल भाँक जति मृदग मिलवत वीना उपग  
 धाजत पग नूपुर कल धुनी ॥  
 राका निसि सरद चंद्र प्रगट अग अग अन्नग  
 रह्यो रास रग सरस तट कलिंदनी ।  
 रीके गिरिधर सुजान रसिकगड् गुननि गान  
 साधु साधु कह अक भरत वृदनी ॥  
 टपति उरपि तिरपि रास करत केलि रति विलास  
 निरखे प्रेम गुन निवास कल जामनी ।  
 लीला रस सुख निहारि तन मन धन प्रान चारि  
 'गोविंद' प्रभु अखिज केलि जगत पावनी ॥

[ रास ]

( पद सं० ६१ )

×

×

×

आजु अति खरेई सिधिल देखियत रस भरे लाल ।  
 सब निसि जागे और सिधिल अरुन देऊ अंबुज नैन विसाल ॥  
 सिधिल भूपन कटि सिधिल बसन अरु सिधिल अरगजी भाल ।  
 लटपटी पाग सिर सिधिल अलकावलि गलित कुसुम गुलाल ॥

रि धिल सिखड सीस लटक रहे आए भोर ढगमगत चाल ।  
सिधिल बँन कछु कहत आन की आन 'गोविंद' प्रभु हैं विहाल ॥

[ रसावेश ]

( पद सं० २४४ )

×

×

×

अहो रधि मथने घोर की रानी ।

दिग चार पारे टँहरे कौ कटि किंकी लनसुन बानी ॥

सुत के गुन गावति आनँद भरि बाल चरित्रअव जानी ।

चम जलविंदु राजें बदन कमल पर मानों सरद बरखानी ॥

पुत्र स्नेह सुचवत पयोधर पुलकित अति हरखानी ।

'गोविंद' प्रभु घुटरुन चलि आए पकरी रई मथानी ॥

[ मथन—चात्सल्य ]

( पद सं० २८० )

×

×

×

बदन कमल ऊपर चैठे री मानों जुगल खजरी ।

ता ऊपर मानों मीन चपल अरु ता पर अलकावलि गुज री ॥

और ऐसी छवि लागे री मानों उदित रवि निकर फूली किरनि मंजरी ।

'गोविंद' बलि बलि सोभा कहों लो बरनों सु मदन कोटि दल गज री ॥

[ रूप—सौन्दर्य ]

( पद सं० ४३६ )

### प्रकृति-पूजा तथा देश-प्रेम—

नैसर्गिक श्री सुपमा और धन्यधान्य-सम्पन्न ब्रज और गोवर्द्धन तथा गोकुल की गरिमा कितनी तात्विक रूप में बतलाई गयी है और जन्म-भूमि वा देश के प्रति कितनी भक्तता, प्रेम और अनुराग मलकता है, देखिये—

सुरपति लागि मेदि गोवर्द्धन पूजो ।

अपनो कुलदेवछाँदि सेवो किन दूजो ॥

रुन जज्ञ तहाँ बहुत होत वाड़े सुख गैयौ ।

हित हरिदास पर सीतल जाकी छैयौ ॥

पाक साक विजन बहु अन्नकूट कीनो ।

'गोविंद' प्रभु ब्रज जन यो मॉगिके जु लीनो ॥

( पद सं० ६८ )

×

×

×

वे देखियत हमारे गोकुल के लखजू ।

प्राची दिसि तें नैकु ही दच्छिन मेरी अगुली अग्रज करो नैक सुख जू ॥

गोवर्द्धन शृंग चटि कहत हैं मोहन बलदाऊ हमें देखिबे की भूख जू ।  
जनम भूमि चलि आए 'गोविंद' प्रभु पुलकित मन भयो अति सुख जू ॥  
( पद स० ११८ )

x

x

x

### सामाजिक तथा ऐतिहासिक प्रथाएँ—

गोविन्दस्वामी के पदों में प्रसंगवश आगे हुए उल्लेखों से उस समय की कुछ विशेष सामाजिक एवं ऐतिहासिक प्रथाओं पर भी प्रकाश पड़ता है—

x x x दिव्य चीर पहिरें दक्षिण कौ । x x x ( पद सं० २८० )

उस समय दक्षिण देश के वस्त्र का प्रचलन था और उसे उच्च वशों में, विशेष कर स्त्रियों के लिये, महत्ता दी गयी थी । संभव है महाप्रभु के संबंध से यह दक्षिणान्त्य वेश उनके ध्यान में रहा हो ।

x

x

x

x x x दान माँगत जैसे काहू लादी लोंग सुपारी । x x x

( पद स० २१७ )

स्पेन, पुर्तगाल आदि विदेशी व्यापारियों द्वारा देश में लाये गये लोग, सुपारी आदि मसालों पर उस समय कर लगता था ।

x

x

x

x x x तुम कियो मधुपान । x x x ( पद सं० २४८, २१३ )

'मधु' सरीखा कोई मादक पेय द्रव्य उस समय प्रचलित था, जो श्रीकृष्ण सदृश बड़े लोग भी पान करते होंगे । दाऊजी की भाँग ही संभवत यह हो ।

x

x

x

x x x हौं चौगान की गेंद भई री । x x x ( पद स० ४६१ )

सर्वसामान्य में उस समय चौगान की गेंद का एक खेल प्रचलित था, जिसका उल्लेख, विशेष कर राजवशों में, केशव आदि परवर्ती कवियों ने किया है ।

## विविध कलाएँ—

पुष्टिमार्गीय भावना, सेवाप्रणाली एवं तदन्तर्गत कीर्तन-भक्ति के अभिनिवेश के कारण गोविन्दस्वामी के काव्य में हम सङ्गीत—गायन, वादन, नर्तन—चित्र, पाक-सामग्री, शृङ्गार-बन्ध-आभरण आदि विविध कलाओं का समावेश पाते हैं। एक उत्कृष्ट गायक कलाकार होने के नाते, उन्होंने अपने पदों में वर्णित तालिका\* विविध राग और वाद्यों का उपयोग और उल्लेख किया है। सेवोपयोगी बन्ध†, आभरण‡, सामग्री†† आदि भी उनके काव्य-रचना के विषय बन गयी हैं।

## शैली—

गोविन्दस्वामी का साहित्य गीति-काव्य, मुक्तक पद के रूप में है। अतएव उसमें पद-लालित्य और माधुर्य है। भाषा भावानुगामी और प्राञ्जल है। अष्टछाप के अपने सहयोगियों के साथ उन्होंने काव्य-रचना की एक परम्परा स्थिर की है। परवर्ती कवियों को अपने काव्य के कलापक्ष और भावपक्ष को सजाने में उनसे एक प्रेरणा और पथ-निर्देशन मिला है।

## साहित्य में स्थान

गोविन्दस्वामी के काव्य के गुण, काव्यगत विशेषताओं और शैली आदि के विवेचन के अनन्तर इस निष्कर्ष पर पहुँचा जा सकता है कि अष्टछाप-काव्य ही नहीं, सम्पूर्ण भक्ति-काव्य में उनका एक विशिष्ट स्थान है, विशेष कर काव्य-कीर्तनकार के रूप में। वे एक प्रतिभाशाली कलाकार, मानव हृदय की सूक्ष्म मनोवृत्तियों के दृष्टा, दार्शनिक, भक्त और अमर कवि हैं। अष्टछाप के सभी कवियों की काव्य-प्रतिभा प्रायः एक सी है, क्योंकि सभी को उसके शिरमौलि सूर से प्रकाश, प्रेरणा और पथ-प्रदर्शन मिला है। अष्टछाप का एक

\* तालिका ( ५ )

‡ तालिका ( ५ )

† तालिका ( ६ )



मौलिक स्वरूप है, अतएव उसकी तुलना किसी अन्य कवि से करना एक प्रकार से अनुचित ही है। वात्सल्य के अनूठे चित्र, बाल मनो-वृत्तियों की अद्भुत व्यञ्जना, वियोग और सयोग की विविध अन्तर-वृत्तियों का हृदय-स्पर्शी वर्णन तथा भक्ति की अलौकिक मनोरमता गोविन्दस्वामी की अपनी विशेषताएँ हैं।

उनका काव्य लौकिक-अलौकिक, दोनों दृष्टियों से उपादेय है। भावविभोर हो, अगाध स्वरलहरी में डूब कर उठा न गन-गायन द्वारा जहाँ निस्सीम आत्मानन्द की अनुभूति की जा सकती है, वहाँ अपनी कनुप-वृत्तियों को ऐहिक स्वार्थ, ममता और मोह के निम्नस्तर से बहुत दूर ऊपर उठा कर प्रभु के अविन्द्य, माधुर्य-रससिक्त चरणों में विनियुक्त किया जा सकता है। गोविन्दस्वामी द्वारा परिदर्शित अनन्त रससिन्धु में अवगाहन कर हम ऐहिक तापों से निवृत्ति और चिन्तन मुक्त की उपलब्धि द्वारा जीवन के वास्तविक लक्ष्य को प्राप्त कर सकते हैं। “कौतौ केशव कीर्तनान्” के अनुसार आज के निस्साधन जीव के लिये भगवत्-प्राप्ति का यही एक मात्र उपाय है। यही उनके काव्य का लक्ष्य है, और यही अमर सन्देश।

---



सौ० चम्पा वैन सांकरलाल बालाभाई  
अहमदाबाद.

1

2

3

4

5

# गोविन्द स्वामी

[ सम्पादक—पो० कण्ठमणि शास्त्री विशारद ]



अब श्रीगुसाईंजी के सेवक गोविन्द स्वामी सनोड़िया

ब्राह्मण, महावन में रहते तिनकी वार्ता\*

वार्ता प्रथम

सो ( वे ) प्रथम आतरी ( गाव ) में रहते । ( सो ) तहाँ ( वे ) गोविन्दस्वामी कहावते और आप सेवक करते । परि गोविन्दस्वामी परम भगवद् भक्त हते । सो ( वे ) गोविन्दस्वामी आतरी ते ब्रज को आये । सो महावन में आइ रहे, काहे ते जो—( यह ) ब्रजधाम है । इहाँ श्री भगवान् के चरणारविन्द की प्राप्ति ( कैसे न ) होइगी ?

सो गोविन्दस्वामी कवि हते, ( सो ) आप पद करते । सो जो-कोई इनके पद सीखिके श्रीगुसाईंजी के आगे गावै ताको श्रीगुसाईंजी प्रसाद लिवावते, और आप प्रसन्न होते । सो ( वे ) गावनहार गोविन्ददास स्वामी के आगे जाइ कहते । जो-तुम्हारे ( किये ) पद हम श्रीगोकुल में जाइ श्रीगुसाईंजी के आगे गाए । सो पद सुनि के श्री गुसाईं जी वांछते प्रसन्न भए । और हमको प्रसाद लिवायो । ताते तुम अपने पद हमको सिखावो । एसे आइ कहते । और गोविन्दस्वामी अपने मन में यों जानते-जो-कछु है सो ( श्रीगोकुल है और गोकुल के ) श्रीगुसाईंजी हैं । परि मिलवो बने नाहीं ।

(सो) एसे कहत कितनेक दिन बीते । तब एक दिन श्रीगुसाईं जी को सबक कछु कार्यार्थ वृ दावन गयो । सो भगवद-इच्छा ते गोविन्दस्वामी

---

\* श्रीहरिरायजी कृत भावप्रकाश—( आधिदैविक मूल स्वरूप )  
ये गोविन्दस्वामी लीला में श्रीठाकुरजी के 'श्रीदामा' सखा तिनको प्राकट्य है । सो दिवस की लीला में तो ये श्रीदामा सखा हैं, और रात्रि की लीला में ये 'भामा' सखी हे, श्रीचंद्रावलाजा की । ताते यहाँ हू ये श्रीगुसाईंजी के रूप में आसक्त हैं ।

और वह वैष्णव कौ मिलाप भयो । सो-गोविंदस्वामी और वह वैष्णव मिलिके बैठे । सो ( तहाँ कोई ) वार्ता के प्रसंग मे गोविंदस्वामी ने कह्यो जो—श्रीठाकुरजी की लीला साक्षात् कैसे जानी जाइ ?

तब वा वैष्णव ने कह्यो जो—फेरि कहूँगो । तब गोविंदस्वामी ने ( वा वैष्णव सो ) कह्यो जो—मोकों तो वोहोत दिन की आर्ति है । और तुम कहत हो जो—पीछे कहूँगो । सो एसी एकात ठौर फेरि कहाँ मिलेगी ? ताते मेरे ऊपर कृपा करिके कहो ।

तब वा वैष्णव कों गोविंददास के ऊपर दया आई । तब उन वैष्णव ने गोविंदस्वामी सों कह्यो जो—आज के समै तो श्रीठाकुरजी को श्रीविठ्ठलनाथजी ने—अपने बस करि राखे हैं । तातें श्रीठाकुरजी और ठौर जाइ सकत नाहीं । श्रीठाकुरजी तो श्रीगुसाईं जी के हाथ हैं । तातें श्रीठाकुरजी के चरणारविंद पाइए तो उनही तें पाइए । तातें और ठौर श्रम करनो सो वृथा है । तातें श्रीगुसाईंजी कृपा करें तो यह होइ । सो यह सुनिके गोविंदस्वामी कों अति आतुरता भई । और अपने मन मे अति उत्साह भयो ।

तब गोविंदस्वामी उन वैष्णव सों कही जो—तुम मोकों श्रीगोकुल ले चलो । मोकों श्रीगुसाईंजी सों मिलावो, मिलाप होइ तो । पाछें उन वैष्णव ने गोविंदस्वामी की आतुरता देखिके कही जो—सवारे चलियो । तब रात्रि कों दोऊ जने उहाँ ही सोइ रहे । जब प्रात काल भयो तब उहाँ तें उठि चले सो श्रीगोकुल आए । तब ता समै श्रीगुसाईंजी भीतर श्रीठाकुरजी कों राजभोग धरिके श्रीठकुरानीघाट स्नान करिवे कू पधारे हते । सो ता समै आइ पोहोचे ।

तब वा वैष्णव ने श्रीगुसाईंजी कौ गोविंददास को दिखाए । तब ( देखिके ) गोविंददास के मन मे आई, जो—ए तो बडे कोईक पंडित हैं, कर्मकांड करत हैं । इन सों श्रीठाकुरजी क्यों करि मिलत होंइगे ? एसो चित्त में विचार करन लागे ।

इतने मे श्रीगुसाईंजी सध्या तर्पन करि पहुँचे । तब श्रीगुसाईंजी ने पूछ्यो जो—गोविंददास ! तुम कब आए ? तब इन कह्यो महाराज ! अब ही आयो ।

( ता ) पाछें श्रीगुसाईं जी ( उहाँ ते ) मंदिर को पधारे । ( सो ) साथ गोविंददास हते । अपने मन मे विचार करन लागे, ( जो ) इन

मोको कवहू देखें नाहीं, और ए तो मोको पहचानत हैं । तातें कछू तो कारन दीसे है ।

पाछें श्रीगुसाईंजी ( तो जाइ के मंदिर में ) राजभोग सराए । पाछे ( दर्शन के ) किवार खुले, तब राजभोग समै के दरसन खुले—तब गोविंदस्वामी ने राजभोग ( आरती ) के दरसन किए । सो साक्षान् बाललीला रसमय रसात्मक स्वरूप कौ दर्शन भयो । ता समै श्रीगुसाईंजी गोविंदस्वामी को यह दान किए ।

ता पाछें ( श्रीगुसाईंजी ) राजभोग आरती करि अनौसर करि ( बाहिर आए ) पाछें श्रीगुसाईंजी सों गोविंदस्वामी ने कह्यो जो— महाराज ! आप तो कपट रूप दिखाए हो । और तुम्हारे भीतर तो साक्षात् प्रभु विराजे हैं । और बाहिर तो वेदोक्त कर्म करे हो । तब श्रीगुसाईंजी ने गोविंददास सों कह्यो । जो-भक्ति मार्ग है सो ते ( फूल ! रूपी है और कर्म मार्ग काटा रूपी है ) फूलन की रक्षा काटे बिना न होइ\* तातें वेदोक्त कर्म है, सो भक्ति मार्ग रूपी फूल कों काटे की वाडि है । तातें कर्ममार्ग की वाडि बिना भक्तिमार्ग रूपी फूल कौ जतन न होइ । तब जतन बिना फूल रहै नाहीं । तातें यह वस्तु है सो तो गोप्य है । तातें प्रगट प्रमान यों ही है ।<sup>१५</sup>

तब यह ( वचन ) सुनिके गोविंदस्वामी बोहोत प्रसन्न भए । तब गोविंदस्वामी ने श्रीगुसाईंजी सों ( फेरि ) बिनती करी । जो-महाराज ! मो पर कृपा करिए ।

तब श्रीगुसाईंजी ने कही जो-जाउ । स्नान करि आउ । तब गोविंददास तत्काल स्नान करिके अपरस ही में आए । तब श्रीगुसाईंजी ( इन ऊपर ) कृपा करिके नाम सुनायो । ( ता ) पाछें समर्पन करवायो । पाछें ( अनौसर कराइ ) श्रीगुसाईंजी भोजन कों पधारे । तब अपने श्रीहस्त सों गोविंददास को पातरि धरी, तब गोविंददास ने महाप्रसाद लियो ।

पाछें गोविंददास श्रीगोकुल ( ही में ) आइ रहे । वहनि कान्ह वाई को बुलाइ लई । तब गोविंददास श्रीगुसाईंजी के पास निरतर

\* .. इतना अश भावप्रकाश रूप में प्रकाशित हुआ था - पर है यह वार्ता का ही अश ।

रहते । तब तें श्रीगुसाईजी गोविंददास को अपनो ही करि जानतें ।  
(सो गोविंदस्वामी एसे कृपापात्र भगवदीय हतें ।)

### बार्ता द्वितीय

और गोविंददास महावन के टीलेन मे नित्य जाइके तहां कीर्तन करते । सो ठाकुरजी उनकों उहाँ दर्शन देते । कोइक विरियां गोविंददास के साथ मदनगोपालदास जाते । सो तहां गोविंददास कीर्तन करें, सो मदनगोपालदास लिखि लेंइ । तब गोविंददास एक समै श्रीठाकुर जी सों-कहे, जो यह तांन सूधी लेउ । तब मदनगोपालदास ने गोविंददास सों कही, जो-तुम कौन सूं कहत हो ? इहा तो कोई दूसरो नाहीं । तब गोविंददास ने कह्यो जो—हौं तो यों ही बकत हों । पर हट्टै की उनसों कही नाहीं । पाछें एक दिन श्रीगुसाईजी ने कही जो—गोविंददास ! श्रीठाकुरजी कैसे गावत हैं ? तब गोविंददास ने कही जो महाराज ! श्रीठाकुरजी तो गावत हैं । परि ताहू तें सु दर श्रीस्वामिनी जी गावत है । श्रीठाकुरजी के साथ एसी तान उठावत है जो—देखे ही बनें । तब श्रीगुसाईजी सुनिके मुसिकाइ रहे ।

( वे गोविंददास एसे भगवदीय हे\* ) ।

### बार्ता तृतीय

और ( पहले ) गोविंददास आंतरी में आप सेवक करते । सो उहां “गोविंदस्वामी” कहावते । आतरी में इनके सेवक बोहोत हते । सो एक समै आतरी के लोग गोकुल आए, सो गोविंददास जसोदाघाट ऊपर बैठे हुते । ( सो उन सुनी ही जो—गोविंदस्वामी श्रीगोकुल में रहें है, सो सुनिके नाम पाइवे के लिये आए हे ) ।

तहा वे लोग आइ इनसो पूंछन लागे, जो—‘गोविंदस्वामी’ कहा रहत हैं ? तब गोविंददास ने कही जो—वे तो मुए बोहोत दिन भए । तब वे पूछत पूछत गोविंददास के घर आए । ( इतने मे गोविंददास हू घर आए ) तब कान्हवाई ने कही जो—ए गोविंददास आए । तब उन लोगन ने इनको पहिचाने । जो—ए तो हम सो एसे कहे जो—वे तो मुए बोहोत दिन भए है, और ए तो आप ही हते ।

\* भावप्रकाश वाली प्रति में यह द्वितीय प्रसंग नहीं है ।

तब वे सगरे लोग बोले जो स्वामी ! तुम हम सो यो क्यो कहे ? जो वे तो मुए । तब उन सो गोविंददास ने या भौंति सो कह्यो । ( जो मरे नांही तो अब मरेगे ) ताकौ हेतु कहा ? जो, वे लोग इन सो पूछे जो—गोविंदस्वामी कहा रहत है ? तब गोविंददास ने कह्यो जो वे तो मुए वोहोत दिन भए, 'स्वामी' कहिके, ताते मुए । ताते स्वामीपनो तो मुअ्रो । अब तो दास है ।।

तब वे लोग कहे जो—हमको नाम देउ । तब गोविंददास ने कह्यो जो—अब तो मैं नाम देत नाहीं । हम तो अब दास हैं । ताते तुम श्रीगुसाईजी पास नाम पाउ । तब उन कह्यो जो हमको श्रीगुसाईजी पास ले चलो । पाछे गोविंददास उनको अपने सग ले जाइके श्रीगुसाईजी पास नामदिवायो । पाछे वे लोग दिन पाच(श्रीगोकुल)रहिके (पाछे) आतरी को गए ।

( सो वे गोविंददासजी श्रीगुसाईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय भये । )

### बार्ता चतुर्थी

और गोविंददास पांड श्रीयमुनाजी में कवहूँ डारते नाहीं, कूप के जल सो न्हाते । श्रीयमुनाजी के तीरपे लोटते । अंजुली भरिके जल लेते । ( सो पी जाते और आचमन\* हूँ न करते ) सो उनकौ ऐसो भाव, जो श्रीयमुनाजी को कहते, जो साक्षात् श्रीस्वामिनीजी हैं । (और यह कहत जो)—तामें मेरो अप्रयोग सरीर कैसे डारूँ ? एसे श्रीयमुनाजी को अगाध भाव सयुक्त है ताकौ विचार करते ।

वे गोविंददास साक्षात् दर्शन करते ।

सो एक दिन श्रीवालकृष्णजी श्रीगोकुलनाथजी ए ढोड भाई श्रीयमुनाजी में स्नान करत हते । ता समै श्रीयमुनाजी के तीर ऊपर गोविंददास ठाढे हते । तब श्रीवालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी ढोड भाई आपुस मे कह्यो । जो—आपुन गोविंददास को पकरिके

भावप्रकाश—

† जो या भौंति सो गोविंददासजी ने कही ताकौ फारन कहा ? (क्यों) जो भगवदीय को मिथ्या न बोलनो । ताकौ हेतु यह जो—उन लोगन ने तो इन सो पूछ्यो सो—गोविंदस्वामी कहिके पूछ्यो । तासो इन कही जो—वे स्वामी तो मरे (क्यों) जो अब तो हम 'दास' हैं ।

\* आचमन = अचवन, कुत्ता करना ।



श्रीयमुनाजी में स्नान करवाइए। तब वे दोऊ भाई गोविंददास को पकरिके ( श्रीयमुनाजी में ) ले जान लागे। तब गोविंददास ने कह्यो जो-महाराज ! मोकों श्रीयमुनाजी में मति डारो और मोकों श्रीयमुनाजी मे डारोगे तो मेरो दोष नार्हो, फेर तो आप जानो। श्रीयमुनाजी हैं सो तो साक्षात् ( श्रीश्वामिनीजी हैं ये ) लीलात्मक स्वरूप है। तामे (यह) मेरो अप्रयोजक सरीर कैसे डारूं ?

( सो गोविंददास ने जब ) एसो कह्यो तब छोटि दियो। तब ( इन ) दोउ भाईन कों श्रीयमुनाजी कौ लीलात्मक ( स्वरूप कौ ता समय ) दर्शन भयो । तब गोविंददास ने कह्यो जो-महाराज ! इहा तो उत्तमोत्तम ( सामग्री ) होइ सो समर्पिए। सो निज स्वरूप जानिके कह्यो ।

(वे गोविंददास (श्रीगुसाईजी के) एसे कृपापात्र (भगवदीय)हे ।)

### बाल्या पंचम

और एक समै ( रात्रि कों ) श्रीगुसाईजी श्रीभागवत दशमस्कंध अष्टदशाध्याय वेणुगीत के अंत को श्लोक—

गा गोपकैरनुवन नयतोरुदार,

वेणुस्वनै कल्पदैस्तनुभृत्सु सख्य ।

अस्पदन गतिमता पुलकस्तरूणा,

निर्योगपाशकृत लक्षणयोर्विचित्रम् ॥

या श्लोक की सुबोधिनी कौ व्याख्यान गोविंददास के आगे ( श्रीगुसाईजी ) करत हते सो व्याख्यान करत करत अर्द्ध रात्रि गई पाछें श्रीगुसाईजी आप तो पोढिवे को उठे। तब गोविंददास कों आग्या दीनी जो—अब तुम ( हू जाइके ) सोइ रहो।

तब गोविंददास श्रीगुसाईजी कों दंडोत करिके उठि चले। सो तहाँ (अपनी बैठक में) वैष्णव के संग श्रीबालकृष्णजी श्रीगोकुलनाथजी ( श्रीगोविंदरायजी ) बैठे हसत खेलत हते (और वैष्णव हू सग हते ) तहाँ गोविंददास ( हू ) आए तब ( गोविंददास तें ) श्रीगोकुलनाथजी ने पूँछी जो गोविंददास ! ( या विरियो ) कहाँ तें आवत हो ? तब गोविंददास ने कह्यो जो—महाराज ! श्रीगुसाईजी के पास तें आवत हों। तब श्रीगोकुलनाथजी ने पूँछी जो—उहाँ कहा प्रसग होत हतो ?

तब गोविन्ददास ने कह्यो जो महाराज ! वेणुगीत के अत कौ श्लोक  
“ गा गोपकैरनुवन ” या श्लोक कौ व्याख्यान कियो । तब श्रीगोकुल-  
नाथजी ने कह्यो जो—कहा व्याख्यान कियो ? तब गोविन्ददास ने कह्यो  
जो महाराज ! अपनी बात आप कहो, ताकी कहा पटतर दीजिये ?

( तब ) श्रीगोकुलनाथजी ने कह्यो जो—गोविन्ददास ने  
श्रीगुसाईजी के स्वरूप नीके जान्यो ( है ) ता पाछे गोविन्ददास दडवत  
करिके ( अपने ) घर काँ गए ।

( सो वे गोविन्ददास एसे भगवदीय भए । )

### व्याख्यान पृष्ठ

और एक समै श्रीनाथजी और गोविन्ददास ( दोउ ) अपसरा  
कु ड ऊपर साथ ( ही खेतत ) हते । सो उहाँ तँ गोविन्ददास गिरिराज  
ऊपर आए । तब देखे तो इहाँ राजभोग को आरती होय चुकी है । तब  
गोविन्ददास ने कह्यो जो—इहाँ राजभोग आरोग्यो कौन ने ? श्रीनाथजी  
तो अब पधारत हैं, एसेँ कह्यो । जो तब ( श्रीगुसाईजी ) फेरिके  
राजभोग की सामग्री सिद्ध करवाई ( फेर राज—)भोग धरयो । पाछे  
भोग सरयो, आरती भई, अनौसर भयोऽ ।

‡ भावप्रकाश—

यहाँ यह संदेह होय जो—श्रीनाथजी तहाँ हते नाहीं तो सेवा कौन  
की भई ?

तहाँ कहत हैं जो—श्रीआचार्यजी के पुष्टिमार्ग में श्रीठाकुरजी मर्यादा—  
पुष्टि रीति सों विराजत है । ( तो भी ) सगरे ( सब स्थल में ) पुष्टि पुरुषोत्तम  
के भाव सों सगरी सामग्री आरोगत है । सगरी वस्तु वस्त्र आभूषण कों अगीकार  
करत हैं, और दर्शन देवे भे मर्यादा रीति सों विराजत हैं । बोलत नाहीं । सो  
भगवत् स्वरूप में दोइ प्रकार कौ स्वरूप है । एक भक्तोद्धारक, और एक मर्यादा-  
पुष्टि रीति सों सबकों दर्शन देँ सो सर्वोद्धारक ।

भक्तोद्धारक स्वरूप के विषेँ सबकों दर्शन नाहीं । सो जहा ताई वैष्णव कौ  
प्रेम न होय तहां ताई मर्यादा-पुष्टि-रीति सों अगीकार ( और ) दर्शन है ।  
भक्तोद्धारक स्वरूप, सर्वोद्धारक मर्यादा, पुष्टि रूप सों सिंहासनपे विराजिके  
सब कों दर्शन देत हैं सो स्वरूप मे ते बाहर प्रकट होइ । सो जहां तरुन, वृद्ध,  
गाय, आदि जैसो कार्य करनो होय ता प्रकार कौ रूप करि उह भक्त सो बोलें,  
अनुभव करावें । तथा मर्यादा-पुष्टि स्वरूप है, उन ही के मुख सों बोलें,  
अनुभव जतावें ।

और गोविंददास तथा कुंभनदास और गोपीनाथदास ग्वाल ए तीनों श्रीनाथजी के एकान के सखा है। श्रीनाथजी (श्रीगुसाईजी ने) इनको कृपा करि सब बतयो है।

सो एक समै श्रीनाथजी और गोविंददास पूछरी की ओर खेलत हते। ( सो गोविंददास सदैव श्रीनाथ जी के साथ रहते ) सो ( एक दिन ) राजभोग कौ समौ हतो। तातें श्रीनाथजी राजभोग आरोगवे को पूछरो की ओर तें आवत हते, साथ गोविंददास हते।

सो गोपालदास भीतरिया आसराकुड तें स्नान करिके गिरिराज ऊपर आवत हतो, सो उन देखे। तब गोपालदास भीतरिया ने—श्रीगुसाईजी माँ कह्यो जो—महाराज। श्रीनाथजी और गोविंददास पूछरी की ओर ते आवत हते सो मैंने देखे। तब श्रीगुसाईजी सुनि के चुप करि रहे। ( ता ) पाछे राजभोग सम्प्यो ( सो वे गोविंददास श्रीनाथजी के एकान के ऐसे सखा हैं।

(सो वे श्रीगुसाईजी के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय भए।)

### बाताई सप्तम

( और ) एक समै श्रीगुसाईजी श्रीनाथजीद्वार पधारे हते। सो गोविंददास श्रीनाथजीद्वार मे हते। सो श्रीगुसाईजी पधारे ता समै श्रीनाथजी के उत्थापन कौ समौ हतो। और गोविंददास तो गिरिराज के ऊपर श्रीनाथजी के दर्शन कों गये हते, सो गोविंददास तो श्रीनाथजी के दर्शन में छूके रहते। तब गोविंददास ने श्रीनाथजी के दर्शन किए। सो देखे तो श्रीनाथजी के पाग के पेच छूटे हैं।

सो यहा भक्ताद्वारक स्वरूप कौ अनुभव गोविंदस्वामी को है। और श्रीगुसाईजी ने जो—राजभोग घरयो सो आचार्यजी की मर्यादा अनुसार श्रीनाथ जी ने सर्वोद्वारक रूप सों आरोग्यो। तो हू गोविंदस्वामी जैसे भक्त के विशेष अनुभव सों श्रीगुसाईजी ने फेरि राजभोग घरयो, ऐसे जाननो।

प्रत्यक्ष अथवा वैष्णव द्वारा विशेष आज्ञा होव तो भगवत्कृपा भई जाननो। सो यातें श्रीगुसाईजी ने हू भगवद् इच्छा समझ करि फेरि राजभोग घरयो।

सो गोविंददास पाग वोहोत अच्छी बाँधते । सो गोविंददास ने श्रीनाथजी सों पूँछी जो—महाराज ! पाग के पेच क्यो खुले हैं ? तब श्रीनाथजी ने गोविंददास सों कही, जो तू पाग के पेच सभारि दै । तब गोविंददास भीतर जाइके श्रीनाथजी की पाग टेढी करिके पेच संभारयो । ( श्रीगोनर्धननाथजी की पाग ढीली, सो सवार दी । )

इतने ही श्रीगुसाईंजी ऊपर पधारे । तब भीतरिया ने श्रीगुसाईंजी सों कह्यो जो महाराज ! गोविंददास ने श्रीनाथजी कों छुइके पाग के पेच सुधारिके बांधे हैं । तब श्रीगुसाईंजी तो सुनि के चुपु करि रहे । कबू बोले नार्हीं । तब भीतरिया ने कही जो महाराज ! अपरस तो छुइ गई । श्रीगुसाईंजी ने कह्यो जो—गोविंददास के छूवे तें श्रीनाथजी छूवे नार्हीं जात, तातें तुम सध्या भोग धरो ।

या भाति सों श्रीगुसाईंजी ने आग्या दीनी ।

‡ ताकौ हेतु कहा ? जो अनौरस में श्रीनाथजी नित्य गोविंददास ( सों खेलते लिपटते ) ऊपर चढ़ते तामें गोविंददास के छूवे तें श्रीनाथजी छुए नार्हीं ‡

( वे गोविंददास एसे कृपापात्र ( भगवदीय ) हे । )

### बार्ता आष्टम

( और ) एक समै श्रीगुसाईंजी श्रीनाथजी कौ शृंगार करत हते, और गोविंददास ठाढ़े ठाढ़े जगमोहन मे कीर्तन करत हते । तब श्रीगोवर्द्धननाथजी गोविंददास की पीठि में काँकरी मारी । एसे आठः काकरी मारी । तब गोविंददास ने एक काकरी श्रोनाथ कें मारी, तब श्रीनाथजो चोंकि उठे । तब श्रीगुसाईंजी देखे तो गोविंददास जगमोहन में ठाढ़े हैं । और दूसरो कोऊ नार्हीं ।

तब श्रीगुसाईंजी ने कह्यो जो गोविंददास ! यह तुमने कहा कियो ? गोविंददास ने कह्यो जो—महाराज ! 'अपनो सो पूत, परायो टगीगर।' सो देखो जब तें आठ काँकरी पीठ में मारी हैं, तुम मेरी पीठ देखो ।

‡ " इतना अश भावप्रकाश के रूप में प्रकाशित हुआ था, पर यह बार्ता का ही अश है ।

‡ भावप्रकाश वाली प्रति में तीन काकरी का उल्लेख है ।

† पाठभेद 'डवींगर'

तब गोविंददास ने अपनी पीठि दिखाइके कह्यो जो महाराज ! “खेल मे को का कौ गुसैया”, तब श्रीगुसाईजी चुपु करि रहे । पाछे श्री गुसाईजी श्रीनाथजी कौ शृंगार करन लागे, और गोविंददास कीर्तन करन लागे । या भाति सों गोविंददास सदैव श्रीनाथजी के सग खेलते ।

( सो वे गोविंददास श्रीनाथजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते )

## बाताई खुबामा

और एक समै गोविंददास के ( की ) बेटी आतरी तें आई, सो थोड़े से दिन रही । परि गोविंददास ने तो कबहूँ वासो सभाषन न करयो, यों न पूछी कब आई ?

( जो कान्हवाई गोविंददास की बहन हती ताने कही जो—गोविंददास ! तू कबहूँ बेटी सों बोलत ही नाही, कबहूँ कछु कहत ही नाहीं । यों हू न पूछे जो—तू कब आई है ? सो यह कहा ? )

तब गोविंददास ने कान्हवाई सों कही जो—कान्हवाई ! मन तो एक है, सो श्रीठाकुरजी में लगाउ के बेटी में लगाउ ? तब कान्हवाई चुपु करि रही ।

तब कितेक दिन पाछें ( जब ) गोविंददास की बेटी आतरी को चली, तब कान्हवाई इनकों संग लेके ( बहू ) बेटीन मे दडौत कराइवे को ले गई । तब बहूबेटीन ने गोविंददास की बेटी जानिके कछु दियो । एक चोली साडी तथा लहगा श्रीपार्वती वहूजी ने दीनो, और घरन तें थोडो थोडो सो दीनो । पाछें बहूबेटीन सो बिदा होइके गोविंददास की बेटी चली ।

पाछें गोविंददास घर आए । तब कान्हवाई ने कह्यो जो—गोविंददास ! बेटी तो गई । तब गोविंददास ने कह्यो, जो—कछु बहू बेटीन ने दीनो ? तब यह बात सुनिके कान्हवाई ने कह्यो जो—कछु दियो तो है । तब यह । सुनिके गोविंददास बेटी के पाछें दौरे, सो कोस एक ऊपर जाइ लीनी । तब बेटी सों कह्यो जो बहूबेटीन ने कछु दीनो ? ( है, सो फेरि दे आऊं या के लिये तो आपुनो बुरो होयगो ) सो लेके गोविंददास फिरि आए । तब बहूबेटीन सों कह्यो जो महाराज ! यह अपनो फेरि लेउ पाछें, नातर याकौ बुरो होइगो, यों कहिके फेरि दीनो ।

पाछे कान्हवाई सो गोविंददास ने कह्यो जो-कान्हवाई ! वेटी तो अजान हती । परि तैने क्यों लेन दीनो † एसे न करिये । तव कान्हवाई तो सुनि के चुपु करि रही ।

( सो वे गोविंददास श्रीगुसाईजी के गम कृपापात्र भगवदीय हते )

### बारा दशम

और एक समै वसंत के दिन हते, सो श्रीगुसाईजी श्रीनाथजीद्वारा पधारे हते । सो श्रीगुसाईजी श्रीनाथजी कौ सैनभोग सराइके आप श्रीनाथजी कौ बीडा अरोगावत हते । ( और गोविंददास ठाढ़े ठाढ़े मणिकोठा मे कीर्तन करत धमार गावत हते ) सो कल्यान राग मे एक नई धमार करिके गावत हे । सो धमार--

### राग कान्हरी

श्रीगोवर्द्धनराड लाला । तिहारे चंचल नैन विसाला ॥  
तिहारे उर सोहै बनमाला । तातें मोहि रही ब्रजवाला ॥

खेलत खेलत तहा गए तहा पनिहारिन क्री वाट ।

गागरि फोरे सीस तें कोउ भरन न पावै घाट ॥

नदराइ के लाड़िले बलि एसो खेल निवारि ।

मन में आनद भरि रह्यो सुख जुवती सकल ब्रजनारि ॥

अरगजा कुमकुम घोरिके प्यारी लीनो कर लपटाइ ।

अचकां अचकां आइके भाजी गिरिधर गाल लगाइ ॥

ए तीन तुक कहिके गोविंददास चुपु करि रहे, (गोविंददास तें) आगे कही न गई ।

तव श्रीगुसाईजी ने कह्यो जो--गोविंददास ! धमार पूरी क्यों नाही करत ? तव गोविंददास ने कह्यो जो महाराज ! धमारि तो भाजि गई और मन तो अरुम्ताइ गयो । अचका अचका आइके भाजी गिरिधर गाल लगाइ । सो वह तो भाजि गई । तातें खेल तो उतनोई रह्यो, भाजि गई तो आगे खेल कहा होइ ?

तव यह सुनिके श्रीगुसाईजी वोहोत प्रसन्न भए । पाछे सैन आरती करि श्रीनाथजी कौ पौढाइ श्रीगुसाईजी आपु नीचे उतरे । पाछे धमार की तुक श्रीगोकुलनाथजी ने पूरी करी । सो तुक--

† इस स्थान पर ऐसा पाठभेद है--जो कन्हैया ! तैने घर सों क्यों न दीनो ।

‡ पाठभेद--श्रीगुसाईजी ।

“इहि विधि होरी खेलहीं ब्रजवासिन सग लाइ ।  
श्रीगोवर्द्धनधर रूप पे जन “गोविंद” बलि बलि जाइ ॥

( सो वे गोविंददास एसे कृपापात्र भगवदीय हे । )

### वार्ता एकादश

एक दिन गोविंददास महावन की दिस टीलेन पर (एक समय) कीर्तन करत हते । तहा श्रीगोकुलनाथजी कीर्तन सुनिवे को पधारते । तब अपने खवास सों कहते जो-सावधान रहियो, जब श्रीगुसाईजी के भोजन पधारिवे कौ समौ भयो होइ तब (मोको) बुलाइ लीजियो ।

सो भीतर राजभोग आवे, ता समै श्रीगोकुलनाथजी उहा पधारते, और एक मनुष्य सावधान बैठयो रहतो । सो जब समौ होइ तब बुलावन आवै । एसे नित्य करै । सो एक दिन उहा मनुष्य हतो नाहीं, कछु काम कों गयो हतो । तब श्रीगुसाईजी भोजन कों पधारन लागे, तब सब बालकन कों बुलाए, तब श्रीवल्लभ न आए ।

तब श्रीगुसाईजी कहे । जो-महावन की ओर जाओ, तहा गोविंददास कीर्तन करत हैं, तहां ते बुलाइ लाओ । तब मनुष्य दौरे । तब तहा ते श्रीगोकुलनाथजी कों बुलाइ लाए । तब श्रीगुसाईजी भोजन कों पधारे । वे गोविंददास बोहोत आछो गावें । और श्रीनाथजी उनके साथ गावते । तातें श्रीवल्लभ सुनिवे कों आवते<sup>१</sup> ।

### वार्ता द्वादश

और वे गोविंददास पाग बहोत आछी वाधते । सो एक दिन श्रीगोकुल कों महावन तें आवत हते. सो मार्ग मे काहू ब्रजवासी ने गोविंददास के माथे तें पाग उतारि लीनी । तब तासों गोविंददास ने कही । जो सारे ! सोरह दूक हैं सो सभारि लीजो, हौं तेरे घर सवारे आऊ गो । पाछे वह ब्रजवासी गोविंददास के पाइन परिके ( पाग ) दे गयो ।

<sup>१</sup> इन दोनों प्रसंगों में श्रीगोकुलनाथजी ( चतुर्थपुत्र ) का नाम आने से इस बात की पुष्टि होती है कि उनके कथानकों के वर्णन के बाद वार्ता का संपादन हुआ ।

## बार्ता नृयोदशा

और गोविंददास जसोदाघाट पर जाइ बैठते। सो जो कोऊ पानी भरिवे को आवते, तासो वतराइ अपने हृदय विषे भगवद् भाव, तासो जो चतुर होइ तासो टोक करे।

सो एक दिन गोविंददास जसोदाघाट पर बैठे हते, तहाँ एक वैरागी बैठयो गावत हतो। सो बहुत वेसुरो गावै। सुर कहूँ, अक्षर कहूँ, ताल कहूँ, राग कहूँ। सो गोविंददास सुनिके वा वैरागी सो कह्यो जो अरे वैरागी ! तू मति गावै, गाइवो खराव क्यों करत हो ? न तो तेरो सुर ठीक, न तेरो राग ठीक, तू एसो काहे को गावत है ? गाइ न आवै तो मति गावै।

तव वा वैरागी ने कह्यो जो हौं तो अपने राम को रिभावत हो। गाइवो नाहीं आवत तो कहा भयो ? मेरो राम तो रीभत है।

तव गोविंददास ने कह्यो जो तेरो राम तो मूरख नाहीं, जो तेरे राग पर रीभेगो। हम ही न रीभेगो तो राम कहा रीभेगो ? ( तालें तू मति गावै ) तव वह वैरागी चुपु करि रह्यो। ( जो उन गोविंददास ऊपर एसी कृपा हती जो सब सो निशंक बोलते । )

( वे गोविंददास एसे कृपापात्र भगवदीय हते । )

## बार्ता चतुर्दश

और एक समय सीतकाल में श्रीगुसाईजी श्रीनाथजीद्वारा पधारे हते। तव एक समै श्रीनाथजी और गोविंददास पूछरी की ओर एक प्याऊ कौ ढाक है तहाँ ढाक के नीचे श्रीनाथजी आप तथा ग्वाल-ग्वाल मिलिके खेलत हते। और कवहूँक ढाक ऊपर चढिके मुरली बजाइके सब गाइन को बुलावते। सो एक दिन स्यामढाक तें थोरी सी दूरि एक चोतरा है, तापे बैठिके गोविंददास कीर्तन करत हते। और श्रीनाथ जी स्यामढाक के ऊपर बैठे हते, और गाइ सब आसपास दूरि ( गदला घास ) चरत हती ( वन में )

सो ता समै श्रीगुसाईजी आपु स्नान करिके ( उत्थापन करिवे को ) पर्वत ऊपर चढत हते। तव श्रीनाथजी ने गोविंददास सो कह्यो जो-मैं तो अब (अपने) मंदिर में जात हो, उत्थापन को समै भयो है।



(श्रीगुसाईजी स्नान करिके ऊपर पधारे हैं, जो उहाँ श्रीगुसाईजी मो कों मदिर में न देखेंगे तो मोसो कहा कहेंगे, जो तुम कहाँ गए हे ? ताते मैं जात हों )

इतनो गोविंददास सो कहिके (श्रीनाथजी) ता ढाक पे तें उतावल कूदे । सो आपकी कवाइ कौ दावन उहाँ उरभिके फटयो । (सो दावन को टूक तहाँ ही फटिके रहि गयो) सो श्रीनाथजी ने जान्यो नाहीं । तव गोविंददास दूरि तें देखे तो श्रीनाथजी की कवाइ को दावन अरुभिके फटयो है, सो कवाइ की लीर अरभी है ।

तव श्रीनाथजी तो मदिर में जाइके (अपने मदिर मे) सिंहासन ऊपर बिराजे । तब श्रीगुसाईजी ने तो मदिर के किवाड खोलिके उत्थापन किये । सो जब गडुवा भरन लागे तब ता समै श्रीगुसाईजी ने श्रीनाथजी की कवाइ दावन में तें फटी देखी । तब श्रीगुसाईजी गडुवा भरिके उत्थापन भोग धरिके बाहिर आए । तब आप रूपा पोरिया को पूछी जो—इहाँ कोऊ आयो तो नाहीं ? तब रूपा पोरिया ने कह्यो जो—महाराज ! इहाँ तो कोई आयो नाहीं तब श्रीगुसाई जी चुपु करि रहे ।

पाछें (श्रीनाथजी के) उत्थापन भोग सराइ, आप(श्रीगिरिराज तें) नीचे उतरे (सो अपनी बैठक में आए) तब भीतरिया कों आग्या दीनी जो तुम आरती करियो, और सब सेवा सों पहोंचियो । मेरो पेंडो मत देखियो

इतनो कहिके आप नीचे अपनी बैठक में बिराजे । तब सब वैष्णव दर्शन कों आए । परि आप काहू सों बोले नाहीं । इतने ही में गोविंददास आए । तब गोविंददास ने श्रीगुसाईजी सों पूंछी महाराज ! आप अनमने से क्यों बैठे हो ? तब श्रीगुसाईजी ने कह्यो जो—रुझु नाहीं । तब गोविंददास ने कह्यो जो—महाराज ! यह बात तो कही चाहिये ।

तब श्रीगुसाईजी ने कही जो—गोविंददास ! आज श्रीनाथजी की कवाइ कौ दावन फटयो हो, सो न जानिये कौन अपराध पडयो है । (तब गोविंददास ने हँसिके कह्यो) जो—महाराज ! आप या बात कौ भलो सोच कियो, तुम कहा लरिका कौ सुभाव जानत नाहीं । तुम्हारो लरिका बहुत चपल है । अब ही मैं देखत हतो, ता बात को

थोरी सी बेर भई है। उहाँ वन मे प्याऊ के ढाक के नीचे और सब लरिका बैठे हते, और तुम्हारो लरिका ढाक ऊपर बैठयो हतो। ( सो जब तुम न्हाइके गिरिराज ऊपर पधारे ) सो लरिका तहाँ तें कूदयो सो खोच लागी है। सो दावन कौ टूक उहाँ अरुभो है। सो आप पधारे तो मैं ( तुमकों ) दिखा दूँ।

तब श्रीगुसाईंजी गोविंददास की बांह पकरिके पूंछरी की ओर को चले परि काहू सेवक कों साथ लियो नाहीं। सो जब वा ढाक के नीचे आए, तब आप देखे तो वही कवाइ की लीर लटकत है सो श्रीगुसाईंजी ने अपने श्रीहस्त सों वह लीर उतारि लीनी।

पाछे आप उहाँ तें अप्सराकुंड पे पधारे। सो स्नान करिके अपरस ही में गिरिराज पे पधारे। तब वह लीर श्रीगुसाईंजी ने श्रीनाथजी की कवाइ पे धरिके देखे तब वह कवाइ साजी हूँ गई। तब श्रीगुसाईंजी गोविंददास पे बोहोत प्रसन्न भए। तब श्रीगुसाईंजी श्रीनाथजी की ओर देखिके हँसे। तब श्रीनाथजी हूँ हँसे।

पाछे श्रीगुसाईंजी सैन आरती करिके ( सेवा ते ) पोहोचिके आप अपनी बैठक में पधारे। तब और सगरे वैष्णव आइके श्रीगुसाईं कों दंडवत कियो। तब गोविंददास ( हू ) आइके श्रीगुसाईंजी के आगे बैठे। तब श्रीगुसाईंजी ने ( उन ) वैष्णवन सो कह्यो जो अब कछु तुम्हारे मन में संदेह रह्यो है ? तब सब वैष्णव चुपु करि रहे। पाछे श्रीगुसाईंजी चुपु करि रहे।

पाछे श्रीगुसाईंजी ने कह्यो जो अब एसो उपाइ करिए, जो-जैसे श्रीनाथजी कों श्रम करनो नुपड़े। तब श्रीगुसाईंजी आप मन में विचार करिके भीतरियान कों तथा वैष्णवन कों आग्या करे जो आज पाछे घंटानाद तीन बेर और सखनाद तीन बेर करिके छनिक रहिके पाछे श्रीनाथजी के मंदिर की किवाड़ तुम खोलियो। सो यह सुनिके गोविंददास तो बोहोत ही प्रसन्न भए।

( सो गोविंददास एसे कृपापात्र भगवदीय हे । )

### बार्ता पंचदश

और एक समै गोविंददास जसांटाघाट ऊपर बैठे हते। तहा प्रात. काल कौ समौ हतो। सो तहा गोविंददास ने भैरवी ( राग ) छ लायो

सो गोविंददास कौ गरौ वोहोत सुंदर । सो भैरवी राग एमो जम्यो सो कछु कहिवे में न आवै ।

सो एक मलेच्छ चलयो जात हतो, सो वह राग मे समझत हतो । सो वाने गोविंददास कौ अलाप सुनिके कह्यो जो—वाह वा ! कहा भैरवी राग अलाप्यो है । एसो वा मलेच्छ ने कह्यो । तव (सुनिके ) गोविंददास ने कह्यो जो—अरे राग छुइ गयो ।

ता पाछें गोविंददास ने भैरवी राग कवहूँ न गाओ । कहते कहते जो यह राग मलेच्छ ने सराह्यो है, सो श्रीनाथजी के आगे राग कैसे गाऊँ ? राग छुइ गयो ।

ताते गोविंददास ने भैरवी राग में कोई पद कियो नाहीं । एसे टेकी (कृपापात्र भगवदीय) हते ।

### बार्ता पौछुआ

और कवहूँ श्रीनाथजी गोविंददास को घोडा करते, सो आप गोविंददास की पीठि पे चढिके बन कों पधारते । सो गोविंददास को लगी लगती, सो मार्ग में ठाढे ठाढे लगी करते चले जाते । तब एक वैष्णव ने कह्यो जो—गोविंददास ! यह कहा ? तब गोविंददास ने कछु उत्तर वाक्यों दियो नाहीं, प्याऊ के ढाक की ओट चले गए ।

सो वह वैष्णव सैन आरती उपरांत श्रीगुसाईजीके पास आयो । सो दडवत करिके कह्यो जो—महाराज ! गोविंददास तो ठाढे ठाढे लगी करत हतो । इतने गोविंददास श्रीगुसाईजी के दर्शन को आए । तब श्रीगुसाईजी ने पूछी जो—गोविंददास ! वैष्णव कहा कहत हैं ? जो—तुम आज मारग में निहोरिके ठाढे ठाढे लगी करत चले जात हते । तब गोविंददास ने कयो जो महाराज ! घोडा कवहूँ बैठिके लगी करत है ? या कों तो सूम्ने नाहीं । जो—श्रीनाथजी मोकों घोडा करिके मेरी पीठि पे असवारी करत हैं । और वैसे में मोकू लगी आई, तब मैं बैठि के लगी कैसे करूँ ? तात मैंने ठाढे ठाढे लगी करी, सो तो या ने देखी ( परि श्रीनाथ जी मेरी पीठ ऊपर असवार हते सो तो या को सूम्ने नाहीं )

तव श्रीगुसाईजी मुसिकाइके चुपु करि रहे ।

## बार्ता खप्तदश

और एक दिन श्रीगुसाईजी ( मथुराजी में ) श्रीकेशवदेवजी के दर्शन को पधारे । सो श्रीगुसाईजी के साथ गोविंददास ( हू ) हते । सो उहां श्रीकेशवरायजी कौ शृंगार बोहोत भारी कियो हतो, जरी कौ बागा और चीरा, ताके ऊपर जरी की ओढ़नी । सो श्रीगुसाईजी तो ( केशवरायजी के निज ) मंदिर में भीतर गए और गोविंददास द्वारा सों लगे दर्शन करत हते । सो बागा जरी कौ, जरी की ओढ़नी ऊपर देखिके गोविंददास ने कही श्रीकेशवरायजी सो जो-महाराज ! नीके ( तो ) हो ? ( तब श्रीगुसाईजी गोविंददास की ओर देखिके मुसिकाए । )

पाछें श्रीगुसाईजी श्रीकेशवरायजी के दर्शन करिके बाहिर आए, तब श्रीगुसाईजी ने गोविंददास सों कह्यो जो-गोविंददास ! केशवराय जी सों तुमने कहा कह्यो ? ( एसे न कहिए ) तब गोविंददास ने कह्यो जो महाराज ! मैं तो एसो कह्यो जो-नीके हो ? जो उष्ण काल के तो दिन और तैसी गरमी पड़े । और बागा पर ओढ़नी उड़ाई । तो कहा कहां ? तब श्रीगुसाईजी ( मुसिकाइके ) चुपु हूँ रहे ।  
( एसे वे कृपापात्र ( भगवदीय ) हे । )

## बार्ता अष्टादश

और एक समै श्रीगुसाईजी श्रीनाथजी पधारे हते । सो श्रीनाथजी की सैन आरती करिके श्रीनाथजी कों पोढ़ाइके आप नीचे अपनी बैठक मे आइ ( गादी ऊपर ) विराजे, तब वैष्णव ( सब ) आगे बैठे हते । तब एक वैष्णव नें श्रीगुसाईजी सो वीन्ती करी, जो महाराज ! गोविंददास तो श्रीनाथजी की राजभोग आरती पहलेई महाप्रसाद लेत हैं ।

( तब इतने में ही गोविंददास तहाँ आए ) तब श्रीगुसाईजी गोविंददास सों कहे, जो गोविंददास ! ए वैष्णव कहा कहत हैं ? ( जो तुम राजभोग की आरता के पहिले महाप्रसाद लेत हो ) तब गोविंददास ने कह्यो जो महाराज ! लेत तो हों, परि परवस लेत हों । कहा कहुँ ? आप तो राजभोग आरती करिके अनौसर करो, इतने ही तुम्हारो लरिका आइ ठाढ़ो रहै । कहै ( गोविंददास ! ) खेलिये कों चलि । तातें ( हों ) पहले ही ( महाप्रसाद ) लेत हो । तब श्रीगुसाईजी कहें जो-राजभोग आरती विना महाप्रसाद मति लीजो ताते राजभोग की

आरती उपरात प्रसाद लेवे को आयो कर ) तब गोविंददास ने कह्यो ( महाराज ! ) जो आग्या ।

सो दूसरे दिन गोविंददास श्रीनाथजी के राजभोग आरती के दर्शन करिके तुरत ही प्रसाद लेवे कौ गए । और इहा तो श्रीनाथजी कौ अनोसर ( भयो ) और गोविंददास तो जब प्रसाद लेइ, तब आवें । सो तब ताई श्रीनाथजी जगमोहन मे ठाढे भए । तब गोविंददास की राह देखी ।

इतने मे गोविंददास प्रसाद लेके आए । तब श्रीनाथजी ने गोविंददास सों पूछी जो—इतनी बेर तुम कहाँ गएहते ? मैं तीन बेर जगमोहन में तें फिरि गयो, फेरि आइके ठाढो भयो, तेरी राह देखत हतो । तू कहा करत हतो ? तब गोविंददास ने कह्यो—जो महाराज ! हौ तो तुमारे राजभोग सरत महाप्रसाद लेतो । सो कालि रात्रि कौ श्रीगुसाईजी ने आग्या कीनी । जो तू राजभोग आरती पीछे प्रसाद लीजियो । सो आज मैं राजभोग आरती के दर्शन करि महाप्रसाद ले तुरत आयो हूँ । सो सुनिके श्रीनाथजी चुपु करि रहे । पाछें गोविंददास की पीठि ऊपर असवार होइके पूछरी की ओर बन मे पधारे ।

पाछें उत्थापन कौ समौ भयो । तब श्रीगुसाईजी गिरिराज ऊपर जाइके शखनाद करवायो । पाछें मंदिर में पधारे, गडुवा भरन लागे । पाछें श्रीगुसाईजी सों श्रीनाथजी ने केह्यो जो—तुम गोविंददास कौ राजभोग आरती उपरात महाप्रसाद लेवे की आग्या दीनी है । सो आज मोकों बन में खेलिवे कौ अवार बोहोत भई, तीन बेर तो जगमोहन में आइके फिरि गयो । पाछें कितनीक बेर लों जगमोहन में ठाढो भयो । जब गोविंददास ( प्रसाद लेके ) आयो । तब ( वाकी पीठ पर असवार होइके ) बन में गयो । तातें तुम वाकों आग्या देउ । जो तू जा भाति करत हतो ताही भाति सों करियो ।

पाछें श्रीगुसाईजी गडुवा भरिके उत्थापन भोग धरयो । तब आप गोविंददास को ( नीचे ) बुलायो । तब गोविंददास ने आइके (श्रीगुसाईजी कौ) दडवत करी । तब श्रीगुसाईजी ने मुसिकाइके कह्यो जो जा भाति प्रसाद लेत हते ताही भाँति लीजियो । तुम कौ दोष नाहीं । तुमकों प्रसाद लेते अवार भई, तातें श्रीनाथजी कौ तेरी गैल देखना परी ।

तत्र गोविंददामदंडवत करिके कह्यो जो-महाराज । जो आग्या ।  
 ( ना ) पाछे ( श्रीगुसाईजी फेरि श्रीगिरिराज पे पधारिके ) श्रीनाथजी  
 कौ भोग सरायो ( ना पाछे आरती करिके अनौसर कराये )

मो वे गोविंददास श्रीगुसाईजी के सेवक एसे कृपापात्र भगवदीय  
 ( अतरगी सखा ) हते । जिनसों श्रीगोवर्द्धननाथजी आप सदैव वाते  
 करते, सग खेलते, ऐसी कृपा करते । तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं ।  
 मो कहा ताई लिखियेऽ ।




---

‡ यह वार्ता स० १६६७ की लिखित चौरासी वार्ता से और स० १७५२ में  
 लिखित भावप्रकाश वाली वार्ता प्रति में सपादिन की गई है । इसमें कोष्ठातर्गत पाठ  
 सं० १७५२ वालों प्रति का है । शेष उक्त नवसे प्राचीन वार्ता की प्रति का अष्टद्वय  
 की इस प्रकार की वार्ता भावप्रकाश सहित पो० शंकरमणि शास्त्री द्वारा सपादित  
 होकर विशाखिभाग में प्रकाशित हो रहीं हैं ।

—सम्पादक



## द्विषाया-सूची

### क. वर्षोत्सव ( त्यौहार-ऋतुएँ )

पद सख्या		पद सख्या	
१. मंगलाचरण	१	१६. वसन्त	१०१-१०६
२. जन्माष्टमी ( वधाई )	२-३	१७. धमार	११०-१२०
३. पलना	१४-१०	१८. डोल	१४१-१४३
४. राधाष्टमी	१६-२३	१९. फूलमंडली	१४४-१५०
५. टान	२४-४७	२०. रामनवमी	१५१-१५४
६. व्रामन-जयन्ती	४८-४९	२१. श्रीमहाप्रभुजी-उत्सव	१५५-१५६
७. दशहरा	५०-५१	२२. अक्षय तृतीया (चढन)	१६०-१६४
८. रास	५२-६५	२३. जलक्रीडा	१६५-१६६
९. हटरी	६६	२४. स्नानयात्रा	१६७
१०. गोवर्धनधारण	६७-७६	२५. रथ	१६८-१७०
११. भाई दूज	८०	२६. वर्षा ( मल्हार )	१७३-१९३
१२. गोपाष्टमी	८१-८३	२७. हिंडोरा	१९४-२१५
१३. प्रबोधिनी	८४	२८. पवित्रा	२१६-२१९
१४. श्रीगिरिधरजी-उत्सव	८५	२९. रक्षाबंधन	२२०-२२१
१५. श्रीगुसाई जी-उत्सव	८६-१००		

### ख. नित्य क्रम ( सेवा-ममय )

३०. जगावनो	२२२-२३१	३८. भोग	३३४-३५५
३१. कलेऊ	२३२-२३४	३९. सन्ध्या (व्रज-आचनी)	३५६-३६०
३२. मगला	२३५-२५८	४०. व्यारू	३६३-३६४
३३. शृ गार	२५९-२७६	४१. शयन	३६५-४७३
३४. मथन	२८०-२८३	४२. मान	४७४-५१३
३५. ह्याक	२८४-२८८	४३. पोडवो	५१४-५२८
३६. भोजन	२८९-२९५	४४. बाललीला	५२९-५४०
३७. राजभोग	२९६-३३३	४५. उराहनो	५४३-५४७

### ग. प्रकीर्ण

४६. व्रज-सुपना	५४८-५६०	४८. आश्रय (विनती)	५७३-५७४
४७. श्रीवल्लभ-कुल	५६१-५७०	भोग का अचिष्ट पद	५७५



## पाठ-प्रतीक



अ

पद संख्या		पद संख्या	
अप्रतकट ध्रुम ध्रुम ध्रुम	३५६	अरुन नयन रस भरे रग भीने	२६०
अजहुँ रैन तीन जाम हँ	५००	अरी पेरी आली री लालन	४६८
अति रसमाते री तेरे नैन	४६५	[ आली मेरी आली री०	
अथैयाँ बैठे है अजराज	५३८	[ लालन सुमुखि मनावे०	
अति हठु न कीजे री प्यारी	४६६	[ मैं मनायो न माने०	
अद्भुत आरि कन्हैया कीनों	२६८	अरी वह नदमहर को छोहरा	१३१
अधर मधुर पूरिन मुखरित	४१७	अलहीयो तुम पर वारी हौं	२२०
अथ कहा करों मेरी आली री	४५३	अवनीतल आनँद उदय भयो	८८
[ मेरी अखियनि हो०		अस्त भयो री चद्रमा अजहुँ न	४६६
[ अखियनि ही हो लागे०		अहो दधि मथति घोप की	२८०
अधर लीजे हो सुधरराइ वह	३२१	[ हो दधि मथति०	
अबधि बदि गए रात अब तुम	२५१	अहो पिय कैसे के धरत मृदुल	३५७
अब मोहि सोवन दे री मइ	५१४	अक्षय तृतीया गिरिधर ब्रैठे चदन	१६२
अबहि रग राख्यो मुरली में	३२४	अचरा छँडो हो बलि जाऊँ	४१६
अबही ते टोटा चित चोरत	५३५	[ अज लाडिले०	
अब हौं या टोटा सौं हारी	४६	[ जाऊ लाडिले०	

आ

आई जु स्याम जलद घटा	१७३	आजु अति खरेई सिधिल	२ ४
आए आए हो मन भावन	२५३	आजु अति सोमित हैं नद०	१६१
आए हो उटि भोर रसमसे नद	२५२	आजु की बानिक कही न जाइ	०६६
[ रसमसे नद दुलारे आए०		आजु गिरि गोवर्दन कर ही	७४
आओ मेरे गोकुल के चदा	३५८	आजु गिरिधरलाल नीकी	२३५
आगे आगे गोवन पाछें गिरि०	३५६	आजु गोपाल कलेऊ न कीनों	२३२
आगे चलि प्यारी री जहाँ	४१५	आजु गोपाल रन्यो रास देखत	५२
आज तेरी फवी अधिक छवि	४६२	आजु तें नीके करि जानी में	४६७
आज लाल टिपारे छवि अति	३६०	आजु दसेरा परम मगल दिन	५०
[ लाल टिपारे छवि० ]		आजु बधाई नद महरि घर	५

आजु वधायो ढसरथराड केँ	१५०
आजु वधायो ध्रीवल्लभराय केँ	८६
आजु बनिठनि लालन आए री	३३४
[ बनिठनि लालन आए७	
आजु बनी अति सारग नैनी	४६१
आजु बनी वृषभांनु कुँवरि कहँ	४७५
आजु बनी री कुँजेस्वरि रानी	४७४
आजु बने ब्रजराजकुँवर वैठे	३३५
आजु बने री लालन गिरिधारी	५७५
आजु बन्यो ब्रजराज पिआरो	२३६
आजु बरसाने वजत वधाई	१६
आजु ब्रज पर बरसत खासी	१७७
आजु ब्रज भयो है सकल आनंद	०
आजु माई बने री लाल गोव०	४०५
आजु लाल अति राजेँ वैठेऽव	२७२
आजु लाल रसभरे निकु ज	३०६

आजु सखी बने गिरिधरन	४०६
[ बनि अ जु सखी०	
आजु हरि कुसुम चौखंडी वैठे	१४६
आजु हरि वामन रूप लयो	४६
आयो वसतरितु अनूप कत	१०१
आयो रितुराज चलो वृ दावन	११०
आली री कु जभवन वैठे ब्रज०	३१०
आली री दाम दाम दाम ब्राजत	५६
आवत चारें माई धेनु मखन	३६१
आवत जात हौं हारि परी री	४६५
आवत बन ते चारें धेनु	३६०
आवत बन ते ब्रज कौ री	३६३
आवत लालन पिया रसभीने	०४३
आवति माई राविका प्यारी	४६३
[ जुवती जूथ मे बनी आवति०	

इ

इहाँ ते देखियँ सकल ब्रजदाऊ	५५६
[ चटि गिरिश्रु ग कहत है०	

इहाँऽव कहौं कौ दान न देख्यो न	०८
इ दु कुमुदिनी समेठी अरु चवनि	२५०

उ

उठि चलि मान तजि वावरी	४७६
उठु गोपाल भयो प्रात देवो	००३

उमगन रसग्रीव भुजा नचें	६१
उमगि चली पीत बरनी में तें	३६४

ए

ए नैना री लडिक्यात से	४४०
ए री जामें जेते गुन है लालन	३१३
ए री हौं वृ दावन रग	३००
एरी लाल प्यारो अति ही	०७६

एक रसना कड़ा कहो सखी री	०७
ऐसी प्रीति कहँ नहि देखी	३३०
ऐसी वर नारी कोऽव त्रिभुवन	४६१

अं

अग अग मन की मोहिनी	४०७
अग अग मोहन मन की री	३३८

[ लालन अंग अग०	
अग अंग सु डग ललना री	०३७

## क

कञ्जुख कही न जाइ तेरी	२६७
कदम चढ़ि कान्ह बुलावत गैयो	३६५
कढब बन बीथिन करत विहार	४११
कनक कटोरी भरि कुंजुम	२८६
कनक कुसुम अति सहत	४४७
कनक कु डल कपोल मडित	३६६
कनक कु डल की भाई स्याम	४४८

[ स्याम कपोल में कनक०

कब की कहति प्यारी अजहूँ न १६३

कबकी हौं निहोरो करति ही ४६३

[ कद्यो जु मानि मेरो कबकी०

कब दान दीनो कब दान लीनो ३०

[ कब दान दीनो०

[ कौन दान दीनो०

[ कब दान देहु०

कमल लोचन कान्ह मधुर सुर	३६७
करत व्रत नद गोप सकुमारी	२५६
करत हैं कु ज कु जनि केलि	४०६
करि करुना प्रकृत्यो अवनीतल	६२
कलेज कीजिये नदलाल	२३३
कहति कहति सब रेंनि गई	५०३
कहा कहि साँभ सवार कहावे	२७५
कहा करो बैकु ठे जाइ	५७४
कहा कहि बरनों री तेरे वदन	४६८
कहा री कहों नैननि की सोभा	४४३
कहा री कहों मोहन मुख सोभा	४३८
[ मोहन मुख सोभा कहा री०	
कहा री भयो मुख मोरे कछु	३१६
कहि धों मोल या दधि कौ री	४१

कहि न परे हो रसिक कुँवर	४०८
कहि न सकति मै आजु लाल	५१३
कहो जू दान लेहो कैसे	२६
कहों यों मेरे वारे से राल गोव०	७७
कान्ह कनक हिँडोरे भूलतरितु	१४३
क्रीडत कालिदी जल माहि	१६५
क्रीडत दौज नव निकु ज	४१०
क्रीडत मनमय आँगन रग	५३६
कुसुमित कु ज भए कालिदी	१३२
कुसुमित बन मधि विविध केलि	३२७
कु ज के द्वार ठाढे हैं मोहन	४७८
कु जमहल कुसुमनि सज्या पर	५२२
कु जमहल में रसभरे खेलत	३६७
कु जमहल में ललना रसभरे	३६६
कुँवर कान्ह धाँडो हो ऐसी	३६
कुँवर चलो जु आगे गहवर में	१८८
कुँवर बैठे प्यारी के संग अग	३०८
कृपा अवलोकन दान देरी महा०	४७
कृपा रस नैन कमल फूले	४००
कृष्ण तरगिनी रस रगिनी	५५१
केसरि तिलक ललन सिर छाजे	४३७
कौन करे पटतर तेरी गुनरूप	१८४
कौन काज प्यारी तू पिय सो	४८०
कौन काज प्यारी तू पिय सों	४८१
कौन पत्याइ तिहारी सूठी	५१२
कौन प्रकृति तिहारी हो ललना	३५
[ ए कौन प्रकृति०	
क्यों निकसों इह खोरि साँकरी	४५

## ख

खरिक दुहाए आवति सब	५४०
खेलत कु जमहल गिरिधर	४०८

खेलत तें आए धाए बैठे ब्रज०	५३६
खेलत फागु लाल गिरिधारी	११३

खेलत बलि मनमोहना रतु	१११	खेलत रस रास रसिक राधिका	६४
खेलत वृ दावन के चढ	३३१	खेलत हैं नदलाल	११४
खेलते मठनमोहन पिय होरी	११२		

## ग

गरजत गगन उठे बदरा चहुँ	१७५	गैयां गई दूरि टेरो जू कान्ह	३३६
गहवर सघन निकु ज छायातर	१४१	गोधन पाछें पाछें आवत	३६८
गावत रसिकराइ ब्रजनृपति	१८३	गोप वृ द सग निर्तत रग	३६६
गिडि गिडि थुंग थु गनि तकित	५८	गोप समाज जुरे जमुनातट सब	६७
[ तकि तकि थु ग०		गोवर्द्धन कैसें धरयो ब्रजरज	७८
[ तिग तिग थु ग०		गोवर्द्धन चदि टेरी हो गाग	३७०
गिरिधर कौन प्रकृति तिहारी	३७	गोवर्द्धन गिरि श्रृ ग सिलन	२८८
गिरिधर लाल बियारू कीजे	३६३	गोवर्द्धन पूजा कौं आय सकल	६६
गिरिवर कैसें धरयो ब्रज लालन	७६	गोरे अग चारी गोकुल गाँव	१३८
[ गोवर्द्धन कैसें धरयो०		गोविंद चले चरावन धेनु	८३
गुजरिया गरब गहीली ऊतर	२६	गोविंद छिरकत छोट अनूप	१६६
गुजरिया वाबरी भई केव बेर	२७		

## घ

घुररुन नंदलाल चले री माई	५४१	घेरो घेरो ब्रजनारी जान ज्यो	२५
घुमत रत रतनारे नैन सकल	२७४	[ जान ज्यों न पावे०	
घूँ घट में मोहन मुख जोवे	४७०	घेरो घेरो हो बलदाज	३७१
[ मोहन कौ घू घट में मुख०		घेरो लाल आपुनी गैयाँ	३७२
		घोख नृपति सुत गाइए जाके	१२१

## च

चरन पंकज रेनु जमुना टनी	५५२	चंदन पहरि आइ हरि बैठे	१८३
चलो चलो ले बसत स्याम कौ	१०४	चार पहरि रस रग किए रग	२६१
चलो री वृ दावन बसंत आयो	१०५	चितवत रहत सदा गोकुल	३१८
चहुँदिसि तें घनबोर उनए बाडर	१७४	चितें मुसिक्यानी हो ब्रयभान	२६७

## छ

छत्रीले लाल की यह बानिक	३४०	छाक ले आवो बेगि मेरी मैया	२८३
छात्र पठाई जसुमति रानी	२८५	छाक ले चली भानपति पास	२८६

## ज

जनम लियो जादौ कुलराई	१३
जमुना घाट रोकी हो रसिक	३६
[ रोकी हो जमुनाघाट०	
जमुना जय जगत में 'जोड़'	५४६
जमुना सी नाहिं कोउ और	५५०
जयति चतुरानन स्तुति करत	६१
जयति बल्लभ नंदन महालक्ष्मी	६०
जसुमति उदर उदधि आनद	३
जसुमति थार परोसि धरी है	२६१
जहीं जहीं नैना लगत तहीं	२६८

जागत सब निसि कहीं रहे	२६०
जागे हो रैन सब तुम नैना	२४८
जागो कृष्ण जसोदाजू बोले	२०४
जानि पाये हो लालन बलि	२४६
[ बलि बलि ब्रजनृपति कुँवर०	
जाहि तन मन धन दीजे जु	३११
ज्येष्ठ मास सुभ पून्यो सुभ दिन	१६७
जोपे श्रीविठ्ठल रूप न धरते	६३
जोरी सरस वनी	४०३

## झ

झूठी मीठी अतियन हो लालन	३४१
झूलत डोल भाई नवरगीलाल	१४२
झूलत दोऊ लालन गिरिवर०	२१३
[ ए दोऊ झूलत०	
झूलत नवरग संग राधा गिरि०	२०२
झूलत पालनै महरि सुत कर	१६
झूलत ब्रजराजकुँवर संग	२१२
झूलत मदनगोपाल हिंडोरना	१६६
झूलत राधिका रस भरी	२१४

झूलत लालन गिरिधारी	२०३
झूलत सुरंग हिंडोरे राधा०	२१०
[ राधामोहन झूलत०	
झूलत हैं न दलात मुलावें	२११
झूलन आई ब्रजनारि गिरिधरन	२०५
[ झूलन आई ब्रजनारि०	
[ झूलवन आई०	
झूलो पालने बलि जाऊं	१४
[ पालने बलि जाऊं०	

## ट

टेरत ऊँची टेर सब ग्वाल	३३०
------------------------	-----

## ठ

ठगति जुवति जन काँहू महा	१४०
ठगोरी वाली री मेरो मन	३७३
[ तें ठगोरी वाली री०	

ठाढे कु जभवन	४०६
ठाढे खरिक द्वारे नैननि ही में	३७४
ठाढे हैं दोड भैया सिंवपोरि	३७५

## ड

टोटा दोड राड के खेलत	११६
----------------------	-----

## त

तब ते रूप ठगोरी परी	३७६
तलप रची नव कुज सदन में	५२३
तुम चले साहु टोटा अपने मग	३३
तुम् देखो माई रथ बैठे नद०	१७०
तुम् देखो माई हरि जु के रथ	१६६
[ देखो माई हरिजु	
तुम् पेंडोई रोकें रहत कैसैंक	४०
तुम् ब्रजरानी के लाला अहो	१८
तु आजु देखि री मदनमोहन ए	२३८
तु चलि बोली री नंदकुमार	२२०
तु चलि सखी री सिंगारहार	४७७
[ चलि सखी री०	
तु तो प्रीत की रीति न जाने	१३७
तु मनायो मानि भामिनी	४६०
तु मोहि कित लाई इह गली	४१४
[ अरी तु मोहि०	
[ इह गली मोहि०	

तु मोहि ले रथ बैठे री मैया	१७१
तेरी हौ बलि बलि जाऊ	४५१
[ तुम्हारी हौ बलि०	
[ गिरिधरन छ्वाले०	
तेरे सुहाग की महिमा मोपे	४६४
तेरो मुख प्यारी जैसो सरद	४६६
तेरो रूप री अनूप बन्यो स्याम	४६७
ते कछु घाली री ठगोरी ए री	२६८
तैं कछु घाली री ललन सिर	४७०
[ मोहन सिर मोहनी ते०	
तैं मोहन कौ मन हरयौ तो	१३४
[ प्यारी तैं लालन कौ मन०	
[ तो बिन रह्यो न जाइ०	
तैं री मोहन मन हरि लियो	३४०
[ प्यारी ते री०	
तैंसोई वृ दावन तैंसीये हरित	०१५
तोहि मनावन लाल	३१६

## द

दपति झूलत सुरग हिंडोरे	२०६
[ झूलत सुरग हिंडोरे०	
दपति रंग भरे बैठे कुंजमहल	४०७
[ बैठे री कुंज महल०	
दधि न बेचिये हमारे कुल ए हो	३४
[ तुम सौं सौं बार कहीं०	
दरस मोहि दीजे हो नदलाल	०७७
दग्ग्य मोहि दीजे हो महाराज	००५
दिन दिन होत कंचुकी गाड़ी	१६०
दिन ही दिन हम आई गई	४४
[ अथ कछु नई०	
दीजे मन मेरो जइये तहौं मन	२४७
दुहुं दिसि नेह उमगि धनु	१७६

देखत रूप ठगोरी लागी कौन	४५७
[ नैन रहे अरुमाई०	
देखि सखी वरसन लागी	१८०
देखि री देखि भवन सुखकारी	१४५
देखि री देखि हरि के महल	१४४
देखो जु मोहन काहू अथै मेरी	५३७
देखो देखो मुरली अकुटि नचा०	४१८
देखो बलि टाऊ सो भवन	५६०
देखो माई आवत है वनवारी	३७७
देखो माई उत घन इत नद०	१७८
देव जगावत जसुदा मैया	८४
देहो लाल इंदुरियो मेरी ए	५४२
दोक मिलि क्रीडत कुजमहल	५२४
दोक मिलि झूलत कुंज कुटीर	२०८

## ज

जनम लियो जादौ कुलराई	१३
जमुना घाट रोकी हो रसिक	३६
[ रोकी हो जमुनाघाट०	
जमुना जय जगत में 'जोड़'	५४६
जमुना सी नाहिं कौड और	५५०
जयति चतुरानन स्तुति करत	६१
जयति वल्लभ नदन महालक्ष्मी	६०
जसुमति उदर उदधि आनद	३
जसुमति थार परोसि वरी है	२६१
जहाँ जहाँ नैना लगत तहाँ	२६८

जागत सब निसि कहाँ रहे	२६०
जागे हो रैन सब तुम नैना	२४८
जागो कृष्ण जसोटाजू बोलै	२०४
जानि पाये हो लालन बलि	२४६
[ बलि बलि ब्रजनृपति कुँवर०	
जाहि तन मन धन दीजे जु	३१५
ज्येष्ठ मास सुभ पृथो सुभ दिन	१६७
जोपे श्रीविठ्ठल रूप न धरते	६३
जोरी सरस बनी	४०३

## झ

झडी मीठी बतियन हो लालन	३४१
झूलत डोल भाई नवरगीलाल	१४२
झूलत दोऊ लालन गिरिवर०	२१३
[ ए दोऊ झूलत०	
झूलत नवरग संग राधा गिरिव	२०२
झूलत पालने महारि सुत कर	१६
झूलत ब्रजराजकुँवर संग	२१२
झूलत भदनगोपाल हिडोरना	१६६
झूलत राधिका रस भरी	२१४

झूलत लालन गिरिधारी	२०३
झूलत सुरग हिडोरे राधा०	२१०
[ राधामोहन झूलत०	
झूलत हैं न दलात झुलावें	२११
झूलन आई ब्रजनारि गिरिधरन	२०५
[ झूलन आई ब्रजनारि०	
[ झुलवन आई०	
झूलो पालने बलि जाऊँ	१४
[ पालने बलि जाऊँ०	

## ट

टेरत ऊँची टेर सब ग्वाल	३३०
------------------------	-----

## ठ

ठगति जुवति जन काँहू महा	१४०
ठगोरी घाली री मेरो मन	३७३
[ तें ठगोरी घाली री०	

ठाढे कु जभवन	४०६
ठाढे खरिक द्वारे नैननि ही मे	३७४
ठाढे हैं दोड भैया सिवपोरि	३७५

## ड

डोटा दोड राड के खेलत	११६
----------------------	-----

## त

तत्र तें रूप ठगोरी परी	१७६
तलप रची नव कुज सदन में	५२३
तुम चले साहु टोटा अपने मग	३३
तुम् देखो माई रथ बैठे नंद०	१७०
तुम देखो माई हरि जु के रथ	१६६
[ देखो माई हरिजु०	
तुम पेंडोई रोकें रहत कैसेऊ	४०
तुम ब्रजरानी के लाला अहो	१८
तू आजु देखि री मदनमोहन ए	२३८
तू चलि बोली री नंदकुमार	२२०
तू चलि सखी री सिंगारहार	४७७
[ चलि सखी री०	
तु तो प्रीत की रीति न जाने	१३७
तू मनायो मानि भामिनी	४६२
तू मोहि कित लाई इह गली	४१४
[ अरी तू मोहि०	
[ इह गली मोहि०	

तू मोहि ले रथ बैठे री मैया	१७१
तेरी हौ बलि बलि जाऊ	४५१
[ तुम्हारी हौ बलि०	
[ गिरिधरन छवीले०	
तेरे सुहाग की महिमा मोपे	४६४
तेरो मुख प्यारी जैसो सरद	४६६
तेरो रूप री अनूप बन्यो स्याम	४६७
ते कछु घाली री ठगोरी ए री	२६८
तें कछु घाली री ललन सिर	४७०
[ मोहन सिर मोहनी ते०	
तें मोहन कौ मन हरयो तो	१३४
[ प्यारी तें लालन कौ मन०	
[ तो बिन रह्यो न जाइ०	
तें री मोहन मन हरि लियो	३४०
[ प्यारी ते री०	
तैंसोई वृंदावन तैसीये हरित	२१५
तोहि मनावन लाल	३१६

## द

दपति मूलत सुरंग हिंडोरे	२०६
[ मूलत सुरंग हिंडोरे०	
दपति रंग भरे बैठे कुजमहल	४०७
[ बैठे री कुंज महल०	
दधि न बेचिये हमारे कुल ए हौ	३४
[ तुम सौं सौं बार कही०	
दरस मोहि दीजे हो नदलाल	२७७
दरस मोहि दीजे हो महाराज	२२५
दिन दिन होत कंचुकी गाढी	१६०
दिन ही दिन हम आई गई	४४
[ अब कछु नई०	
दीजे मन मेरो जइये तहाँ मन	२४७
दुहुँ दिसि नेह उमगि धनु	१७६

देखत रूप ठगोरी लागी कौन	४५७
[ नैन रहे अरुमाई०	
देखि सखी बरसन लागी	१८०
देखि री देखि भवन सुखकारी	१२५
देखि री देखि हरि के महल	१४४
देखो जु मोहन काहु अवै मेरी	५३७
देखो देखो मुरली अकुटि नचा०	४१८
देखो बलि दाऊ सो भवन	५६०
देखो माई आवत है वनवारी	३७७
देखो माई उत घन इत नद०	१७८
देव जगार्वात्त जसुदा मैया	८४
देहो लाल ईदुरियाँ मेरी ए	५४२
दोऊ मिलि क्रीडन कुंजमहल	५२४
दोऊ मिलि मूलत कुंज कुटीर	२०८



## ध

धनि धनि वृ दारण्य कुशगिनि ५५७  
धनि धनि ब्रज बरसानो गाम २३

धनि धनि हो हरिदास राई ५५७

## न

नचवत गोद ले गोविंद ५२६  
नटवर झूलत सुरग हिंदोरे २०१  
नवनिकुञ्ज नाइक नंदनदन ५२५  
नवनिकुज बैठे पिया नव १३६  
नवल कन्हाई हो प्यारे ऐसो १०७  
नवल कुंवर ब्रजराइ के लाल ११७  
नवल नाइक नवल नाइका २७१  
नवल नागरी संग नवल नागर ३६६  
[ प्यारी नवल नागरी०  
नवल निकुज सहल रस पूजति ३१७  
नवल हिंदोरना हो झूलत १६५  
नाचत गोपाल संग गोप कुंवरि ६२  
[ नृत्त गोपाल संग०  
नाचत दोउ रंग भरे ६०  
नाचत नव सिंगार मूरति ब्रज० ५३  
नाचत लाल गोपाल रास में ५७  
निर्तत कुसुमित बन सु दर ३२६  
निर्तत मोहन रसिक सखन ३६२  
निर्तत रस दोउ भाई रंग ३२६  
निसि के उनीदे अति छुबि २७६  
निसि दिन बल्लभ बल्लभ ५६२

नेकु चिते चले री लालन २६६  
नेकु सुनावो हो मोहन मुरली ४१६  
नेन छुबीले तरुन मदमाते ४४५  
[ छुबीले तरुन नेन मद०  
नेन निरखि अजहूँ न फिरे री ३००  
नेननि लागी हो चटपटी ३०१  
नेना बरजो न माने ४५५  
ने ना ठग लिये मेरे ३००  
ने ना डीठ भए मदनगोपाल ४५४  
नृत्त गोपाल संग राधिका ६५  
नृत्त रास रगा रसिक रस ५६  
[ रसिक रस भरे०  
न द के डोटा आजु भयो ७  
नंठ के लाल गोवर्द्धन वारधो ७३  
न द न दन वृषभानु नदिनी १०८  
न द न दन सुरभी संग आवत ३७८  
न द महारि घर आजु बधाई ४  
न दरानी मधि पि आवत धैया २८१  
न दलाल संग नाचति नवल ६३  
[ सुधर नदलाल०

## प

पक्व खजूर जबू बदरी फल ५३०  
परिवा प्रथम कु वरि कों देखन ११८  
पलना झूलत बाल गोपाल १५  
पवित्रा पहिरत गिरवरधारी २१७  
पवित्रा पहिरे श्रीगिरधरलाल २१६  
पवित्रा पहिरे श्रीविठ्ठलनाथ २१६

पवित्रा श्रीविठ्ठल पहिरावत २१८  
प्रगटी श्रीवृषभानु दुलारी ००  
प्रगटे मथुरा माँक हरी ८  
प्रगटे श्रीवामन अवतार ४८  
प्रगटयो राम कमलदल लोचन १५१  
प्रथम गोचारन कौ दिन आज ८१

प्रथम गोचारन चले गोपाल	८२
प्रनमामि श्रीमद् विठ्ठलम्	६६
प्रात उठे गोपी न्वाल जघ	२२६
प्रात समें उठि जननि जसोदा	२६६
प्रात समें कहा रोकि रहे जू	२८१
प्रात समें स्यामा दर्पन ले अरस	२४१
प्रेयसी मनावत कुंजविहारी	१०६
प्रीतम प्रीति ही तें पैये	३४३
प्यारी के मदल तें उठि चले	२४२
प्यारी कौ मान मनावन आप्	१०८
प्यारी री बदन कमल तेरो	४७१
प्यारी री लालन आप् तिहारे	१०६
प्यारी रूसनो निवारि	४८४
[ रूसनो निवारि०	

पावस नट नटघो अखारो	१८१
पिय जु करत मनुहारी समुक्ति	३१५
पूजन चलो हो कदब बनदेवी	२५७
[ आबो हो कोठ हमारे संग०	
पोढे दोऊ कुसुम पर्जक	११६
पोढे दोऊ कुंजमहल मनभावन	१२८
पोढे माई स्याम स्यामा संग	१२७
पोढे स्याम जू सुख सेज	११५
पोढे माई ललन सेज सुखकारी	१२६
पीवत नैन अघात मनमोहिनी	४३०
[ मनमोहिनी अँग०	
[ मदनमोहिनी संग०	

## फ

फूलन की मंडली मनोहर बैठे	१४८
--------------------------	-----

फूलन के कु जन में फूले फूले	१५
-----------------------------	----

## ब

बड़ी बड़ी अँखियाँ नींद भरी	२७३
बढ़ैया लावी मोर चकोरा	१३१
बदन कमल ऊपर बैठे री	४३६
बदन सरोज ऊपर मधुपावलि	२६६
बधाई बाजल रावलि माँझ	२१
बधावो श्रीदसरधराड केँ	१५३
बन तें बने माई आवत	३८०
बन तें बने आवत ब्रज	३७६
बनी मोहन सिर पाग	४४६
बने हैं आली सुभग विसाल	४४४
बरजत क्यों जु नहीं हो लालन	३४४
बरजि बरजि सुत अपनो री	१४३
बरजो जसोमति अपनो लाल	१३६
बरसाने हमारें रजधानी हो	१५६
ब्रज जन भयो मन आन	१७

ब्रज जन लोचन ही की तारो	७५
ब्रजबधू हरि दरसन कों आई	२३१
ब्रज में अति आनंद बढयो हो	१२
ब्रज में एक बढो है गाम	७०
ब्रजरानी री तुव कुँवरवर	३८२
बल मोहन खेलत दोठ भैया	१३२
बलि बलि आजु की दानिक	३०३
बलि बलि पाउँ धारिये आजु	२४
बलि बलि बलि लाल की	४३१
बागो लाल सुनहरी चीरा	२७०
दानिक घनि ठनि ठाढे मोहन	३४५
बावरी भई री त्रिय उन सों	४८२
बाल केलि घनस्याम की	१३३
विजय टसमी अरु विजेँ महूरत	११
विधाता विधि न जानी	४५८

बिनु देखे मोहन कछु न सुहाय	३४६
बिमल कद ब मूल अक्लवित	३२६
[ विविध कदब०	
विराजत स्याम मनोहर प्यारी	१०६
बूझत जननी लाक कहा दीनो	७६
[ पूछत जननी०	
वृषभानु नदिनी गिरिधरन	३०७
वृ दाबन अद्भुत छवि नाचत	१८७
वृ दाबन कनक भूमि निर्गत	१६८
[ श्रीवृ दाबन०	
वृ दाबन भूलत गिरिवरधारी	१६८

वैठे गोवर्द्धन गिरि गोद	२८७
वैठे वेनु वाजत री मोहन कल	४२०
वैठे दोउ कुक्षमहल पिय प्यारी	४०६
वैठे दोउ कुक्ष मंडप पिय प्यारी	४०१
बोलत चलि ब्रजराज कुँवर	४७६
बोलत धेनु गोवर्द्धन गिरि	३८१
बोलत नद कान्ह कहि बानी	२६१
बोली बोली काहे जिन करो	३
बोहोत रही समुझाइ मनाथो	५०७
बदौ श्रीविठ्ठलचरणम्	६८
बंसीबट के निकट हरि भूलत	२००

## भ

भले कहत लालन राग केदारो	४२२
भाई द्वैज जानि जसुमति	८०
भादों की राति अँधारी	११
भोजन करत हैं नंदलाल	२६३

भोजन करें श्रीराधिका रवन	२६४
भोर भए उठि सोवत सुत कों	२२१
भोर भए सुनरहु श्रीवल्लभ	५६१

## म

मदनमोहन कमलनेन नृत्त रास	५५
मदनमोहन पिय भयो न भोर	२२८
मदनमोहन बन देखत अखारो	१८२
मदनमोहन वैठे मजुल कु ज मंडप	४०४
मदनमोहन लाल अजुज नेन	३८
मदनमोहन संग मोहिनी और	५२०
मदनमोहना रसमत्त पियारो	१२८
मनमोहन लखना मनु हरयो हो	१२६
मनाथो न माने राधा प्यारी	५०४
महरि तू बढभाग जाके मोहन	५३४
महरि पूत तेरो कैसेऊ वरज्यो	५४६
[ कैसेऊ वरज्यो न०	
महिमा धनि धनि तुव महि	४२३
माई नीके लागें दुलह दुलहनि	१२०
माई री आजु मनमोहन पिय	३३६

माई री रोहिनी नंद बिराजे	१०४
माई हम न भई बढ भागिनि	३४७
[ हम न भई बढ०	
माखन तनक देरी माइ	२८३
मान गढ़ क्यों हू न दूटत	४८३
[ अबला के बल कौ प्रताप मान०	
मान छूटि गयोरी निरखत	५१०
मान तजि वौरी ए री नदलाल	४६०
मान न कीजै री पिय सों बाबरी	४८६
[ बाबरी मान०	
[ आउ री मान०	
[ मानि री मान०	
मानिनी मानि सेरो कह्यो गोपी	४८५
मानिनी मानि री मोहन द्वारें	२५४
मानि मानिरी मोहन आपु मना	५०५

निम्नि निम्नि को नृजन्तु कर्मिण	३
निम्ने वीर कुंजमहल नमनावन	२१३
निम्ने निम्न नरकरी गली	५११
नांदी नांदी बदिपनि हो लालन	३१२
नांदी ही गौरन नेरो स्वालिनी	४२
नुल लो नुल निलाइ डेवन	५०१
मुर्ली अल अवर घर अवन	३२३
मेरो वन नन घन श्रीवस्तन	१६४
मेरो प्रान जीवन गोविदा	२२६
मेरो विहल से प्रभु लमान और न	६६
मेरो मन अदक्यो श्रीवस्तन लो	१६२
मेरो नन मोहो री इन नागर	३६०
मेरो रामलला को मोहिलो लुन	१६२
मेया मोहे नावन निश्री नावे	३६७

मेरो ननुही शैतिक लालन	४३०
[ जगु की दानिके	
मोहन विलक गेरोवन मोहन	३२४
मोहन देखो बलन हनाने	२५२
मोहन नेनन ते नहो अवन	३५६
मोहन नधुरे प्रान्त श्रेनु	३२१
मोहन नावन घोरी करत	५५७
[ शरज्यो रानी जू मोहन०	
मोहन लुखारविद पर मननप्र	४४०
मोहन मोहिनी घाली री मिर	३१०
मोहन मोहिनी भो पर घाली	५६६
मोहन लाल की बलि जाड	४३३
मोहे नंदलाल अगौरी नाई	१७३

र

रुद्धा बौधति जजोद मेया	२००
रति रस केलि विलाम हास रंग	२५६
रथ की सोना जात न बरनी	१६२
रथ पर बैठे नवनमोहन पिघा	१७०
रस नरे वंपति कुंजमहल में	३६२
रस भरे पिय प्यारी बैठे कुपुम	१४६
रसिक कुंवरि बनि जाऊँ	४२७
रसिक सिंगेननि गरा कल्यान	४०४
रखो मोहि श्रीवस्तनप्रह भावे	५६६
राइ गिरिधरन नग राधिका	५२१
राखी हो अलक बीच वंपकली	४५०
राखी राखो हो अजनाइक	७२
राजत वंपति कुंजमहल में	५१६
राधा गिरिधर बिहरन कुंजनि	१०७
राधा गिरिधरलाल मिनि देडे	१४७

राधारवन सुभाइ कहो सुनि	१६०
राधे तेरे गावत कोकिला गन	३६१
[ प्यारी राधा तेरे०	
रितु बसंत विहगत अजसुंदरि	१०३
रितुराज नृप घर बसंत श्यागे	१०२
रूप रस छाक्यो कान्ह करत न	११६
रे मन भज श्रीविठ्ठलनाथ	५७०
रेनि विदा भई मेरे प्यारे	२३०
रग भरे नाचत गिरिधारीलाल	५४
रग मच्यो सिंध द्वार हिंडोरे	१६४
[ हिंडोरेडव भूलना०	
[ शहो भूलत मेरो लाल रग०	
रग महल में रगालो लाल	४०२
[ कुंज महल में०	

## ल

लहरिया मेरो भीजेगो वह देखो	१८५
लाडिले लाल की बदासे कहि	४५२
लाडिलो बन ते बने आवत	३८५
लाडिलो लडचाइ बुलावत धेनु	१६२
लाडिलो लाल खेलत री वृ दा	५४४
लालन के खेलत रग रह्यो हो	११५
लालन गिरिधारी नवल कुज	३६५
[ बने लालन	
लालन जही जाओ जाके रस	२४५
लालन झौंडो हो बरिआई दान	३१
लालन नाहिने री काहू के बस	३५२
[ प्यारे लालन०	
लालन पहिरत हैं नवचदन	१६०
लालन बहुत मनुहार करी	२५३
[ बहुत मनुहार करी०	
लालन बैठे कु जथली	२११

लालन मनायो न मानति	२००
[ प्यारे लालन०	
लालन मुख की लुनाई कैसेउ	४४१
लालन मुख वेनु बाजें मद मद	४२१
[ मोहन मुख वेनु०	
लालन मुरली नेकु बजाइये	३२५
लाल मेरी सुरग चूनरी देहु	१८८
[ सुरग चूनरी देहु०	
[ पिय देहा०	
लालन सिर घाली हो ठगोरी	३०५
[ मोहन सिर०	
लाल लाडिली सुजान रूप	४१७
लीजे मोहि बुलाइ श्रीवल्लभ	५६६
लेहु बलाइ लाडिले तेरी भोजन	२६०
लेहो बधाई मन माई अब नदपूत	६

## व

वल्लभ खेले हो अति रस रग	१०३
वल्लभ लाडिले हो तिहारै	६७
वल्लभ श्रीवल्लभ श्रीवल्लभ	५६३

विष्णु हरन चक्रधरन चरन	१
बिहरत बन सरस वसत स्याम	१०६
वे देखियत हमारे गोकुल के	५५८

## श

श्रीगिरिधर मुख प्रातकाल देखों	२३६
श्रीगोकुलपति नमो नमो	१०
श्रीगोवर्द्धनराइ लला	१०६
श्रीजमुना अधम उधारनी कै	५४८
श्रीजमुना यह बिनती चित	५५४
श्रीमद्वृ दावन बिधु प्रगटत	१५६
श्रीमद्वल्लभ न दनाआन ट	६५
श्रीलच्छुमन गृह मगलचार	१०६
श्रीवल्लभ के नदन फिरि आए	८६

श्रीवल्लभग्रह होत बधाई	८७
श्रीवल्लभचरन लग्यो चित	५६८
[ चरन लग्यो चित०	
श्रीवल्लभ न दन रूप अनूप	१००
श्रीवल्लभ वृ दावनचद	१५७
श्रीवल्लभ सदा विराजमान	५६७
श्रीवल्लभ सुत विटलेश पद	५७१
श्रीविटल चरन सरन मन	६४
श्रीविटलराज कुँवर श्रीगिरिधर	८५
श्रीविटलेश प्रभु समर्थ निज	५७२

सखी आज़ु मोहन अति घने	४३४
सखी नंदन दन आज़ु अति विराजे	४३६
[ नद नदन आज़ु०	
सखी हो कान्ह अचगरो दानी	४३
सघन कु ज की छाँह मनोहर	३१०
सघन घटा घनघोर नेन्हीं नेन्हीं	१७६
[ नन्हीं नन्हीं बू दति हो०	
सदान द मुख अनल आन डमय	१५८
सब ब्रजकुल के राइ लाल	१०५
सब ब्रज कौ सिरताज नंदसुत	१०३
सब मिलि गावो आज़ु बधाई	१५५
सरस नयन तेरे री सनमुख आइ	४६६
सरस हिडोरना हो झूलत कु ज	२०४
स्याम देखि नाचे मुदित वन	१८६
[ देखो स्याम०	
[ नाचे मुदित नचावें मोर०	
स्याम रँगीली चूनरी रग रँगी	१३५
स्याम रग स्याम जेँ रही री जमुने	५५३
स्याम रूप चरि चरि आई जव	४५६
स्याम सु दर वन खेलत सखिन	५४५
स्यामा स्याम टोऊ कु ज मे	५१८

सिंहपौरि ठाडे मनमोहन द्विज	२२१
सीतल उर्सार ग्रह छिरकौ गुलाब	१६४
सुनियत रावलि होत बधाई	२०
सुनि सखी सुपने की कहुँ बात	२६४
सुनु री स्यामा चतुर सयानी	४८८
सुपन में सगरी रँनि गई	१६३
सुपन में स्याम संजोग भयो	२६५
सुरपति लाग मेदि गोवर्द्धन	६८
सु दरता की एरी हट	३६१
सु दर सब अग अग रूपरास	४३७
[ अग अग रूपरास माई०	
सु दर सुभग तरनि तनया तट	१२४
सेत अँगिया तामें कीनी	५०१
सोभा कहि न जाइ वन तें	३८६
सोभित सुंदर मृदुल गड	३८७
सोहत कनक कुसुम करन	३८८
[ सोभित कनक०	
सोहत गिरिधर मुख मृदु हास	२८६
सोहत नासिका गिरिधर गल	४४६
सोहत लाल पाग साँकरे पेचन	३६०
सदेसे कैसे हो प्यारे ललना	३५४

ह

हटरी ब्रैठे श्रोगोपाल	६६
हमहिं ब्रज लाडिले सो काज	५७३
हमारौ दान देहु सकु वारी	२४
हरि मुख निरखि निरखि न	०४०
हरि सौं टेरे कहत ब्रजवासी	७१
[ कान्ह सौं टेरे०	
हरि सौं कैसे मान छपीली	४८६
हंसत हंसत लालन आये री	३५५
हसि पीक दारी हो मेरे अचरा	४१३
[ हौं जु चली जाति ही गली०	

हिडोरे झूलत पिय प्यारी	००७
हिडोरे माई झूलत गिरिवर	१६७
हिडोरे माई झूलत न टकु वार	१६६
हिडोरो फूलनि कौ	२०६
होरी खेले गिरधारी	१२२
हौं तेरे वारने जाऊं महरि	२५५
हौं तोसों सब कहाँ कहाँ	४६४
हौं नीके जानत री आली तेरे	३०६
हौं बलि निर्वत मोहन जति	३३३
हौं बलि बलि जाऊं कलेऊ	२३४

आजु बने री लालन गिरिधारी या वानिक पर बलिहारी<sup>१</sup> ।  
 चंपक भरी कुलह सिर लटकत कसुंभी पाग छवि भारी ॥  
 बरुनी पीत स्याम अंग अरगजा मोजे देखि<sup>२</sup> मनमध मनुहारी ।  
 'गोविद' प्रभु रीभि वृषभान नंदिनी कंचुकी छोरि भरत अंकवारी ॥

---

卐 यह पद भोग के पदों में छपने से रह गया है जो यहाँ दिया जा रहा है । पद सख्या ५७५ दी जा रही है, किंतु वस्तुतः इसे पद सख्या ३५५ के आगे पढ़ें ।

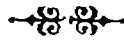
१ बलि बलि जाऊँ (क, ग) २ देखत (क)

विशेष—

पद प्रतीकों के नीचे जो कोष्ठकान्तर्गत [\*\*\*] प्रतीक दी गयी है, वे उनके पाठान्तर हैं, अर्थात् वे पद इन प्रतीकों से भी प्रारम्भ होते हैं ।

—सम्पादक

# गोविन्द स्वामी



## वर्षोत्सव



मंगलाचरणा—

१

[ विलावल ]

विघ्नहरन चक्रधरन चरनकमल वंदे ।  
कमलापति कमललोचन मोचन दुख द्वंदे ॥  
ज्यो ज्यो हरि गोप भेख अरि निकंदे ।  
'गोविंद' प्रभु नंद सुवन जसुमति जदुनंदे ॥



## जन्माष्टमी ( बधाई )—

२

[ दवगंधार ]

आजु ब्रज भयी है सफल आनंद ।

नंदमहर घर टोटा जायौ पूरन परमानंद ॥

मंगल कलस विराजत द्वारें गावत गीत आनंद ।

नाचत तरुन और गोप सब प्रगटे गोकुलचंद ॥

विविध भाँति बाजे बाजत है निगम पढत द्विज छंद ।

छिरकत दूध दही घृत माखन प्रफुलित मुख अरविंद ॥

देत दान ब्रजराज मगन मन फूल अग न माइ ।

देत असीस जियो जसुमति सुत 'गोविंद' बलि बलि जाइ ॥

३

[ गोरी ]

जसुमति उदर उदधि आनंद करि बल्लभकुल कुमुद विकासी हो ।

रूप किरनि बरसत ब्रजजन के नैन चकोर हुलासी हो ॥

राका राधापति परिपूरन षोडस कला गुन रासी हो ।

बालक वृंद नछत्रन मानों वृंदावन व्योम विलासी हो ॥

दिवस विग्रह रति ताप नसावत पीवत नैन सुधा सी हो ।

हरत तिमिर सब घोख मडल कौ 'गोविंद' हदै जोन्ह प्रकासी हो ॥

१ नैनन कोटि सुधा सी हों (क) २ रत (ख ग)

३ देखन मानों हुलासी हो (क)

४

[ देवगधार ]

नंदमहर घर आजु बधाई ।

जसुमति उदर उदधि विधु प्रगटे सकल कला सुखदाई ॥  
नाचत सब मिलि करत कुलाहल आनंद मंगल गाई ।  
ब्रजजन देत विविध पट भूखन फूले अंग न समाई ॥  
आँगन मोतिन चौक पुरावत बंदनवार बँधाई ।  
हरखि निरखि 'गोविंद' मगन मन बहु न्यौछावर पाई ॥

५

[ अड़ानो ]

आजु बधाई नंदमहरि घर ।

जसुमति रानी कूख मिरानी प्रगट भए गिरिवरधर ॥  
गोपी ग्वाल नाचत गाधत सब छिरकत हरद दही आनंद भर ।  
उमह्यो गोकुलराइ भवन में देखत स्याम सुंदरवर ।  
नंद उदार अपार दान दे भूपन बसन हाटक जु धेनु घर ।  
'गोविंद' को इह मांग्यो दीजे निरख्यो ललना पलना पर ॥

६

[ दरवारी कान्हरो ]

मिलि मिलि यो गूँजत आँगन नंद के बधाई ।

घर घर गोपी ग्वाल नाचत छिरकत दधि

और हरद मंगल भई सवन मन भाई ॥

मानसरोवर हंस से राजत विप्रनि दान देत कौन अघाई ।

'गोविंद' प्रभु की उपमा कहा कहें तीन लोक कीरति गाई ॥

७

[ देवगंधार ]

नंद के ढोटा आजु भयो ।

घर घर उच्छ्व उज्ज्वल मंगल छिरकत हरद दह्यो ॥  
 अति आदर सों विप्र बुलाए तर्पन पित्रनि दयो ।  
 देखत सिव ब्रह्मादिक मुनि मब जै जैकार कह्यो ॥  
 मगन भए ब्रज नंद जसोदा प्रेम सों गोद लयो ।  
 'गोविंद' प्रभु की लेत बलैयाँ निरख सिरात हियो ॥

=

[ बिलावल ]

प्रगटे मथुरा मांझ हरी ।

मात तात हित पुत्र रूप मिस अपनी प्रतिग्या करी ॥  
 स्याम वरन बपु उर पर भृगु पद जटित कंचन जैसे क्रीट खरी ।  
 दोऊ भुजा धन माला संख चक्र गदा पद्म धरी ॥  
 परम पुरुष भगवंत जानि जिय वसुदेव मन खल भीति करी ।  
 द्वार कपाट भेदि चले ब्रजपति तब सुर कुसुमनि वृष्टि करी ॥  
 जै जै सब्द निसान बोलि दुज ब्योम विमाननि भीर भरी ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधरन जसोमति भक्त हेत आये नंद घरी ॥

६

[ बिलावल ]

लेहौं बघाई मन भाई अब नंद पूत सुनि आयो ।  
 मब ब्रज कुल के प्रान जीवन धन तुम्हरी गोद खिलायो ॥  
 महा भागि ब्रजराज तुम्हारे बड़े बम में बंस बढायो ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधर रानी सुत देखत हियो सिरायो ॥

१०

[ गौरी ]

श्रीगोकुलपति नमो नमो ।

भक्त हेत प्रगटे ब्रजमंडल नंदनंदन जै नमो नमो ॥  
 तृन घन स्याम लाल बलि सुंदर वंक विदरन नमो नमो ।  
 सकट विभंजन बच्छ विमोचन निज जन पोषन नमो नमो ॥  
 तृन चक्र मारन अधम उधारन विस्व पद दरसन नमो नमो ।  
 काली मर्दन दावानल अर्दन जमुला तारन नमो नमो ॥  
 ब्रजे फलदायक सब जग लायक वरन विमोचन नमो नमो ।  
 सुरपति मान हरन ब्रज रच्छि गोवर्धन धारन नमो नमो ॥  
 ब्रज वनिता मन रंजन कारन रास विलासी नमो नमो ।  
 तृन चक्र नायक सब सुखदायक कोटि मदन छवि नमो नमो ॥  
 वंसीधारी कंस प्रहारी जग दुख हारी नमो नमो ।  
 सबगुन पूरन जै सु बलि 'गोविंद' प्रभु जै नमो नमो ॥

११

[ कान्हरो ]

भारों की राति अँधियारी ।

संख चक्र गदा पद्म विराजत मथुरा जनमु लियो बन्नवारी ॥  
 बोलि लिये वसुदेव देवकी बालक भयो परम रुचिकारी ।  
 अब ले जाहु याहि तुम गोकुल अधम कंसकी मोहि डरु भारी ॥  
 सोवत स्वान पदरुवा चहुँ दिसि खुले कपाट गई भौ न्यारी ।  
 पाछें सिंह डहारत दूकत आगे है कालिदी भारी ॥  
 जब जिय सोच करत ठाडे हूँ अब विधि कहा विधातः ठानी ।  
 कमल नैन कौ जानि महातम जमूना भई चरन तर पानी ॥  
 पहाँचे हैं ग्रह नंद गोप के जन की सकल व्यापदा टारी ।  
 'गोविंद' प्रभु बडभागि जमोदा प्रगटे हैं गोवर्धनधारी ॥

ब्रज में अति आनंद बह्यौ हो नंदराइ के द्वार ।  
 संत जनन सुख दें कों जग प्रकटे नंदकुमार ॥  
 घर घर तें सुंदरि चलीं मजि भूपन वमन विंगार ।  
 नंद गोप ग्रह ध्रावें सब मिलि गावत मंगलचार ॥  
 धनि गोकुल धनि ब्रज के बासी उदए त्रिभुवननाथ ।  
 गर्ग आचारज पाँव धारे लिखी जनम की पाँति ॥  
 नहीं त्रिलोक को उऐमो वा की उपमा कहिय न जाति ॥  
 भादों माम वदि अष्टमी रजनी जुग जाम ।  
 अति पुनीति सुभ नच्छित्र रोहिनी नामकरन श्री स्याम ॥  
 चिरुजीयो तेरो बालक जुग जुग सब मिलि देत असीस ।  
 गुपत बात यह गर्ग कही तब परम पुरुष जगदीश ॥  
 ठौर ठौर ते कौतिक माच्यौ गावत गुन गंभीर ।  
 ताल मृदंग उपंग संख धुनि बाजत रस मंजीर ॥  
 हरद दूध दधि माखन ले ले छिरकत मुदित अहीर ।  
 गावत अति आनंद भरे मानों बहे चले सरिता नीर ॥  
 सबै करत मानों चहुँ वेद धुनि वंदीजन मिलि गाइ ।  
 ब्रह्मा भाट ग्वाल सकल मिलि घेरि लीयो नंदराइ ॥  
 कोउ पाउँ कों पलोटि पकरै परसत दाएँ हाथ ।  
 देहो बधाई तब हम चलिहैं नंदराइ मुसिकात ॥  
 कपिला धेतु कनक सिंगी नाना विधि के दान ।  
 श्रीफल को फल देत सबहिन कों देत हैं वीरा पान ॥  
 परम मुदित सकल सुर नर मुनि पसु पंछी तरुपात ।  
 नंद सुवन को सुजसु सुनि सुनि कें 'गोविंद' बलि बलि जात ॥

१३  
जनम लियौ जादौकुल राई ।

[ कान्हरो ]

कार करुना वसुदेव देवकी अद्भुत बालक दरस दिखाई ॥  
 अंबुज नैन अमोल मृकुट सिर रतन जटित कुंडल छवि पाई ।  
 कोमल अलक स्याम घन सुंदर श्रीलच्छन उर सोभा भाई ॥  
 कौस्तुभ मनि पीतांबर पहिरे चारचौ भुजा संखादि धराई ।  
 कटि किंकिनी कर कंकन अंगद वनमाला पदकमल लुभाई ॥  
 कोटि चंद्रमा उदयो सूरज मन का तपति मिटाई ।  
 मात तात आस्वादन करिके प्राकृत होई चले ब्रज धाई ॥  
 माता तात छुड़ाइ बंध ते गोपुर दिये किवार खुलाई ।  
 सेस सहस्र फनि वूँद निवारत जमुना चरन परसि भई थारी ।  
 ले वसुदेव गए गोकुल में नंद ग्रह निकसे जु आई ॥  
 निज सजोग जोगमाया ले याहि मथुरा देहु पठाई ॥  
 जागत उमगी उठति जब जसोमति नंदमहर को लिए बुलाई ।  
 जै जैकार भयो गोकुल में ब्रज जन आनंद उर न समाई ॥  
 गोपी ग्वाल गोप सब ब्रजजन मानो रंक निधि पाई ।  
 हरद दूध अच्छित रोरी सों कंचन थार भराई ॥  
 बाजत ताल पखावज मुरली दुंदुभि महुवरि सब्द सुहाई ।  
 नंदराइ ग्रह होटा जायौ दाध ले छिरकत करत बघाई ॥  
 धुजा पताका तोरन माला घर घर मंगल कलस धराई ।  
 चित्र विचित्र किये प्रमुदित मन माखन दधि के माट भराई ॥  
 तब ब्रजराज गोप सबभिलि के अति आदर मो विप्र बुलाई ।  
 रतन भूमि मंगाइ दान दे के आसिस वचन पढाई ॥  
 इहि विधिभयो महोच्छ्रव ब्रज में सुर समाज कुसमनि वरमाई ।  
 सचि पति आदि विरंचि देवता चहि विमान कियौ अंबर छाई ॥  
 'गोविंद' प्रभु नंदनंदन पर सनमथ कोटिक रहे लजाई ।  
 श्रीविठ्ठल पद रज प्रताप बल यह लीला संपति में गाई ॥

पलना—

१४

[ रामकली ]

भूलो पालने बलि जाऊँ ।

स्यामसुंदर कमललोचन निरखि अति सचु पाऊँ ॥  
 अति उदार विलोकि आनन पीवत नाहिं अघाऊँ ।  
 चुटकी दै दै नचाऊँ हरि कों चूमि चूमि उर लाऊँ ॥  
 रुचिर बाल विनोद तिहारे निकट बैठी गाऊँ ।  
 विविध भांति खिलौना लै लै 'गोविंद' प्रभुहि रिभाऊँ ॥

१५

[ रामकली ]

पलना भूलत बाल गोपाल ।

भयौ कौन अमर मुनि जन निरखि गिरिधरलाल ॥  
 सेत कुलही सीस राजति सोभित घुंघरे बाल ।  
 चिबुक अलकाबलि अनुपम लटकै लटकन लाल ॥  
 कलगी तुरा कनक मनिमय तिलक मृग मदमाल ॥  
 स्रवन कुंडल नाक बेसरि स्याम बिंदुली गाल ॥  
 दसन द्वै दामिनी से दमकत अधर मृदुल प्रबाल ।  
 दिए अजन परम सोभित अंबुज नैन विसाल ॥  
 पीत भगुली लाल तनिर्या कंठ श्री उरमाल ।  
 कर कमल पोंहची मुंदरिया अंगद कंकन सु ठाल ॥  
 किंकिनी कटि तट चरन नूपुर सोभित ब्रज प्रतिपाल ।  
 माखन मेवा अरु मिठाई भरी कंचन थाल ॥  
 स्नेह सों असुमति खवावति गावति गीत रसाल ।  
 सुबल बालक वृंद किलकत फिरत टेरत ग्वाल ॥  
 कुमुदिनीगन ब्रजजुवति फूली देखि गोकुलचंद ।  
 निरखि 'गोविंद' बाल लीला भयौ मन आनंद ॥

१६

[ आसावरी ]

भूलत पालनें महरिसुत कर लिये नवनीत ।  
 नैन अंजन भुव मसि बिदुका तन राजन पट पीत ॥  
 बेनी निरखत हरखत मन में कछुक होत भयभीत ।  
 दै करतारी वजावत गोपी गावत मधुरं गीत ॥  
 राई लोन उतारति वारति सवद होत जैसे जीत ।  
 पूरन ब्रह्म गोकुल में 'गोविंद' रसना कहौ पुनीत ॥

१७

[ आसावरी ]

ब्रजजन भयौ मन आनंद ।  
 जसुमति गृह पलना भूलत निरखि गोकुलचंद ॥  
 निरखि हरि की बाल लीला गावति गीत सुखंद ।  
 सुनत सिद्ध समाधि छूटी भई रवि गति मंद ॥  
 लज्जित कुसुमायुध निहारन सुखद मुख अरविंद ।  
 होत अद्भुत बाल ऊपर वारने 'गोविंद' ॥

१८

[ आसावरी ]

तुम ब्रजरानी के लाला अहो दधि मथति सुहाई के लाला ॥  
 दिव्य कनक कौ पालनो हो रतन जटित नग हीर ।  
 गज मोतिन के भूमका हो लाल ऊपर दच्छिन चीर ॥  
 घुटुरुवन चलत सुहावनो लाल पग नूपुर के नाद ।  
 कटि किंकिनी रुनुभुन करें हो लाल सुनत जननी आह्लाद ॥  
 आधे आधे वचन सुहावने लाल सुनत जननी मन मोद ।  
 मुख चूमत स्तन पान दै हो लाल लै बैठारति गोद ॥  
 काजर लोचन अँजि कै हो लाल भोंह मटुका दै वैठि ।  
 अपनो लाल काहू कों देखन न दै हो जिनि कोऊ लाओ डीठि ॥



तिलक खुन्धो गोरोचना कौ लाल घूँघरवारे केस ।  
 नन्हीं नन्हीं दतियाँ द्वै दूधकी हो लाल देखियत हँसत सुदेस ॥  
 कुलह सुरंग मिर ताफता की लाल भगुली पीत सुदेस ।  
 कंठ बघनां कर पोहोँचियाँ हो लाल सोमित सुंदर वेस ॥  
 प्रथम हनीं तुम पूतना हो लाल सकट भंजन तृन मारि ।  
 जमला अर्जुन तारिकें हो लाल अब किनि छाँड़ो आरि ॥  
 मेरे लाल की मइया ब्रजरानी बाप गोपकुल राज ।  
 धनि धनि तुम्हरो बलभद्र भइया करत सकल सुख काज ॥  
 मेरे लाल की धेनु अति बाढी चरन वृंदावन जाँई ।  
 पान्यो पीवै नदी जमुना कौ अंजन खरुवे खाँई ॥  
 मेरे लाल हो प्यारे लाल तुम कंस मारि गहि लेहु ।  
 मथुरा फेरो ब्रजराज दुहाई गोप सखनि सुख देहु ॥  
 लए उठाइ ब्रजराज गोद करि दै उगाल हृदै लाइ ।  
 बहुरयो लिए जननी गोद करि अस्तन चले है चुवाइ ॥  
 कहत जसोदा सुनो मेरे 'गोविंद' लेहु कनिया चढाइ ।  
 जो भूलो तो पालनं भुलाऊँ नाँतर आँगन वैठि खिलाइ ॥

१६

[ सारंग ]

### राधाष्टमी—

आजु वरमानें वजत बघाई ।  
 कुँवरि भई जो मातु कीरति केँ कीरति सब जग छाई ॥  
 कोटि रमापति रूप माधुरी नाञ्चै छवि समताई ।  
 धन्य भाग वृषभानु गोप कौ सुता अलौकिक पाई ॥  
 दधि हरदी कुंकूम लै छिरकत सब मिलि मंगल गाई ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधर की जोरी निरखि दास बलि जाई ॥

२०

[ दवगधार ]

सुनियत रावलि होत वधाई ।

प्रगट भई त्रैलोक बंदनी रसिक जनन सुखदाई ॥  
 देत दान वृषभानु भवन में जाचक बहु निधि पाई ।  
 मनि कंचन मुकता पट हीरा अरु नाना विधि गाई ॥  
 सब सखियनि मिलि गावति मंगल आजु अधिक वनि आई ।  
 कौन पुन्य कियौ तुम सत्या कुंवरि मनोहर जाई ॥  
 सुर नर मुनि जन परम मुदित भये नद रुचन मन भाई ।  
 'गोविंद दास' कहाँ लों वरनों आनंद उर न समाई ॥

२१

[दिवगधार]

वधाई बाजन रावलि माँझ ।

श्री वृषभानु गोप के प्रगटी मानों फूली साँझ ॥  
 गोपीजन आई चहुँ दिसि तें गावति मंगलचार ।  
 मंगल कलस कनक केसरि भरि वाँधी बंदनवार ॥  
 अच्युत दूव रोचना बंदन भणि भरि लीने थार ।  
 ब्रजवासी प्रमुदित मन डोलत जाचक भूखे द्वार ॥  
 हरखि निरखि देवगन कुसुमनि वरखत हैं आकास ।  
 तिहिँ औसर अपनो तन मन धन वारत 'गोविंददास' ॥

२२

[दिवगधार]

प्रगटी श्री वृषभानु दुलारी ।

नव नागर के बिहरन कारन विधना आप संधारी ॥  
 हितू संतत निच गावत हँसि हँसि देत क्लिकारी ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधर की जोरी प्रकट भई सक्कारी ॥

२३

[ देवगधार ]

धनि धनि ब्रज वरसानो गाम । जहाँ प्रगटी श्रीराधा नाम ॥  
 जहाँ बसे राजा वृषभान । नंदराय के जीवन प्रान ॥  
 जाके घर कीरति श्री रानी । ब्रज बनिताकी अति मनमानी ॥  
 तिनके उदर भई सकुंवारी । सकल कला गुन गति अति भारी ॥  
 अति आनंद भयो तिहि काल । आइ जुरी सब ब्रज की बाल ॥  
 मंगल कलस विराजत द्वार । गावति कर लै आई थार ॥  
 घर घर बंदनवार बँधाई । सब मिलि आनंद करत वधाई ॥  
 पंच सब्द वाजत हैं आँगन । विप्र आदि आए सब माँगन ॥  
 देत दान वृषभानु उदार । भुखन बसन अनूपम हार ॥  
 छिरकत दूध दही अति रोरी । एक एक काढी रस बोरी ॥  
 जानत नार्ही, कछू मगन मन । भूपन बसन सँभार नर्ही तन ॥  
 सबै असीस देति मुख देखत । फिरि फिरि श्रीराधा तन पेखत ॥  
 चिरुजीयो अब ए सकुंवारी । जाके दूलह श्री गिरिधारी ॥  
 नंद गोप के अति बड़ भाग । या के राधा सों अनुराग ॥  
 इहि विधि आनंद सरिता बही । कुंवरी कृपा तें ते सब लही ।  
 बहुत भाँति यह लीला गाई । 'गोविंद' तहाँ न्यौछाबर पाई ॥

२४

[ ईमन ]

दा॥—

हमारो दान देहु सुकुंवारी ।

बिनु दिए कहाँ भजिय जाति हा धाइ गही है सारी ॥  
 दूर रहो हमते मनमोहन देहों तुमको गारी ।  
 मोपे दान कहाँ कौ लागै कहो वृंदावन वारी ॥  
 हँसि दियो नंदलाल लाडिले मगन भई ब्रजनारी ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय को दै सर्वसु कीन्ही जो मन मानी ॥

२५

[ ईमन ]

\* घेरो घेरो ब्रजनारी । जान ज्यों न पावें—  
 चलिये जात ऊतर नहीं देत लेउ<sup>१</sup> छिनाइ<sup>२</sup> मटुकिया—  
 सीस ते<sup>३</sup> आर ढीठ देखियत भारी ॥  
 खिरक दुहाइ गोरस लिए जात अपने अपने भुवन जाकों—  
 दान माँगन जैसे काहूँ लादी हैं लोग सुपारी ।  
 'गोविंद' प्रभु आए अनोखे नए दानी—  
 चलो जु चलो बुलावत<sup>४</sup> घर के लाल विहारी ॥

२६

[ केदारो ]

गुजरिया । गरब गहीली ऊतरु नाहीं देति—  
 चलति गज गति गोरस की माती अति रँग भरिया ॥  
 दिन दिन दान मारि गई जु हमारो तब कबहुँ पाले नहिं परिया ।  
 'गोविंद' प्रभु कहै सखनि सों घेरो घेरो तब धाई<sup>५</sup> अंचलु धरिया ॥

\* जान ज्यों न पावें.. ...ऐसा भी आरंभ है ।

१ छिनाइ ( क. ग )

२. करते मटुकी और सीस ( क )

३. घरकों ( क )

४ तु गरब ( क )

५. चली जाति गोरस की माती अपने रँग ( ख )

६. मारि गई है हमारो जो कबहुँ ( क )

मारग गयी यह मग ऐसी कबहुँ ( ख )

७ कहत सयाम सों घेरो घेरो तब धाई अंचल भरिया ( ख )

८. धाय स चल गहिया ( ग )

२७

[ सारंग ]

गुजरिया बावरी भई केउ बेर गई दान मारि ।  
 आजु भइन पाई नंद की सौं लैहौं दिन दिन को निरवारि ॥  
 जो कबहुँ आइहें इह मारग सपति लीजिये ललारे—  
 नाँतर वृभिये जु मेरे संग की आगे जाति गुवारि ॥  
 सब सखियन में तें गहि राखी 'गोविंद' प्रभु—  
 मन मनाइ लै अपने जानि दीजिये नारि पनारि ॥

२८

[ टोढी ]

इहां सब कहाँ कौ दान देख्यौ न सुन्यौ कान ।  
 ऐसे उटक उठावत मोहनजू दूध दह्यौ लियौ चाहत मेरे जान ॥  
 गोरस लियें जातिरी आपने भवन तापर इन बैठानी आन की आन ।  
 'गोविंद' प्रभु सौं कहत पिया की सखी चलो जसोधा रानी पै—  
 नाँतर सूधे देहो जान ॥

२९

[ नट ]

कहो जू दान लेहौ कैसों ।  
 दूध दही गोरस कौ दान कबहुँ न सुन्यौ कान—  
 अब मानों लोंग लादी काहू जैसें ॥  
 आपु ही लेत किंधौ काहू लिखि दीनो समुझायौ धौं तैसें ।  
 'गोविंद' प्रभु तुमें डर न काहू कौ ब्रजराज कुँवरवर—  
 अब तातें गाल मारत घर वैसें ॥

१. भई री आळी केउ ( ८ )

२ समुझावो ( ख )

३०

[ कान्दरो ]

\* कब दान दीनी कब दान लीनीं अहो ब्रजराज दुहाई ।  
इह मारग हम सदाई आवति जाति अब कछु नई ये चलाई ॥  
जोपे<sup>१</sup> नहिं जान देत तो चलहु री उलटि घर—

इनें तो सबै फबति करत मन भाई ।  
'गोविंद' प्रभु के नैननि सों नैना मिलत सकुचि—  
चली ने<sup>२</sup>कु मुरि मुसिकाई ॥

३१

[ सारग ]

लालन छाँडो हो बरिआई दान आपुनो लीजे अहो ब्रजराजराई ।  
अब<sup>३</sup> कहा कहा वे अंचरा गहत हो जु—

करत बोली ठोली भाँडे सेती एती ठकुराई ॥  
जो कछु कहोगे सोई देहुँगी कान्ह कुँवर और लीजे अपनो गाम—  
कौन स<sup>२</sup>है तिहारी दिन दिन की अधिकारी ।  
'गोविंद' प्रभु दंपति जु परसपर चितै<sup>३</sup>अब चली—  
मुसिकाई लालन कौ मन लियो है चुराई ॥

\* कब दान दीनीं .. कौन दान दीनीं .. कब दान देहु .. ऐसे भी प्रारंभ हैं ।

१. सु देहुँगी ( ख. ग )

२. तुम्हारी ( क )

३२

[ विभास ]

बालि बोलि काहे जिन करो ।

स्यामसुंदर हौं दासी तिहारी मत मेरे गोहन परौ ॥  
 लोक लाज करौ मन मोहन नेंकहु धीरज धरौ ।  
 दोउ कर जोरि करत हौं बिनती पांइ तिहारे परौ ॥  
 होत अवार दधि बेचन को मारग मों ठान्यौ भगरौ ।  
 'गोविंद' प्रभु सो करति हौं बिनती जानेगौ साथ सगरौ ॥

३३

[ पूरवी ]

तुम चले जाहु ढोटा अपने मग कित रोकत ब्रजबधुन बाट ।  
 कहत कहा सोई कहो जु दूरि भए जिन परसौ गोरम के माट ॥  
 दिन दिन कौ पैंडो री माई हम कैसेक आवें जाइ—  
 इन सों परी है आंट ।

'गोविंद' प्रभु तुमें ऐसी न बूझिये ब्रजगज कुंवरवर—  
 जाइ चराओ गोधन के ठाट ॥

३४

[ ईमन ]

\* दधि नबेचिये हमारी कुल एहो तुमसों केती बार करी नहींयां ।  
 जो पै दधिबेचिये तों तुमते को लेबा है सुनि ब्रजराज लाडिले-  
 ललन कितअव गहत हो बहियां ॥

खरिक् दुहाए गोरस लिए जात अपने अपने भुवन जाको दान—  
 मांगत कहांअव कही उन सैयां ।  
 'गोविंद' प्रभुसों कहत प्यारी कीसखी नेंकु चलो जु बलि जाऊँ—  
 बैठी रानी जसुमति जहियां ॥

१. न ( क ) २. जै है सुनि ब्रजराज कुंवर कितअव ( क )

\* तुमसों सौ बार करी नहियाँ . ऐसा भी प्रारभ है ।

३. कहा कहिए उन ( क ) कहाकहिए इन ( ग )

\* कौन प्रकृति तिहारी हो ललना माई देखे सो कहा कहै—  
 ह्यां ठाड़ो इत उत कौं ।  
 सकल ब्रज के वगरे में गाइन के डगरे में घेरि घेरि राखी हम—  
 कहा धरावति तुम्हारौ यह न्याव कित कौ ॥  
 दान दान करि राख्यौ भूठेई गाल मारत कौने लियौ कौने दियौ—  
 ऐसे कैसे भरिवौ री माई इनसों नित नित कौ ।  
 चलौरी उलटि भवन जाँय दान के मिस लूटत हम कहेंगी जाइ—  
 नंद जू सों पायौ मैं 'गोविंद' प्रभु चित कौं ॥

\* जमुना घाट रोकी हो रसिक चंद्रावलि ।

हँसि मुसिकाइ कहति ब्रजसुंदरि छवीले छैन छाँड़ो अंचल ॥  
 दान निवेरि लेहु ब्रज सुंदरि छाँड़ो हो अटपटी कित गहत अलकावलि  
 कर सो कर गहि हृदे सों लगाइ लई 'गोविंद' प्रभु सों तूरासरंग मिलि ॥

गिरिधर कौन प्रकृति तिहारी अटपटी सघन वीथिन में—  
 ब्रजवधु आवति जाति अब मारग में अटको ।  
 तुम तो ठाले ठूले फिरत हो जु निसि दिन हम ग्रह काज करें—  
 कैसे वचि वचि निकसत तोऊऽव हूँ इजात भटको ॥  
 दान दान करि राख्यो कौने धों दान लियो—  
 भूठेई मारत गाल पटको ।  
 'गोविंद' प्रभु आए अनोखे नए दानी तुम—  
 सुन री सयानी चटपट कियो मटको ॥

ॐ ए कौन ऐसा भी प्रारंभ है । क ]

१ लीयौ कौने दीयौ कौने ऐसे [ क ]

२ रोकी हो जमुना घाट " ऐसा भी प्रारंभ है ।

३ ब्रजवधु वन मारग में [ क ]

४ भूठे ही दान मागत काहे कौं मारत [ क ]



३८

[ सारंग ]

मदन मोहन लाल अंबुज नैन विमाल—

अचरा छाँड़हु बलि अब ही हौं आई हो ।

छबीले सुंदर स्याम मटुकी धरि केँ धाम—

तुम्हारी सपत ग्रह पलहुँ न लाई हो ॥

तन मन निसि दिन और न तुम बिनु सोई—

मोसों कही जु जहाँ जानि पाई हो ।

‘गोविंद’ प्रभु स्वामी हँसि कह्यौ गजगामिनि—

पावेगी तहाँई जहाँ मुरली बजाई हो ॥

३९

[ ईमन ]

कुँवर कान्ह छाँडो हो ऐसी बतियां—

कितऽब करत बरिआई ।

ज्यों ज्यों बरजत त्यों त्यों होत अचगरे—

डगर में रोकत नारि पराई ॥

दूध दही कौ दान कबहु न सुन्यौ कान—

तुम यह नई चाल चलाई ।

‘गोविंद’ प्रभु सों कइति प्यारी की सखी—

अब ए बातेँ तुमें फबि आई ॥

तुम पै 'डोई' रोके' रहत कैसे'क आवे' जाँहि ब्रजवधू—

अब तुम हीं विचारि देखौ परम सुजान ।

खिरिक दुहावन दिन दिन ही आयौ चाहें ऐसैं कैसें वनें—

गुसाँई इत उत गहवर गैलो ऊ न आन ॥

ऐसी अटपटी कित देत हो जु लाड़ले कुँवर—

जो कवहूँ<sup>१</sup> परै ब्रजराज के कान ।

'गोविंद' प्रभु सों कहति प्यारी की सखी—

तुम धों ने'कु इत उसरो हमें देहु धों जान ॥

कहि धों मोल या दधि कौ री ग्वालनि—

स्याम सुंदर हँसि हँसि बृभक्त हैं ।

वेचोगी तो ठाढी रहि देखों धों कैसे जमायी—

काहे कौ भजिय जात नैन बिसालनि ॥

वृषभानु नंदिनी कौ निरमोलिक दह्यो जाकौ मोल स्याम हीरा—

तुम पे' न लियो जाह हँसि हँसि कहति चलति गज चालनि ।

'गोविंद' प्रभु पिय प्यारी ने'ह जान्यौ<sup>२</sup> अब मुसिकाह ठाढी भई—

सेना वेंनी करि मव आलनि ॥

१. परिहे [ ख ग ]

२. तत्र [ ग ]

४२

[ सारंग ]

मीठो ही गोरस तेरौ हो ग्वालनी, मीठो ही गोरस तेरो ।  
 कौन भाँति ले जमायो भामिनी मन ललचौ है मेरो ॥  
 गज मोतिन कौ हार है याको कौन देस ते' आन्यो ।  
 कंचुकी सोभित कसीदा सुंदर आजु लों देख न जान्यो ॥  
 एहो अनबोले लाडिले मोहन हँसि ग्वालिन मुख मोरथो ।  
 'गोविंद' प्रभु रसिक गिरिधर कौ से'ननि में चित चोरथो ॥

४३

[ सारंग ]

सखी हो कान्ह अचगरो दानी ।  
 नंद कुँवर हठीलो ढोटा मेरी कानि न मानी ॥  
 बाँहि मरोरत मटुकी फोरत पूछें कहत अटपटी बानी ।  
 कहा दुराह लिए भजिए जाति हो यों कहे आँखियां तानी ॥  
 हौं सकुची मुख मोरि ठाढी रही जिय में अति ही रिसानी ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय की हौं कहा कहौं कीनी जो मनमानी ॥

४४

[ ईमन ]

\* दिन ही दिन हम आह गईं यह मगु। अब कछु नईं ये ठठी—  
 जैसे हो तैसे राज करो जू सदाई अपने—

ब्रज तिहारे लाल लगिये' दूरि ही ते' पगु ॥  
 अब कहा कहत सोई<sup>१</sup> कहो न लाडिले कुँवर जू—

हमें तो समुझ नहीं<sup>२</sup> बात अथग ।

'गोविंद' प्रभु की अटपटी चलिये जात—

ऐसी को ए गिने री माई बड़ेई स्याम नग ॥

❧ अब कछु...ऐसा भी प्रारंभ है ।

१. कहिये लाल कुँवर [ ख ग ] २ बोल [ ख ]

४५

[ कान्हरो ]

कयो निकमों इह खोरि साँकरी ।

नंदनंदन ठाढे मग रोकें मारत ताकि उरोज काँकरी ॥  
 चंचल नैन उरज अनियारे तनमन देखियत मदन छाकरी ।  
 जानिन दै मुसिकाइनु लावत आनि देत कर टेकि लाकरी ॥  
 बाँहि मरोरि दियो मुख चुम्बन हँसि हँसि दीनी पाँइ आंकरी ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधर मदनमोहन बदन विलोकत भई रांकरी ॥

४६

[ सारग ]

अब हौ या ढोटा साँ हारी ।

गोरस लेत अटक जब कीनी<sup>१</sup> तब ही देत फिरि भारी ॥  
 नास दिन घर घर फेरो करत है बालक जूथ मँभारी ।  
 'गोविंद'<sup>२</sup> प्रभु इम कहति पियारी ए वाते कैसेँ जात सहारी ॥

४७

[ सारंग ]

कृपा अबलोकनि दान दै री महादान वृषभानदुलारी ।  
 तृपित लोचनि चकोर मेरे तुव बदन इँदु किरनिपान दे री ॥  
 सब विधि सुधर सुजान सुदरी सुनि लै विनती कान दे री ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय चरन परसि<sup>३</sup> कछौ जाचक कों तुव मान दे री ॥

१. हँमत ही देत ( स. ग ) २. गोविंद बलि इम कहत ग्वालिनी ( छ. ग )

३. परसि के जु जाचक ( स. ग )

## वामन जयन्ती—

४८

[ सारंग ]

प्रगटे श्रीवामन अवतार ।

निरखि अदिति करत प्रसंसा जुग जीवन आधार ॥  
 तन घनस्याम पीत पट राजत सोभित हैं भुज चार ।  
 कुंडल मकराकार कौस्तुभमनि उर मृगु रेखा सार ॥  
 देखि बदन आनंदित सुर मुनि करत निगम उच्चार ।  
 'गोविंद' प्रभु बटुक वामन ह्वै ठाडे हैं बलि द्वार ॥

४९

[ सारंग ]

आजु हरि वामन रूप लयौ ।

अनेक ऋषीश्वर सिंस्य संग लिये बलि को दरस दयौ ॥  
 ब्रह्मनाद ब्रह्मांड पूरि रखौ जोइ सुनी थकित भयौ ।  
 अद्भुत भेष निरखि तन आभा घसि दंडौत कियो ॥  
 कहा लेहु कछु माँगे बटुक मेरे भाग्य भलौ समयौ ।  
 त्रय क्रम भोमी दीजे राजा आस्रम चहत छयौ ॥  
 ले जल पात्र विरोचननंदन देनु को ठाठु ठयौ ।  
 बरज्यौ आनि असुर गुरु सैननि विष्णु अग्र जनयौ ॥  
 भूपति कहै मेरे भाग परम गुरु क्रतु को फल उदयौ ।  
 जो माँगे सो करौ समर्थन तन मन धन जु तयौ ॥  
 हाथ पसारत पाउ पसारे द्वै. डग जगत जयौ ।  
 तीसरे पीठ ठोकि " गोविंद " बैकुंठ दै रिभयौ ॥

## दशहरा—

५०

[ सारंग ]

आजु दसेरा परम मंगल दिन घरे जवारे गोवर्धनधारी ।  
 कुंकुम तिलक सुभाल विराजै अञ्छत सोभा लागत भारी ॥  
 'अश्व उतंग चढे नंदनंदन चले कुदावन महा सुखकारी ।  
 मन की अटक भई तहाँ ठाढ़े चढी अटा व्रपभानु दुलारी ॥  
 चारों नैन भए जव सनमुख बाँहि पसारि सैन सुखकारी ।  
 'गोविंद' प्रभु के चरन परसि केँ प्रथम समागम मिले पिय प्यारी ॥

५१

[ सारंग ]

विजय दसमी अरु विजै महूरत श्रीविडुल गिरिधर पहिरावत ।  
 करि सिंगार विचित्र भाँति कौ निरखि निरखि नैनन सुख पावत ॥  
 सूथन लाल अरु सेतु चोलनाकुन्है जरकपी अति मन भावत ।  
 विविध भाँति भूपन अंग सोमित केकी गुंजा पहरावत ॥  
 साजि कनकनग धार हाथ ले कुंकुम तिलक लिलाट बनावत ।  
 अञ्छत दे जव अंकुर सिरपर निरखि निरखि मन मोद वढावत ॥  
 बहोत भोग वीरा धरि आगे ब्रज भामिनि मिल मंगल गावत ।  
 निज जन निरखि निरखि केँ श्रीमुख 'गोविंद' हरपि हरपि गुन गावत

रास—

५२

[ केदारो ]

आजु गोपाल रच्यो रास देखत हु तजि हुलास —  
 अधिक नाचति त्रपभानु सुता संग रंग भीने ।  
 गिड़ि गिड़ि तत थुंग थुंग तत्तत्तयेई—  
 गावत मिलि राग रास रस तान लीने ॥  
 फूले बहु भाँति फूल परम रमन जमुना कूल—  
 मलय पवन बहत गगन उडुपति गति छीनी ।  
 'गोविंद' प्रभु करत केलि भामिनी रससिंधु भेलि—  
 जय जय सुर सब्द कहत आनंद रस कीनी ॥

५३

[ कल्याण ]

नाचत नव सिंगार मूरति जबल्लभ सुभग रास—  
 अति हुलास सुलप रसिक संगीत गति गाजे ।  
 गोपीजन नव वृंद ललित बाजन बर ताल धरन—  
 धिधिकट सुधिकट मृदु मृदंग बाजे ॥  
 जित सुदृष्टि सुधा वृष्टि रसाविष्ट ग्रीव सुलोल—  
 तित भुज बर भाव निरखि रति पति सत लाजे ।  
 वृषभानु कुँवरि गान तान सुर बंधान मान—  
 'गोविंद' गिरिधर प्रसंसि अद्भुत छवि छाजे ॥

५४

[ कल्याण ]

रंग भरे नाचत गिरधारी लाल बाल अंस अंस—

उदित भुव विलाम कौ ।

दृष्टि भेद गावत भेद हस्त भेद चग्न भेद लागत—

मुख मधुर हास कौ ॥

थेई थेई थेई करत मृग लोचनी तान मान सहित मच्यौ—

मधि मंडल रास कौ ।

गगन सधन चंद्र थकित मदन कोटि निरखि लजत लीला

नटवररूप गोविंद'दास कौ ॥

५५

[ कल्याण ]

मदन मोहन कमल नैन नृत्तत रास रंगे ।

तत थेई तत थेई गति अनेक लेत मान गान—

करत रूप सहित सरस अति सुधगे ॥

गिलुलित वनमाल उरसि मोरमुकुट रुचिर सरसि—

जुवतिन मन हरत फिरत अरुन द्रग कुरंगे ।

कानन कुंडल भलमलात पीत वसन फरहरात—

भुन भुन धरत बरन भृकुटी भाव भंगे ॥

सोहें सुरललना मुनि सिद्धि सकल सुनत सवन—

मुरली नाद ग्राम जात अधर दल उमंगे ।

'गोविंद'प्रभु ललतादिक सहचरि मिलि ज़थ सहित—

वारि फेरि मदन कोटि देत अंग अंगे ॥



५६

[ कान्हरो ]

नृतत रास रंगा \*रसिक रसभरे हो ।  
 सुलप संच गति लेत ग्रग्र तत तत थेईथेई वाजन मृदंगा ॥  
 ताल तंत्र किन्नरी कातर भेद तैसीए उठत धुनि सरस उयंगा ।  
 'गोविंद' प्रभु के जु रस माती हैं जुवती जूथ सिर ग्रथित मोतिन मंगा ॥

५७

[ मालव ]

नाचत लाल गोपाल रास में सकल ब्रज बधू संगे ।  
 गिडिगिडि तत थुगतत थुग थेईथेई मामिनी रति रस रंगे ॥  
 सरद विमल उडुराज विराजत गावत तान तरंगे ।  
 ताल मृदंग भौंभ अरु भालरि वाजत सरस सुधंगे ॥  
 सिव विरंचि मोहे सुर सुनि सुनि सुर नर मुनि गति भंगे ।  
 'गोविंद' प्रभु रस रास रसिक मनि मानिनी लेत उछंगे ॥

५८

[ ईमन ]

†गिडि गिडि थुंग थुंगनि तकटि थुंगनि—  
 एक चरन कर सौ भले भले बहु मृदंग बजावे ।  
 दूसरे कर चरन सौ कठताल त्रिकटि भं भ—  
 भूपताल में अवघर गति उपजावे ॥

\* रसिक रस भरे...ऐसा भी प्रारम्भ है ।

† 'तकि तकि' तथा "तिग तिग"...ऐसा भी प्रारम्भ है ।

१. भजे हो घहु ( क )

कंठ सरस सुर हि गावें मोहन मधुरी तान 'लावें—

सकल कला गुन पूरन व्रपभानुनदनी पीय मन भावें ।  
 'गोविंद' प्रभु रीझि रहे मुसिकाइ रसन दसन धरि के—  
 रहसि उरसि लपटावें ॥

५३

[ कान्हरो ]

आली री दाम दाम दाम वाजत मृदंग गति उपजत अनेक भांत ।  
 तीकी भंकरन क्रुंक्रुं तन भगता धीलांग धीलांग दागर—  
 डोगागत दुलहिन दूलो जोत पाँत ॥  
 पिया के रिझाइवे को न्यारी न्यारी गति तामें लेत ही सुघर—  
 बनाइ 'गोविंद' प्रभु पिया अंग संग ए निर्रत भांमनी संग ॥

६०

[ कान्हरो ]

नाचत दोऊ रंग भरे ।  
 जुवति मंडल मधि विराजत वाहु अंस धरे ॥  
 तान मांन बंधान सुर गति गान मधुर खरे ।  
 ततं थेई तत थेई सब्द दंपति सुलप उपजत करे ॥  
 ताल झांझ मृदंग वाजत सुनत जनम हरे ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिघर गुन भागवत उचरे ॥

६१

[ केदारो ]

उमगत रस ग्रीव भुजा नाचे' स्यामा स्याम ।

वृन्दावन रच्यौ रास विहरत आनंद विलाम—

विथकित चंद सखी लीक लयौ काम ॥

उधटत संगीत सब्द तथेई थैईता गिरि गिरि—

थेई थेई सरस परम बाम ।

'गोविंद' प्रभु लाग लेत ब्रह्मादिक लखि अचेत—

जै जै करि पुहुप अंजुली छोड़त सुखधाम ॥

६२

[ केदारो ]

\*नाचत गोपाल-संग गोप कुँवरि अति सुधंग—

तथेई तथेई तथेई तथेई मंडल मधि राजे ।

संगीत गति भेद मान लेत सप्त सुर बंधान—

धिधि कटि धिधि कटि मृदंग मधुर मधुर वाजे ॥

मुरली रटनि रस को रटन मटकनि कटक मुकुट—

चटक पिय प्यारी लटकि लपटि उरसि राजे ।

'गोविंद' प्रभु पिय की छवि देखत रस बस मंत्र मगन—

जमुना तट काछे नट अद्भुत छवि छाजे ॥

६३

[ ईमन ]

नंदलाल संग नाचति नवल किसोरी ।  
 पडजू रिपभ गंधार सप्त सुरनि मधिम तार लेत ग्र ग्र त त तत हो री ॥  
 जहाँ रसिक गिरिधर 'सव्द उघटत ग्र ग्र थुंग थुंग गति थोरी ।  
 'गोविंद' प्रभु वनी नवल नागरी राधा स्याम सरस जोरी ॥

६४

[ केदारो ]

खेलत रस रास रसिक राधिका गुपाल लाल—  
 ब्रज बनिता मंडल मधि दंपति सुखकारी ।  
 नाचत गति सुधंग चालि हस्तरु गहे भेद लिए—  
 ताल मृदंग भाँभ वजावत वाँसुरी रसारी ॥  
 तत तत तत थेई थेई कहि गावत केदारो राग—  
 सानुराग क्रीडत रस उपजत अति भारी ।  
 जमुना पुलिन सरद रैनि नटवर मन हरन मैंन—  
 गिरिवरधर छवि निहारि 'गोविंद' बलिहारी ॥

६५

[ केदारो ]

- नृत्तत गोपाल संग राधिका वनी ।  
 कंचन तन नील वमन स्याम कंचुकी विचित्र—  
 कंकन कर कटि सुदेस रुनित किंकिनी ॥

† सुनत नदलाक \* ऐसा भी प्रारभ है ।

१. रस उपजत [ रु ]

\* नाचत गोपाल ""ऐसा भी प्रारभ है ।

थेई थेई थेई बदत मान उरपि तिरपि करत गान—  
 सरस तान राग रागिनी ।  
 ताल भाँझ जति मृदंग मिलवत बीना उपंग—  
 वाजत पग नूपुर कल धुनी ॥  
 राका निसि सरद चंद प्रगट अँग अँग अनग—  
 रह्यो रास रंग सरस तट कलिदनी ।  
 रीझे गिरिधर सुजान रसिकराइ गुन निधान—  
 साधु साधु कहत अंक भरत वृंदनी ॥  
 दंपति उरप तिरप रास करत केलि रति विलास—  
 निरखे प्रेम गुन निवास कल जामनी ।  
 लीला रस सुख निहारि तन मन धन प्राण वारि—  
 'गोविंद' प्रभु अखिल केलि जगत पावनी ॥

## हटरी—

६६

[ कानरो ]

हटरी बैठे श्रीगोपाल ।  
 रतन जटित की हटरी बनी है मोतिन भालरि परम रसाल ॥  
 ठरुराठरु कुली और कुल्हैया मरि मरि धरे पकवान रसाल ।  
 पान फूल अरु सोधेसहित सब बाँटत हैं नंद के लाल ॥  
 रामावलि प्रेमावलि ललिता चंद्रावलि ब्रज मंगल बाल ।  
 चलो सखी जहाँ पैठ लगी है बँचत हैं गोकुल के गोपाल ॥  
 सब सुंदरि घर घर तेँ आईं निरखति नैन बिसाल ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय चित चोरयो तब बँधी है प्रेम की पाल ॥

गोवर्द्धनधारणा—

६७

[ बिलावल ]

गोप समाज जुरे जमुना तट सब मिलि संमत कीनो ।  
 सुरपति जग्य महोत्सव कीजे वचन परस्पर लीनो ॥  
 तिहि ओसर पाउँ धारे ब्रजपति बूझन लागे वात ।  
 कहो संमत सब मिलि कहा कीनो साँची कहो मेरे तात ॥  
 इहि सँभार सिद्धि करि केँ तुम कौन देव बलि देत ।  
 हम तुम कानन सैल निवासी नहिं काहू सो हेत ॥  
 हमारो हि देव गोवर्द्धन पर्वत सदा परम सुख दाई ।  
 आनि परे संकट ब्रज जन कों तव गिरि करे सहाई ॥  
 बाल वृद्ध नर नारिन के मन वात करत मन भाई ।  
 बहु विधि पाक सँवारि मुदित मन नग बलि दान दिवाई ॥  
 इन सुनि भयो क्रोध मधवा कों मेष दएहि पठाई ।  
 सात घोम जल सैल सकल लै वृष्टि कराई ॥  
 गोपी गोप गाइ अरु बाछरु सबहिन चित हरि लीनो ।  
 मन मुष्टि ग्रह कटि धरि राखी निर्भय दान हरि दीनो ॥  
 मेरी बढी घात ब्रज पर तेँ सञ्चिपति भयो खिसानो ।  
 कामधेनु आगेँ करि आयो ऐसो बड़ो अघानो ॥  
 पाँइ परयो कर जोरि केँ चिनती मैं महिमा नहिं जान्यो ।  
 करोऽभिषेक 'गोविंद' ऐरावृत कर गंगा जल आन्यो ॥

६८

[ विलावल ]

सुरपति लाग मेटि गोवर्द्धन पूजो ।  
 अपनी कुल देव छाँडि सेवो जिन दूजो ॥  
 तन अल तहाँ बहुत होत पावे सुख गैयाँ ।  
 हित हरिदास पर सीतल जाकी छैयाँ ॥  
 पाक साक विजन बहु अन्नकूट कीनो ।  
 'गोविंद' प्रभु ब्रज जन कों माँगिके जु लीनो ॥

६९

[ विलावल ]

गोवर्द्धन पूजा कों आए सकल ग्वाल लिये संग ।  
 वाजत ताल मृदंग संख धुनि बेला वीन उपंग ॥  
 नव सत साजि सिंगार चली ब्रज तरनी अपने रंग ।  
 गावत गीत मनोहर बानी उठत है तान तरंग ॥  
 अति पवित्र गंगाजल लेके ढारत गोकुलचंद ।  
 ता ऊपर पुनि लै धौरी कौ पय ढारत आनंद ॥  
 रोरी चंदन चर्चन करि के तुलसी माल पहिरावत ।  
 धूप दीप विधि सों सबै कटि पीतांबर लै उनहि ओढावत ॥  
 भोजन करि पकवान मिठाई लै लै गिरि कों भोग भरावत ।  
 गाइ खिलाइ गोपाल तिलक दै पीठ थापि सिर पेच बँधावत ॥  
 इहि विधि पूजा करि के मोहन सब ब्रज कों आनंद बढावत ।  
 जै जै कार भयो तिहि औसर 'गोविंद' तहाँ विमल जस गावत ॥

७०

[ विलासल ]

ब्रज में एक बड़ो है गाम । गोकुल कहियत जाकौ नाम ॥  
 नंद महरि जहां कहियत राजा । मिलि बैठे सब गोप समाजा ॥  
 इंद्र जग्य की बातें कही । श्रीहरि अपने मन में लहीं ॥  
 बैठे आइ पिता की गोद । देखत श्रीमुख भयो प्रमाद ॥  
 चिबुक पकरि पृछी जब बात । साँच कहो मोसों तुम तात ॥  
 खेलो हँसो सखन से जाइ । सोइ रहो हरि मंदिर जाइ ॥  
 हँस केँ सुत पूँछी इह बात । कहां बात मन की तब तात ।  
 तुम तो स्रधे ब्रज के वासी । बात सुनत मोहे आवैं हॉसी ॥  
 कर्म लिखी सोई पुनि हूँ है । सुरपति आइ कहा तुम दैई ॥  
 जीवन प्रेम रसिक धन वरखत । ताकी कृपा जगत सब हरखत ॥  
 नाहिं तुम्हारे घर को गाम । नाहिव ताके बन कौ नाम ॥  
 तुम तो बन परवत के वासी । सुख पावें तहाँ रहे ब्रजवासी ॥  
 तातेँ गिरि की पूजा कीजे । आनंद मगन सदा सुख लीजे ॥  
 सकल साज सुरपति कौ कीनो । सो लै सब गिरिवर कौ कीनो ॥  
 विविध भाँति हरि पाक करारव । पायस आदि अति स्रप बनावें ॥  
 बोहोत भाँति के विजन कीने । दूध दही घट भरि केँ लीने ॥  
 बोहोत भाँति के पाक कराए । पूरी पूवा थारि भरि लाए ॥  
 सेवा और मिठाई करी । माखन यिथी भाजन भरी ॥  
 संधाने कीने संजोग । सो सब ले गिरिवर की भोग ॥  
 सुनि फूल ब्रजवासी लोग । इतने दिन हम कीने भोग ॥  
 अति आनंद चले ब्रजवासी । बालक वृद्ध तरुनि अरु दामी ॥



गोवर्द्धन की पूजा कीने । ब्रज के लोग प्रेम रस भीने ॥  
 जल भरि संख पखारन कीनो । दूध दही फेरि चर्चिकें दीनो ॥  
 रोरी चंदन चर्चन कीनो । पीत बसन फिरि ऊपर दीनो ॥  
 पुष्प माल तुलसी ले करे । भाजन भरि भोग ले धरे ॥  
 भोग सराड बीडा जब दीने । जै जै कार सवै जन कीने ॥  
 नीराजन उतारी आइ । सब कोऊ सिर नायो जाइ ॥  
 गाइ खिलाइ गोपाल बुलाए । भाल तिलक दै फेंट बंधाए ॥  
 पीठि थाप प्रसाद जु दीनो । इहि विधि सबदिन कों सुख दीनो ॥  
 विधिसों बलि दीनो गिरि आगें । नौतन पुहुप भूषन बागे ॥  
 श्रीगोवर्द्धन भोजन कीनो । नंदराय कों अति सुख दीनो ॥  
 कहत कहत पूछो न तुम तात । क्यों तुम्हारी बलि खाई जात ॥  
 नंदराय जब पूछी जाइ । तब गोवर्द्धन बोले आइ ॥  
 तुम्हारी बलि दीनी हौं खैहों । जो जो मागें सो सो दैहों ॥  
 हौ तो तुम्हारे सदा सहाई । कहत गोपाल वावा सिर नाई ॥  
 इहि विधि पूजा करि जु सिधारे । फिरि कें गोकुल पाउँ धारे ॥  
 तुम तो बहोत बड़े बड़ भागी । जासों गोवर्द्धन अनुरागी ॥  
 सुरपति कों यह बात जताई । नंद गोप कौ कुंवर कन्हाई ॥  
 तिन तुम्हारो बलि दान मिटायो । गोवर्द्धन कों आनि दिवायो ॥  
 मघवा कहै सुनो मेरी बात । कैसेँ करिहों ब्रज पर घात ॥  
 सुरपति ऐसी आग्या करहीं । छूटे वंदन तूटे परहीं ॥  
 कोप भरे घन गरजत आए । ब्रज के लोग चहुँ दिसि धाए ॥  
 वन में ठाडे श्री गोपाल । जाइ मिलीं मव ब्रज की बाल ॥  
 बालक वृद्ध सब कोऊ आए । नंद गोप सुत कों सिर नाए ॥

गोकुल के तुम सदा सहाइ । तुम विनु हमकों कौन सहाइ ॥  
 तुम तो जीवन प्राण हमारे । तुम विन हमकों को रखवारे ॥  
 सुनि हरि मन में इहै विचारयो । मैं फुनि लियो यह ब्रजभारयो ॥  
 मो सों रीत मोही कों जानें । मेरो ही व्रत मोही को मानें ॥  
 कृपा दृष्टि करि जबहि मुख पेल्यो । फिरिकें श्रीगोवर्द्धन देख्यो ॥  
 लै श्रीगिरिवर कर में करयो । वाम भुजा अंस पर लै धरयो ॥  
 कहे कान्ह आवै गिरि छाँही । गिरवे कौउ डर राख्यो नाही ॥  
 गाइ गोप भीतर सब धँसे । प्रेम मगन वहै सुख सों बसे ॥  
 गिरिधरलाल मगन मन हरयो । सात दिना काहु बात खरयो ॥  
 आठै दिना जब चरखा रही । नंदलाल सबहिन सों कही ॥  
 निकसे लोग देखि मन हरयो । हरिजू प्रेम नीर तब ढरयो ॥  
 गोवर्द्धन तब ही ले धरयो । इहि विधि लाल इंद्र सों धरयो ॥  
 हरि सों गोप मिलत हैं जाई । चाँपत कर ले जसोदा माई ॥  
 कहो लाल जसुमति चों भाख्यो । गोवर्द्धन कैसें कर राख्यो ॥  
 दधि अच्छत ब्रज बाल करे । कमल नन के सिर पर धरे ॥  
 इहि विधि प्रेमसिंधु में लसे । फिरि कें श्रीगोकुल में बसे ॥  
 सुरपति कामधेनु तहाँ लाई । चरन कमल पकरे हैं जाई ॥  
 मै तो परम अनीत जु करी । मोतें यह चूक जू परी ॥  
 सरन तुम्हारी आयो राज । ब्रज लोगन के काने काज ॥  
 मारन राजन को तुम हुस । यों कहि चरन नवौं बीस ॥  
 सुरपति अस्तुति बहोत जु करी । कमल नैन सब जिय में धरी ॥  
 दूर कियो मैं तेरो आज । मैं तो कीयो तेरो काज ॥  
 सुनहु इंद्र ऐसी जिनि कीजे । सुख सों अपने वास बसीजे ॥

तब सुरभी एक बात जु कही । नदलाल मन में तब लही ॥  
 सुरपति हेत तुम्हारे दास । या के मन की पूजो आस ॥  
 चतुरानन कही हम सो बात । कर जोरे कियो सुनहु तात ॥  
 हम तुम्हरे अभिषेक जु करे । तुम्हरे चरन कमल चित धरे ॥  
 गगाजल लायो है हाथी । सकल देव मुनि भए संगाथी ॥  
 जैजैकार सबहिन मिलि करयो । गोविंदराय नाम लै धरयो ॥  
 दुंदुभि नाद भए सब हरखे । विविध भाँति फूलन सो बरखे ॥  
 कृपा करी मन में सुख पायो । नारदादि मुनि हरि गुन गायो ॥  
 आग्या माँगि गए सुरपति सब । नंदलाल आए गोकुल तब ॥  
 कहत गोप ब्रजपति सो बात । कान्ह तुम्हारे भए विख्यात ।  
 तुम तो परम तपस्या कीनी । माथे गिरिधर सी निधि दीनी ॥  
 तुम तो गोकुल के प्रतिपालक । जिनकौ कमल नैन सो बालक ॥  
 धनि धनि है जसुमति की कृखि । जिन देखें नहिं लागे भूख ॥  
 नंद कहे हौं तो सब जानों । गरग वचन जिय मे नित आनो ॥  
 एतो नारायन जन बालक । संकट में तुम को इह पालक ॥  
 ऐसे वचन बहोत सुनि कहें । सो तो सब नैननि में लहें ॥  
 याके गुन लीला हौं जानों । ताते नेकु न सका आनो ॥  
 सब प्रिलि बहोतें बातें करी । हरि की लीला मन में धरी ॥  
 आनंद मगन भए ब्रजवासी । प्रफुलित मन जिय उपजै हांसी ॥  
 गोवर्द्धन लीला जो गावै । 'गोविंद' चरन कमल सो पावै ॥

७१

[ सोरठ ]

\* हरि सों टेर कहत ब्रजवासी ।  
 इंद्र रिसाइ बरख्यो हम ऊपर नेंकु न लेत उसासी ॥  
 तुम विनु<sup>२</sup> और कौन है नंदसुत भेटन कों दुख रासी ।  
 तइ 'गोविंद' प्रभु गिरिवर कर धारयो मघवा रह्यो खिस्यासी ॥

७२

[ घनाश्री ]

राखो राखो हो ब्रजनाइक ।  
 आजु जुरे हैं मेघ प्रलै के तुम विनु कौन सहाइक ॥  
 गहज गरज चहुँ दिस तें बरखत ज्यों साइक ।  
 को ऐसो समरथ नंदनंदन इह दुख भेटन लाइक ॥  
 सुनि यह वचन निरखि निजु जन कों मघवा मद ठाइक ॥  
 'गोविंद' प्रभु गिरिवर कर लीनो भए ब्रजजन सुखदायक ॥

७३

[ धनाश्री ]

नंद के लाल गोवर्द्धन धारयो ।  
 इंद्र कोप कीनो ब्रज ऊपर पठै रिसाय मेघ सवै हँकारो ॥  
 सात दिवस मूसर धार बरख्यो एकौ छिनु बीच न पारयो ।  
 गोपी ग्वाल गाइ गोसुत सब आपु गर्व राखि गर्व टारयो ॥  
 छांडो सब अभिमान अमरपति अपनो विचार जिय में विचारयो ।  
 'गोविंद' प्रभु सैल धरन के पाइन आइ तिहारयो ॥

७ कान्ह सों टेरि...पेसा भी प्रारम्भ है ।

१. कोपि ( ख. ग. ) २. समरथ कौन नंदसुत ( क ग ) ३. राख्यो ( ग )

७४

[ त्रिलावत ]

आजु गिरि गोवर्द्धन कर ही धरयो ।

सात दिवस जल वृष्टि निवारी तोहु न मघवा दर्प हरयो ॥  
 सुरभी वृंद गोप गोपीजन बाल विरध दुख दूरि करयो ॥  
 मन मृष्टि गृहि कर धरि राखी मुख निरखत सबकौ काज सरयो ॥  
 मात जसोदा लेत बलैयां कुमकुम अञ्छत तिलक भरयो ।  
 अचरज देखि अमरगन बरखे विविध कुसुम वरखा बिखरयो ॥  
 ले सचिपति संग कामधेनु कौ करि अभिषेक प्रभु पांइ परयो ।  
 'गोविंद' प्रभु ब्रज के रखवारो गर्ग वचन हरि सत्य करयो ॥

७५

[ सारंग ]

ब्रज जन लोचन ही कौ तारो ।

सुनि जसुमति तेरो पूत सपूत<sup>१</sup> यह कुल दीपक उजिआरो ॥  
 धेनु चरावन जात दूरि जब होत भवन अति भारो ।  
 घोख सु जीवनि<sup>२</sup> भूरि हमारी छिनु इत उत<sup>३</sup> जिनि टारो ॥  
 सात घोस<sup>४</sup> गिरिराज धरयो कर सात बरस कौ बारो ।  
 'गोविंद' प्रभु चिरुजीवो रानी तेरो सुत गोप बंस रखवारो ॥

१. है ( क ) अति ( ग )

२. प्राण हमारो ( क )

३. नहिं ( क )

४. बर कर धारयो ( ख, ग )

७६

[ सारंग ]

\* वृक्षत जननी लाल कहा कीनों ।

चूमति भुजा चांपि उर लावति सकल कला जु प्रवीनों ॥  
कोमल दल अंगुरी दल ऊपर गोवर्द्धन कैसे कै लीनों ।  
'गोविंद' प्रभु को वदन विलोकति तन मन धन लै दीनों ॥

७७

[ नट ]

कहो धो मेरे वारे हो लाल गोवर्द्धन कैसेक उठाइ कर लीनों ।  
एकई हाथ अकेले हि ठाड़े नेकु बलदाउ† न दीनों ॥  
सुंदर कर चांपति चूमति हृदें लावति अंचरा प्रेम जल भीनों ।  
'गोविंद' प्रभु सपूत लरिकाई तेँ सवै ब्रजजन मन सुख दीनों ॥

७८

[ विलायल ]

गोवर्द्धन कैसे धरयो ब्रजराज कुंवार ।

बलि देखत गिरि कर धरयो सौभा भई अपार ॥  
ग्वाल गरु वच्छ राखिके इंद्र मद सब मार ।  
'गोविंद' प्रभु के रूप पै भयो परम उदार ॥

७९

[ विलावल ]

\* गिरिवर कैसे धरयो ब्रज लालन पियारे ।

बलि बलि भुज दंड स्याम के अति कोमल सकुमारे ॥  
सात दिवस गिरि कर धरि राखयो इंद्र गरव परवत भै उतारे ।  
'गोविंद' प्रभु सौ कहत सखा सब कहाँ कहाँ न उवारे ॥

\* पूछत जननी...ऐसा भी प्रारंभ है ।

† बलदाऊ को [ ख ]

\* गोवर्द्धन कैसे...ऐसा भी प्रारंभ है ।

## भाईदूज—

८०

[ विलावल ]

भाईदूज जानिकेँ जसुमति बहनि सुभद्रा न्योति बुलावति ।  
 उबटि न्हवाये दोऊ भैया बागो अतलस लाल बनावति ॥  
 चीरा बाँधि हरो सिर ऊपर आभूषन बहु विधि पहिरावति ।  
 खीचरी दही भात थारनि धरि रोहिनी पे सब साज मंगावति ॥  
 कीनों तिलक सुभद्रा तब ही नीराजन करि हरख बढावति ।  
 जेवत हैं बलराम प्रीति सों मांगि लेत जो मन में भावति ।  
 मुख पखारि बीरी हरि लेके बहनि पांनि दे पुनि सिरुनावति ।  
 देत असीस सदा चिरुजीयो 'गोविंद विमल विमल जसु गावति ॥

## गोपाष्टमी—

८१

[ विलावल ]

प्रथम गोचारन कौ दिन अज ।  
 प्रातकाल उठि जसोदा भैया कीनों है सब साज ॥  
 विविध भाँति बाजे बाजत हैं रह्यो घोष सब गाज ।  
 गावति गीति मनोहर बानी तजि गुरुजन की लाज ।  
 लरिका संग सकल संकरषन वेन बजाइ रसाल ।  
 आगे धेनु दै चले 'गोविंद' प्रभु मगन भए गोपाल ॥

८२

[ विलावल ]

प्रथम गोचारन चले गोपाल ।  
 जननि जसोदा करति आरती ओतिन भरि भरि थाल ॥  
 मंगल सन्द होत तिहिँ औसर मिलि गावति ब्रजवाल ।

विविध सिंगार पहरि पट भूपन रोरी तिलक दै भाल ॥  
 सब समाज ले चले वृंदावन आगे कौनी गाइ ।  
 राई लौन उतारति जननी 'गोविंद' बलि बलि जाइ ॥

८३

[ विलावल ]

गोविंद चले चरावन धेनु ।

गृह गृह ते लरिका सब टेरे श्रुगी मधुर बजाई वेनु ॥  
 सुरभी संग सोभित द्वै भैया लटकत चलत नचावत नैन ।  
 गोप बधू देखन सब निकसीं कियो संकेत बतार्ह सैन ॥  
 ब्रजपति जब ते वन पाउँ धारे न परत ब्रजजन पल री चैन ।  
 तजि गृह काज विकलीसी डोलत दिन अरि जाए हो एक वैन ॥  
 जसोमति पाक परोसि कहति सखि तूँले जाउ वेगि इह देन ।  
 'गोविंद' लिए विरहनी दौरी तलफत जैसे जल बिनु मेंन ॥

प्रबोधिनी—

८४

[ विलावल ]

देव जगावति जसुदा मैया ।

फूलि फूलन सों पूजि कइत मेरो चिरजीवो जु कन्हैया ॥  
 तुम्हारे आगे कुसल गोकुल की बटो दूध और दहीयाँ ।  
 'गोविंद' प्रभु श्रीरामकृष्ण की लागो मोहि वलैयाँ ॥



## श्रीगिरिधरजी उदसबा—

८५

[ विलावल ]

श्रीविठ्ठलराज कुँदर श्रीगिरिधर अवलोकन मन भयो आनंद ।  
 वेद पुरान सज्ञान साध्न सब कलिजुग उधरन आनंद कंद ॥  
 विमल सरीर नाम जस निर्मल विमल बदन की मुसकनि मंद ।  
 'गोविंद' प्रभु प्रगटत संतन हित लीला रूप धरयो गोविंद ॥

## श्रीगुसाईजी उदसबा—

८६

[ विलावल ]

श्रीवल्लभ के नंदन फिरि आए ।

वेई रूप वेई फिरि क्रीडा करत आपु मन भाए ॥  
 वेई फिरि बास करत श्रीगोकुल वेई कीरति प्रगटाए ।  
 वेई सिंगार भोग छिन छिन के वेई लीला गाए ॥  
 जे जसुमति के आँगन कीने सोई व्रज में पाए ।  
 श्रीविठ्ठल गिरिधर पद अंबुज 'गोविंद' उर में लाए ॥

८७

[ ईमन ]

श्रीवल्लभ ग्रह होत बधाई ।

प्रगटे श्रीपूरन पुरुषोत्तम श्रीविठ्ठल सुखदाई ॥  
 भवन भवन प्रति मंगल साजे आँगन मोतिनि चौक पुराई ।  
 मंडप तोरन माल मनोहर कंचन कलस धुजा फहराई ॥  
 सुंदरि सुनि सिंगार सकल सजि गावत मंगलचार बधाई ।  
 मुख निरखत मन मोद बढ्यो अति देत असीस लड्याइ लड्याई ॥

वाजत ताल वेंनु सुर किन्नर विप्र वेद धुनि अंबर छाई ।  
 अवीर गुलाल सुरंग अरगजा सी कुंकुमचंदन कीच मचाई ॥  
 फूलि रहे मन श्रीलच्छमन सुत प्रमदा भूपन सधै बनाई ।  
 अरपी माल अमोल बसन को वंदीजन धन बहुत मिठाई ॥  
 घर घर उच्छ्व करत भक्त जन पर पापंड सब गए दुगाई ।  
 रस की रामि वेद विधि प्रगट 'गोविंद' दास सदा बलि जाई ॥

८८

[ ईमन ]

अवनीतल आनंद उदय भयो ।

मास पौष कृष्ण पछ नौमी श्रीविठ्ठल दरस दयो ॥  
 ए अवतार पुष्टिजन कारन निगम पुकार कखो ।  
 प्रगट कल्पवृक्ष श्रीवल्लभ गृह त्रिभुवन छाई रह्यो ॥  
 सदानद की सेवा सिखवत प्रेम समुद्र बह्यो ।  
 त्रिन साधन अनेक जन उद्धरे भव दुख भाजि गयो ॥  
 सचिपति ईस विरंचि दुर्लभसो फलसो सुख लूटि लयो ।  
 'गोविंद' प्रभु श्रीविठ्ठल पद रज को जो जन उमगि गह्यो ॥

८९

[ धनाश्री ]

आजु वधायो श्रीवल्लभगाई के प्रगटे श्रीविठ्ठलनाथ ।  
 भक्तन काज किए नर देही निज जन दिये सनाथ ॥  
 तैलंग तिलक लच्छमन सुत के गृह जनमु लियो है आइ ।  
 पुरुपोत्तम यासो कहियतु हैं निगम सदा गुन गाइ ॥  
 पौष मास और नौमी भृगु दिन हस्त नच्छत्र है सार ।  
 वृषभ लग्न सुभ जोग करन हैं कन्या रासि निरधार ॥

धन गुरु तृतीय राहु पंचम राकापति नवमे केत ।  
 सप्तम सुक्र भौम सनि सोमित अस्टम बुध रवि लेत ॥  
 गिरि चरनाट सुरसरी के तट लीनों द्विज वर रूप ।  
 जातकर्म सब होत विविध विधि बैठे श्रीवल्लभ भूप ॥  
 पंच सब्द बाजे बाजत हैं गावत गीत सुहाए ।  
 मंगल कलस विराजत द्वारें बंदनवार बधाए ॥  
 मागध सूत पुरोहित मिलिकें सुम आसीस सुनाए ।  
 देत दान महाराज श्रीवल्लभ फूले अंग न समाए ॥  
 महा महोच्छ्रव होत आंगन में नाचत गुनी अनेक ।  
 विविध भांति पाटंवर भूषन देत न आवे छेक ॥  
 नव ग्रह की जो महिमा बरने कहत सबै द्विज आई ।  
 पाषंड धर्म दूरि करिहैं प्रभु वेद धर्म प्रगटाई ॥  
 निराकार माया मत खंडन करहिंगे सुखदाई ।  
 पुरुषोत्तम साकार भजन विधि करि सिखवहिंगे जाई ॥  
 दैवी जीव उद्धारन कारन महामंत्र को दान ।  
 सरन गहे गिरिधर रति उपजत करत कथा रसपान ॥  
 जे हरि ब्रह्म रुद्र के अंतर आवत नाहिन ध्यान ।  
 ते निज जन गृह बसत निरंतर अमय करत हैं दान ॥  
 प्राकृत रूप दिखाइ मोह किए आसुर मानस जेह ।  
 कृपा दृष्टि उद्धार किए हैं स्त्री सूद्रादिक देह ॥  
 पतित जीव पावन करिहैं प्रभु अनेक देस परवेस ।  
 हस्त कमल धरि दूर करहिंगे अन्य धर्म को लेस ॥  
 गोवर्द्धनधर सों निज लीला करहिंगे वहां जाइ ।  
 भोग सिंगार बनाइ करहिंगे निरखि निरखि सुख पाइ ॥

ब्रजमंडल तरु खग मृग की महिमा करहिंगे विस्तार ।  
 जमुना श्रीगोवर्द्धन युग वेली कहत सबै निरधार ॥  
 प्रेम लक्षणा दे दासनि कों कीनों भव निस्तार ।  
 श्रीवल्लभ तेरे या सुत की कीरति अपरंपार ॥  
 आनंद मगन भए सुर नर सब गुनगन सुनि सुख पाए ।  
 निरखि मुखारविंद की सोभा चरन कमल सिर नाए ॥  
 सुख सागर उमड्यो भुव ऊपर वरनत वरन्यो न जाई ।  
 श्रीवल्लभ पद रज महिमा तें 'गोविंद' यह जसु गाई ॥

६०

[ धनाश्री ]

जयति वल्लभ नंदन महालक्ष्मी गर्भ रत्न—  
 विप्रकुल भानु उद्योत कर्ता ।  
 सुभग पावन चरन सुकुमार त्रय ताप हरन—  
 नख मनि चंद्र कोटि तिभिर हर्ता ॥  
 जयति जयति श्रीगोपीनाथ अनुज—  
 विश्व उद्धारक रुकमनी पद्मावती आदि भर्ता ।  
 दास 'गोविंद' प्रभु हूँ रूप जुगराज—  
 श्रीविड्डलनाथ गिरिराज धर्ता ॥

६१

[ धनाश्री ]

जयति चतुरानन स्तुति करत—  
 सजस ईस स्तुति करत स्वर्गवासी ।  
 श्रीवल्लभ तनय प्रगट भुव रत्नवर—  
 गिरि सिखर तरनिजा तट निवासी ॥

जयति गुन निगम रत्न मुनि ग्यान गुन—

नित संत सब चाहत दर्स आसी ।

नृपति भूपति आखिल ब्रह्मांड के दीन—

होइ सरन आइ चरन दासी ॥

जयति द्विगुण कुल तिलक नवीन चंद्रमा—

वचन बरखत किरन अमिय धारा ।

सींचत बल्लभी अब प्रेम सी पुष्टि कर—

‘गोविंद’ रस पीवत आनन द्वारा ॥

६२

[ विभास ]

करि करुना प्रगट्यो अबनीतल असरन सरन श्रीविठ्ठलनाथ ।  
 पूरन पुरुषोत्तम श्रीविठ्ठल बल्लभ सुत सकल पदारथ जाके दाय ।  
 भक्ति प्रचार कियो भूतल में निज जन सकल किये हैं सनाथ ।  
 षट्गुन सहित सोभित ‘गोविंद’ प्रभु गिरिधर प्रभृति सातों सुत साथ ॥

६३

[ नट ]

जो पे श्रीविठ्ठल रूप न धरते ।

तो कैसेक घोर कलिजुग के महा पतित निस्तरते ।  
 सेवा प्रीति रीति ब्रजजन की श्रीमुख ते’ विस्तरते ।  
 श्रीविठ्ठल नाम अमृत जिन ली नों रसना सरस सुफल ते ॥  
 कीरति विसद सुन जिनि स्रवननि विश्व विषै परिहरते ।  
 ‘गोविंद’ बलि दरसन जिनि पायो उमगि उमगि रस भरते ॥

६४

[ मालव गोरा ]

श्रीविट्ठल चरन सरन मन मेरो निज जन पोषत कलि केरे ।  
रूप नाम गुन परम सुपावन प्रगट भए उद्धरन तेरे ॥  
जनम जनम जाके कृत साधन चितवत फिरन नाहिने फेरे ।  
श्रीवल्लभसुत 'गोविंद' दास प्रभु गावत वेद विमल चेरे ॥

६५

[ अडानौ चौताल ]

श्रीमद् बल्लभ नंदना आनंद कंदना,  
बलि बलि जाऊँ माई देखत मुखारविंद ।  
व्रज के लोचना सुख दे दुखमोचना,  
सहज मुभग चपल लहरि नैना अरविंद ॥  
मृदुल वचन सुख ही देत मामिनी,  
चित चोरि लेत मन हरन चाल चलत मत्त गयंद ।  
लाल लड़ैतौ लाड़िलौ श्रीलच्छमन,  
कुलभूपना विराजो पिय कोटि जुग वारने 'गोविंद' ॥

६६

[ अडानौ ]

प्रनभामि श्रीमद् विट्ठलम् ।  
वेद धर्म प्रमान कारन जीव मात्रग सुखकरम् ।  
कृष्ण निर्मल भक्ति तत्त्वादि शेष वर्नन तत्परम् ॥  
दास उव तत्र मनसि मायिक मोह संसय खंडनम् ॥  
श्रीवल्लभ आत्मनमखिल तत्त्वंपुरान स्रुतिरस पारजम् ।  
करुनानिधि 'गोविंद' दासं प्रभु कति भय नासनम् ॥

६७

[ अङ्गानौ ]

बल्लभ लाडिले हों तिहारे चरन कमल सरन ।  
 पावन त्रैलोक करन जन मन संताप हरन—  
 निरखत सुख रोम रोम पर संताप हरन ॥  
 सुर नर मुनि मन चकोर निरखत मुखचंद ओर—  
 किरन अभी पान गान एकौ टक न टरन ।  
 'गोविंद' प्रभु गोकुलेस राजत श्रीबल्लभ गृह—  
 श्रीविठ्ठलनाथ नवल गोवर्द्धन धरन ॥

६८

[ अङ्गानौ ]

बंदौ श्रीविठ्ठल चरनम् ।  
 नख सिख विमल कोटि किरनावलि जन मन कुमुद विकस करनम् ॥  
 धुज बज्राकुस चाप चंद्रमा रेखा कलस जवा भरनं ।  
 जवांकुर ते मंगल मेहि दृष्ट धातं भव वारिधि तरनं ॥  
 जैवक सकल काम पूरक निधि भावन एति गता सरनं ।  
 ते कुरवंतु बसो मम चेतसि 'गोविंद' प्रभु गिरिवर धरनं ॥

६९

[ मारु ]

मेरे विठ्ठल से प्रभु समान और न दूजो कोइ ।  
 हरि बदनानल श्रीबल्लभ सुत स्वरूप सोइ ॥  
 मात तात भ्रात ग्रहनि ग्रह सवै बिसराऊँ ।  
 श्रीविठ्ठलेस करुना तेँ पुष्टि भक्ति पाऊँ ॥

द्विजवर वपु घरि अबनीतल पवित्र कीनो ।  
कहत 'गोविंद' सरनागत को अभै दान दीनों ॥

१००

[ सारंग ]

श्रीवल्लभ नंदन रूप अनूप सरूप कल्यो न जाई ।  
प्रगट परमानंद गोकुल वसत हैं सव जगत को सुखदाई ॥  
भक्ति मुक्ति देत सबको निज जनको कृपा प्रेम वरखत अधिकारी ।  
सुख मय सुख रूप सुखद एकरसना कहँलौं वरनों 'गोविंद' बलिजाई ॥

वृ.सू.त—

१०१

[ वसंत ]

आयो वसंत रितु अनूप कंत नूत मोरे ।  
बोलत बन कोकिला मानो कुहू कुहू रस दोरे ॥  
फूली बनराजि जाइ कुंद कुसुम थोरे ।  
मधु राते मधु माते मधुप फिरत दोरे ॥  
हम तुम मिलि देखें लाल निकुंज भवन द्वारे ।  
'गोविंद' प्रभु नंद सुवन खेलत एक ठौरे ॥

१०२

[ वसंत ]

रितुराज नृप घर वसंत आयो । कामिनि रूप कंदर्प बैठायो ॥  
केतकी मालती जुही बंधायो । कोकिला कीर पिक कहे सुनायो ॥  
विविधद्रुमकुसुमवन विपिनछायो । सुरति दंपति केलि करि सिखायो ॥  
मानतजि वेगि चलि 'गोविंद' प्रभुपौरैनि अनुदिन करि अपनो मनभायो ॥



१०३

[ वसंत ]

रितु वसंत विहरन ब्रजसुंदरि साज सिंगार चली ।  
 कनक कलस भरि केमरि रस सौं छिरकत घोख गली ॥  
 कुसुमित नव कानन जमुना तट फूली कमल कली ।  
 सुक पिक कोकिल करत कुलाहल गूँजत मत्त अली ॥  
 चोवा चंदन और अरगजा लिये गुलाल मिली ।  
 ताल मृदग भाँक डफ महुवरि वाजत अरु मुरली ॥  
 मन्थो राग बसंत तिहि ओसर गावन तान मली ।  
 'गोविंद' प्रभु ग्वालनि संग डोलत सोभित संग अली ॥

१०४

[ वसंत ]

चलो चलो ले बसंत स्याम कौं बधावहीं ।  
 कनक कलस नूत मंजरि घोख नारि बधावहीं ॥  
 नव सत सजि चलिये जहाँ तहाँ चंदन अवीर उडावहीं ।  
 पंचमी आजु मनोज महोच्छव मंगल चित्र बनावहीं ॥  
 ठाढे पिय कुंज द्वारै वे देखो बेंनु बजावहीं ।  
 'गोविंद' प्रभु नंद सुवन सोमा अति पावहीं ॥

१०५

[ वसंत ]

चलो री वृंदावन बसंत आयो ।  
 स्रवन सुनो हो आली मोहन बेनु बजायो ॥  
 मान तजि बेगि मिलो राधा रानी ।  
 करि सिंगार कवहुँ फिरि बोलो मधुरी बानी ।  
 द्रुम प्रफुलित भए तहाँ कुसुम कुसुम बेली ।  
 रोस छाडि चलो संग किये जु सहेली ॥  
 नंदसुवन तेरो ईधरि रहे ध्यान ।  
 प्यारे के नाहिं कोऊ प्यारी तो एम जान ॥

किसलय सेज रची तेरे ई लिए ।  
 आभूषण गुहे तेरे ई लिए ॥  
 विविध सुगंध साजि सिधि बहु कीने ।  
 लाल लाडिलो तेरे अधरनि रंग भीने ॥  
 कोकिला कूजत वन नृत्तत हैं मोर ।  
 सुक पिक चहुँ दिसि करत मानो रोर ॥  
 त्रिविध पवन बहे तहां लागत सुखकारी ।  
 प्यारे कौ बिरह तेरो भयो है अति भारी ॥  
 पट्पद लों मीन जहाँ करत हैं मधुपान ।  
 अति मधुमाते तहाँ करत कंठ गान ॥  
 तन मन धन बारि देत मन अनंद ।  
 करत आरती श्रीमुख पर 'गोविंद' मकरंद ॥

१०६

[ वसंत ]

विहरत वन सरस वसंत स्याम । सँग जुवती जूथ गावें ललाम ॥  
 मुकुलित नूतन सघन तमाल । जाही जुही चंपक गुलाल ॥  
 पारिजात मंदार माल । लपटावत मधुकरनि जाल ॥  
 कुटज कदंब सुदेस ताल । देखत वन रीभे मोहनलाल ॥  
 अति कोमल नूतन प्रवाल । कोकिल कल कूजत अति रसाल ॥  
 ललित लवंग लता सुवास । केतकी तरुनी मानों करत हास ॥  
 यह विधि लालन करे विलास । वारने जाइ जन 'गोविंद' दाम ॥

१०७

[ वसंत ]

राधा गिरिधर विहरत कुजन आई हो वसंत पंचमा ।  
 घर घर द्रुम प्रति कोकिला कूजत बोलत वचन अमी ॥  
 गावत तान तरंग रंग मिलि मृदंग सों राग जमी ।  
 इहि विधि मिलि चलि' गोविंद' प्रभु संग सब ही भाँति रमी ॥

१०८

[ वसंत ]

नंद नंदन वृषभानुनंदिनी संग सरम रितुराज विहरन बसंते ।  
 इत सखा संग मोभित श्रीगिरिधर उत जुवती जूथ मधि राज हसंते ॥  
 सूरजा तट परम रमनीक पवन सुखद मारुत मलय मृदु वहंते ।  
 प्रफुलित नव मल्लिका मालती माधवी कुहू कुहू सब्द कोकिल हसंते ॥  
 विविध मुरनि गावत सकल सुंदरी ताल कठताल वाजत सगस मृदंगे ।  
 वीन बेना अमृत कुंडली किन्नरी भाँभ बहु भाँति आवत उपंगे ॥  
 चंदन सु बंदन अवीर बहु अरगजा मेद गोरा साख बहु घसंते ।  
 छिरकत परस्पर सुदंपति रस भरे करत बहु केलि मुसकनि हसंते ॥  
 देखि सोभा सुभग मोहे सिव विधि तहाँ थकित अमरेस लज्जित अनंगे  
 'गोविंद' प्रभु पिय हरिदासवर्यधर घोखपति जुवति जन मान भगे ॥

१०

[ वसंत ]

विराजत स्थाम मनोहर प्यारो । प्रभु तिहुँ लोक उजियारो ॥  
 सरस बसंत समय ब्रज सोभा श्रीब्रजराज विराजें ।  
 सुर नर मुनि सब कौतिक भूले देखि मदन कुल लाजें ॥  
 रंग सुरंग कुसुम नाना रंग सोभा कहत न आवे ।  
 नवल किसोर ध्यौ नवल किसोरी राग रागिनी गावें ॥  
 ताल मृदंग उपंग भाँभ डफ ढोल भेरि सहनाई ।  
 अद्भुत चरित रच्यो ब्रजभूषण सोभा बरनी न जाई ॥  
 चोबा चंदन अगार कुमकुमा उडत गुलाल अवीर ।  
 छिरकत केसरि नव वंसीवट कालिंदी के तीर ॥  
 दुरि दुरि सब ब्रज जुवती निरखति निरखि निरखि सचु पावें ।  
 तून तोरें वलि जाइ बदन पें परसत पाप नसावें ॥  
 या ब्रजकुल प्रभु हरि की कीरति सुर नर मुनि सब गावें ।  
 निरखि हरखि 'गोविंद' वलिहारी चरन रेनु धन पावें ॥

धमार—

११०

[ धमार ]

आयो रितुराज चलो वृंदावन स्याम खेलन होरी ।  
 सखा समाज साजि चले मोहन ठाडे नंदजू की पौरी ॥  
 हौं पठई तोहि लेंन लाडिले चलो हो वेगि किसोरी ।  
 छाँडो हो मान परति पांइनि हौं विनती करों कर जोरी ॥  
 कनक कलस लै भरो त्रिविध रँग केसू वेसरि घोरी ।  
 चोवा चंदन अग्र अग्रजा अवीर गुलाल मरि भोरी ॥  
 ग्रह ग्रह तें टेरो ब्रज सुंदरि करि सिंगार तन गोरी ।  
 झुंडन मिलि सब चलो हो गावत बालक मति अति भोरी ॥  
 ताल मृदंग रवाव भांभ डफ मृदंग मुरली धुनि थोरी ।  
 चितबनि में कछु टोना कीनो अरु लीनो चित चोरी ॥  
 सुनि ललिता के वचन चली उठि श्रीवृषमानुकिसोरी ।  
 जाइ मिली 'गोविंद' ब्रजपति सों भली बनी यह जोरी ॥

१११

[ जैतश्री ]

खेलत बलि मनमोहना रितु बसंत सुख होरी हो ।  
 सखा मंडली संग लिए बलिरामकृष्ण की जोरी हौं ॥  
 भेरि मृदंग डफ भालरी वाजत कर कठताल हो ।  
 सबतन मदन प्रगट भयो और नाचत ग्वालनिग्वालाहो ॥  
 ब्रज जन सब एकत भए घोखराइ दरवारा हो ।  
 इत बनी नवल कुमारिका उत बने नवल कुमारा हो ॥  
 जुवती जूथ चंद्रावली अपने जूथ श्रीदामा हो ।  
 भूमक चेतन गावहीं बाढ्यो है रंग अपारा हो ॥

बल मोहन एकत भए सुबल तोक एक कोदा हो ।  
 दुहुँ दिसि खेल मचाइयो बाढ्यो है मनसिज मोदा हो ॥  
 चमकि चली चंद्रावली सुबल तोक पर धाई हो ।  
 उतहिं कोपि प्यारी राधिका बलि रामकृष्ण पर धाई हो ॥  
 कमलनि मार मचाइयो जुरे हैं दुहुन के टोला हो ।  
 मधु मंगल पकरि कढेरियो मेलि गुदी में ढाला हो ॥  
 बहुत हँसे बल मोहना हँसी हैं सकल ब्रजनारी हो ।  
 छोरे हू छूटे नहिं परि गई गाढी फांसी हो ॥  
 हँसत हँसत सब आइयो गावत गारी सुहाई हो ।  
 सेना बेनी करि सबै बलि रामकृष्ण पकराई हो ॥  
 बल जूकी आंखि जु आंजियो पिय की मुरली छीनी हो ।  
 मन मान्यो फगुवा लियो पाछे जाइ वह दीनो हो ॥  
 इह विधि होरी खेलहीं ब्रजवासिनि सब सुख पायो हो ।  
 भक्तनि मन अनंद भयो 'गोविंद' इह जसु गायो हो ॥

११२

[ गोरी ]

खेलत मदनमोहन पिय होरी ।

लरिका संग सकल गोकुल क करत कुलाहल ब्रज की खोरी ॥  
 भवन भवन तें निकसी द्वार हूँ अति प्रफुलित मन नखल किसोरी ।  
 सोधो लिये कनक पिचकाई बेला भरि अरगजा घसि घोरी ॥  
 एक गुआलि गुलाल लिए कर एकनि लई बहुत कूर रोरी ।  
 एक पलास कुसुम रंग बरसत एक लिए बीरा भरि भोरी ॥  
 बाजत ताल मृदंग भाँभ डफ बिच बिच मोहन मुरली धुनि थोरी ।  
 मधुर बचन हँसि कहत परस्पर 'गोविंद' प्रभु लीनो चित चोरी ॥

११३

[ वसंत ]

खेलत फागु लाल गिरिधारी चलो राधेजू मान निवारी ।  
 इह औसर कछु और न हूँ है छिनु छिनु जोवन जात विथारी ॥  
 आई' सकल घोख की नारी नव मत आभरन अंग सिंगारी ।  
 बाजे विविध भाँति के वाजत गावत राग वसंत धमारी ॥  
 मोहन अर्यार गुलालनि भोरी चंद्रावलि केसरि पिचकारी ।  
 उठि चलि हिलिमिलि नंदलाल सों उर लागत भरि लै अंकवारी ॥  
 दूनी बचन सुनत आतुर भई आइ मिली वृषभानुदुलारी ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधरन कुंज में रची अनूपस केलि विहारी ॥

११४

[ जैतश्री ]

खेलत हैं नंदलाल ।

इत सब सखा मंडली राजत उत समूह ब्रजवाल ॥  
 वाजत सरस मृदंग भाँक डफ बीना वेनु उपंग ताल ।  
 छिरकत कुसकुमा अरु अरगजा उडत अवीर गुलाल ॥  
 गावत गारी मगन भरि गोपी मीठी परम रसाल ।  
 फगुवा मिस गिरिधर गहि आने लीन्हीं उर मनि माल ॥  
 रस बस भई सकल ब्रज वनिता अंग न कछू सँभाल ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय की बलिहारी अंबुज वदन रिसाल ॥

११५

[ जैतश्री ]

लालन के खेलत रंग रह्यो हो प्यारो सुंदर चतुर सुजान ॥  
 इतते श्रीहरि सकल सखा संग आए जमुना तीर ।  
 उतते श्री राधा जू आई' नव जुवतिनि की भीर ॥  
 तन तनसुख की सारी पहिरे' लाल कंचुकी गात ।

अध्व अतगोटा पीत विराजित भूखन विविध सुहात ॥  
 चोत्रा फुलेल अरगजा कुंकुम पिचकाईं सब हाथ ।  
 सनमुख जूथ परस्पर छिरकत आनंद उर न समात ॥  
 उड़त गुलाल अवीर चहुँ दिसि सित भयो साथ ।  
 स्याम सलोने अति रस लंपट धसि पिय लीनी हाथ ॥  
 मन भायो करि छाँडी मोतन लाडिली सुधा प्रवीन ।  
 जुगल रूप पर जुग जुग बलि बलि 'गोविंद' तन मन कीन ॥

११६

[ कल्याण ]

ढोटा दोऊ राइ के खेलत डोलत फागु हो ।

लालै जी देखै सो मोहियो और प्रति छिनु नव अनुरागु हो ॥  
 सखा संग सब बोलिकें घर घर ते देत सब गारि हो ।  
 सुनत कुँवर कोलाहल निकसीं धोख कुंवारि हो ॥  
 भूखन वसन जु साजियो और गजमोतिनि के हार हो ।  
 भूमक चेतव गावहीं हो घोखराइ दरवार हो ॥  
 बाजे बहोत बजावहीं डफ दुंदुभी कठताल हो ।  
 बलि मोहन मधि नाइका चहुँ दिसि नाचत ग्वाल हो ॥  
 पिचकाई कर कनक की हो अरगजा कुंकुम घोरी हो ।  
 बलि रामकृष्ण को छिरकहीं हो हँसि सब चली मुख मोरी हो ॥  
 कोलाहल सुनि आइयो हो श्रीवल्लभ सिरताज हो ।  
 सिंघ द्वार पै बैठियो बडडे गोप समाज हो ॥  
 ब्रज रानी तहाँ आइयो हो जहाँ बैठे नंद उपनंदा हो ।  
 सोधे ठाढी ले पियो धाँजत आंखि सुखंदा हो ॥  
 इहि विधि होरी खेलहीं अरगजा एक सुगंधा हो ।  
 विधि सों होरी लगाइयो पून्यो पूरन चंदा हो ॥  
 परिवा वसन जु साजियो न्हाहि घोहि आनंदा हो ।  
 'गोविंद' बलि वंदन करे' जै जै गोकुल के चंदा हो ॥

११७

[ कल्याण ]

नवल कुंवरि ब्रजराइ के लाल खेलत रस भरे भरे होरी हो ।  
 गौर स्याम तन राजहीं अरु बल मोहन की जोरी हो ॥  
 ऊँचे चढि जब टेरियो सुबल श्रीदामा भाई हो ।  
 स्रवन सुनत सब धाइयो बोले कुंवर कन्हाई हो ॥  
 मंदिर ते' सब सजि चले जाइ जुरे सिंघ पौरी हो ।  
 मोहन मुरली बजावहीं सुनत ब्रजबधू दौरी हो ॥  
 चहुँ दिसि ते' वाजे बजे' रुंज मुरभ डफ ताला हो ।  
 दुंदुभी डिम-डिम भालरी बिच बिच वेनु रसाला हो ॥  
 ब्रज जन सब एकत भए एक ओर ब्रजनारी हो ।  
 गावति गीत सुहावने हँसि हँसि देतव्व गारी हो ॥  
 अरगजा भरि भरि पिचकाई' अंचल बीच दुराई हो ।  
 बल राम कृष्ण कों छिरकहीं बदन मोरि मुसिकाई' हो ॥  
 कोपि सखा सनमुख भए अरगजा कुंकुम धोरी हो ।  
 वेरि सकल ब्रज सुंदरी एक एक करि दोरी हो ॥  
 जुवती जूथ मधि राधिका उत ब्रजराज किसोरा हो ।  
 जुग ससि रूप किरन पीवे लोचन चारु चकोरा हो ॥  
 सब सखियन मिलि मतो मत्यो हो मोहन कों पकराई हो ।  
 छल बल सौ नहिं पाइये हो किहिं मिस पकरे आई हो ॥  
 ललिता आगे' ले दौरी मोहन लीने वेरि हों ।  
 पिय प्यारी गाँठि जोरि के हो हँसत बदन तन हेरी हो ॥  
 गाल बहोत तुम मारते सुनो हो सखा बल भाई हो ।  
 जाइ कहो ब्रजराज सौ मोहन लेहु छिड़ाई हो ॥  
 इहि विधि होरी खेलहीं देत सकल आनंद हो ।  
 'गोविंद' बलि बलि बलि जाई जै जै जै गोकुलचंद हो ॥



घोख नृपति सुत गाइए जाके बसिये गाउँ । लाल बलि भूमका हो ।  
 वहोरि सुहागिनि गाइये जाको श्रीराधा नाउँ । ला० ॥  
 चली हैं सकल ब्रजसुंदरी नव सत साजि सिंगार । ला० ॥  
 गावत खेलत तहाँ गई जहाँ धोखराइ दरवार । ला० ॥  
 जाइ नैन मरि देखियो सुंदर नंदकुंवार । ला० ॥  
 नील पीत पट मंडिता उर गज भोतिन हार । ला० ॥  
 सखा संग अति रस भरे पहिरे विविध रंग चीर । ला० ॥  
 गति विचित्र कुलाहला और ब्रजवासिनि भीर । ला० ॥  
 डिमि डिमि दुंदुभी भालारी रुज मुरज डफतान । ला० ॥  
 मदन भेर राइ गिरि गिरी विच विच वैनु रसाल । ला० ॥  
 अति रस भरी ब्रज सुंदरी देति परस्पर गारि । ला० ॥  
 अंचल पट मुख दै हँसी सोहन बदन निहारि । ला० ॥  
 पहलो भूमक ताही को जाको श्री मोहन पूत । ला० ॥  
 देखत परे सिंग मोहिनी जुवती जन मन धृत । ला० ॥  
 दूसरो भूमक ताही को जाकी श्रीराधा नारि । ला० ॥  
 पिय प्यारी रूखे गये मन में चोख विचारि । ला० ॥  
 जुवती कदंब सिरोमनी श्रीराधावर सकुंवारि । ला० ॥  
 इत ब्रज ससि गुन नाइका बल अरु गिरिवरधारि । ला० ॥  
 एकनि कर बूका लिये एक गुलाल अवीर । ला० ॥  
 प्रमदा मन पर बरसहीं कूकें देत अहीर । ला० ॥  
 रतन खचित पिचकाइयाँ नव कुंकुम जल सों घोरि । ला० ॥  
 पिय मुख सनमुख हूँ छिरकहीं तकि तकिनवलकिसोरि । ला० ॥  
 स्याम सुभग तन सोहहीं नव केसरि के विंदु । ला० ॥

ज्यों जलधर में देखिए मनहुँ उदित बहु इंदु । लाल० ॥  
 जुवती जूथ मिलि घाइयो पकरे बल मोहन घाइ । लाल० ॥  
 नव केसरि मुख माँडि के छाँडि आँखि अँजाइ । लाल० ॥  
 इहि विधि होरी खेल हीं ग्याति वंधु सँग लाइ । लाल० ॥  
 पूरन ससि निसि डहडही पून्यो होरी लगाइ । लाल० ॥  
 परिवो सकल धोख जन मानु सुता चले न्हान । लाल० ॥  
 अरगजा अंग चहाइयो विमल बसन परिधान । लाल० ॥  
 दुतिया वंदन वाँधियो सिंघासन जुवराज । लाल० ॥  
 छत्र चँवर 'गोविंद' गहें श्रीवल्लभकुल सिरताज ।

लाल बलि भूमका हो ॥

१२२

[ नसत ]

होरी खेले गिरिधारी ।

नंदराइ को कुँवर लाडिलो सुरपति गर्व प्रहारी ॥  
 कुसुमित कुंज नए ब्रजमंडल मधुप करत गुंजारी ।  
 सुक पिक मोर कोकिला कूजत रितु अन्नूपम सारी ॥  
 सरसुता तट सदा बहति है विविध पवन सुखकारी ।  
 हौं पठई तोहि लेंन लाडिली तुव पथ देखि निहारी ॥  
 वेनु सवन सुनि भई अति व्याकुल श्रीवृषभानु दुलारी ।  
 जहाँ तहाँ ते धाई ब्रज सुंदरि जुवती घर को विसारी ॥  
 नख सिख साजि सिंगारु चली सब पहिरे कुसुम रंग सारी ।  
 नेत्रांजन सोमित ब्रजनागरि सेंदुर मांग सँवारी ॥  
 ताल पखावज रवाव भांभ डफ बेनां वेनु रसारी ।  
 लिए गुलाल अवीर अरगजा गावत मीठी गारी ॥

मच्यो बसंत राग तिहि औसर स्रवन सुनहु पिय प्यारी ।  
 हँसत हँसावत करत कुतूहल देत परस्पर तारी ॥  
 उठि चलो मान छाँडि मिलवहुँ तुमि नंदसुवन सुकुमारी ।  
 एतो हठ ठान्यो प्यारे पैं हौं कहि कहि पचिहारी ॥  
 भेटी जाय स्याम पै स्यामा रँग उपज्यो है भारी ।  
 'गोविंद' प्रभु गोपीजनवल्लभ कोटि, मदन छवि दारी ॥

१२३

[ हमीर कल्याण ]

सब ब्रज कौ सिरताज नंद सुत होरी खेलै ।  
 सुबल सुबाहु और श्रीदामा मधुमंगल जुवती दल पेलै ॥  
 कमलनि मार होत परस्पर मुख समूह की भेले ।  
 मधुर सुगंध केतकी ले ले मनहुँ काम की सेले ॥  
 ताल निसान पटह बाजे बजें मधि मृदंग धाधलं गधेले ।  
 स्याम बजाइ मधुर मुरली रव खग मृग मुनि मन ठेले ॥  
 अवीर गुलाल कुमकुमा चोवा छिरकिकरें बहु केले ।  
 मँहकि रह्यो सोधो चहुँ दिसि ते चली धरनी पर रेले ॥  
 इकले कर पकरे बलदाऊ जुरि आई सब छेले ।  
 अंग विचित्र बनाइ सवनि के नैननि काजर मेले ॥  
 छिडाइ लए फगुआ दे जसुमति काम नृपति की जेले ।  
 खेलत रंग रह्यो न कह्यो परै बिसद कीरती फैले ॥  
 घोख नृपति सुत स्याम तमाल राधा जु माधुरी बेले ।  
 खंजन मीन लजावन रस भरे सुंदर नैन बड़ेले ॥  
 खेलि फाग धर कौ चले सब गाव गीत पहेले ।  
 पिय प्यार दोइ स्रमित भए कहें 'गोविंद'माल लेले ॥

१२४

[ सारंग ]

सुंदर सुभग तरनितनया तट खेलन हैं हरि होरी हो ।  
 कांवरि भरि भरि कुमकुम कौ रँग सखी अरगजा घोरी हो ॥  
 बाजें ताल मृदंग भाँभ डफ मधि मुरली धुनि थोरी हो ।  
 मर बीना किन्नरी आदि दै बरनि सकें कवि को री हो ॥  
 मव जुवतिनि मिलि मतौ परस्पर पकरन स्याम कौ दौरी हो ।  
 पकरि स्याम कौ करि मन भायो मुख मंडित रँग गोरी हो ॥  
 आँखिनि अंजन आँजि विंदुली दे पटपीत भकभोरी हो ।  
 एक ठौर सब सखा विचारें मिलि बांधे पाट की नोरी हो ॥  
 गहि स्यामहि नंद के आगें दूढत दुलहिन गोरी हो ।  
 पूछो काहू लगन विचारे दिन थोरे अरु मोरी हो ॥  
 नंद जसोमति जानि हरखि जिय मगाइ दई भरि बोरी हो ।  
 मेवा बहुत मँगाइ भाँति के सखा सहित सब छोरी हो ॥  
 बहुरि निसंक तब खेलन लागे सर्वे कौ जीवन तोरी हो ।  
 प्रमुदित सब हुलसत ब्रज जन मव करत स्याम में खोरी हो ॥  
 नाचत ग्वाल करत कोलाइल सबनि लगी है डोरी हो ।  
 अवीर गुलाल उडाइ धूँध करि करत फेंट टकटोरी हो ॥  
 जैसे किसोर बरस सोडस के तैमी सुघर किसोरी हो ।  
 राधा मोहन हाटक भरकत मनि दुहुंन की छवि चोरी हो ॥  
 कुमकुम अरगजा कीच में पद थके चली चहुँदिसि मोरी हो ।  
 विथुरी अलक बदन छवि राजत ज्यों दामिनि घन डोरी हो ॥  
 मोहन कौ पटपीत रँगि कें रंगी हैं सारी तनसुख की धोरी हो ।  
 आनंद मगन होत पुनि घट तकि देत गगरिया फोरी हो ॥

व्योम विमान सबै सुर विथकित कहत तैसों श्री हो ।  
 कंचन कच चंवर धरि सबै जुरे आइ सिंघपोरी हो ॥  
 स्यामा स्याम स्रमित आतुर व्है सिंघासन इक ठौरी हो ।  
 बलि बलि ' गोविंद ' वीरी खवावें चिरजीओ इह जोरी हो ॥

१२५

[ गोरी ]

सब ब्रजकुल के राइ लाल मनमोहना ।

मन मोहना निकसे हैं खेलन फागु लाल मन मोहना ॥  
 नवल कुँवर खेलन चले । मन० । मुदित सखा संग ॥ लाल० ॥  
 स्याम अंग भूषन सजे । मन० । विसल बसन पहराइ ॥ ०० ॥  
 निकसि द्वार ठाढे भये । मन० । जहाँ तहाँ तें चली धाइ ॥ ००० ॥  
 विविध भाँति बाजे वजे । मन० । ताल मृदंग उपंग ॥ ००० ॥  
 रंज मुरज डफ दुंदुभी । मन० । कर कठताल सुरंग ॥ ००० ॥  
 जुवती जूथ मिलि धाइयो । मन० । भरि पिचकाई हाथ ॥ ००० ॥  
 चहुँ दिसिते वे छिरकहीं । मन० । भरत कुँवर गोपीनाथ ॥ ००० ॥  
 बहुरि सखा सनमुख भए । मन० । आगे दे बल वीर ॥ ००० ॥  
 जुवती गन पर बरस हीं । मन० । कुमकुम सुरंग अवीर ॥ ००० ॥  
 बहुरि सिमिटि ब्रज सुंदरी । मन० । मोहन लीने घेरी ॥ ००० ॥  
 एक मुरली ले भजी । मन० । एक कहे देहुँ कर ॥ ००० ॥  
 एक पीत पट गहि रही । मन० । फगुवा देहुँ कुँवार ॥ ००० ॥  
 ऐसे हम न पतीजहीं । मन० । गहने देहु मोती हार ॥ ००० ॥  
 ललिताललित बचन कहें । मन० । तुम सुनो हों गोकुल के राइ ॥  
 तों हम तुमकों जान देहिं । मन० । प्यारी राधा कों सिरनाइ ॥  
 प्यारी कर काजर लियो । मन० । आँजे पिय के नैन ॥ ००० ॥

अंचल पट मुख दे हँसी । मन० । मिलवति कर दे सैन ॥ ला० ॥  
 आलस अरुन अति रसमसे । मन० । अंजन खरेई विराज ॥ ००० ॥  
 जुगल कमल कर मुकुलित । मन० । मानो बैठे जुगल अलिराज ॥  
 अति रस भरी ब्रज सुंदरी । मन० । कछुव न अंगन संभार ... ॥  
 खसियत बलय कटि किंकनी । मन० । पिय संग वरत विहार ॥ ००० ॥  
 कुच पर कच लर विलुलिता । मन० । लागत परम सुदेस ॥ ००० ॥  
 मानो भुजंगम चहुँ दिसा । मन० । आए भ्रमृत पीवन राइ केस ॥  
 इहि विधि सब मिल खेलही । मन० । गावत गोरी राग ॥ ००० ॥  
 नवल कुँवर पर अति बढ्यो । मन० । प्रति दिन नव अनुरागु ॥ ००० ॥  
 जुवती जूथ मिलि उलटियो । मन० । अपने अपने टोल ॥ ००० ॥  
 पिय मुख देखत फूलही । मन० । प्रमुदित लोचन लोल ॥ ००० ॥  
 इहि विधि होरी खेलही । मन० । ब्रज जन संग लगाइ ॥ ००० ॥  
 घोष नृपति सुत वदन की । मन० । 'गोविंद' बलि बलि जाइ ॥ ००० ॥

१२६

[ कल्याण ]

श्रीगोवरधनराइ लाला अहो प्यारे तिहारे चंचल नेन विसाला ।  
 तिहारे उर मोहे बन माला जा पै मोही सकल ब्रजवाला ॥  
 खेलत खेलत तहाँ गए जहाँ पनिहारी की बाट ।  
 गागरि ढोरें सीस तें भगन न पावे घाट ॥  
 अरगजा कुंकुम घोरिकें प्यारी लीनो कर लपटाइ ।  
 अचकां अचकां आइकें भाजी गिरिधरलाल लगाइ ॥  
 नंदराइ के लाडिले बलि ऐसो खेल निवारि ।  
 मन में आनंद भरि रह्यो मुख जोवति सकल ब्रजनारि ॥

इहि विधि होरी खेलहीं ब्रजवाग्निन संग लगाइ ।  
गोवर्द्धन धर रूप पे हो 'गोविंद' बलि बलि जाइ ॥

१२७

[ गोरी ]

नवल कन्हाई हो प्यारे ऐसो भगरो निवारि ।  
दान कहाँ कौ हो लागै चले किन अपने मांगे ॥  
आवत जात मदा रही कबहुँ सुनी नहिँ कान ।  
अब कछु नई चलाइयो ए दूध दही कौ हो दान ॥  
मदा सदा हम दान लियो सुनो हो नवल कुंवारि ।  
और गैल बहै तुम गई पे दान हमारो मारि ॥  
ठाले ठूले ये फिरें चलो हमारे घर काम ।  
इन कीये न चलाइये पे ख्याली मुंदर स्याम ॥  
स्याम सखन सोँ यों कह्यो घेगे सबनि मंभाइ ।  
ढीट बहोत ये ग्वालनी पे मटुकीअ लेहु छिड़ाइ ॥  
गोचारन मिस विपिन में लूटत हैं वर नारि ।  
कहोंगी जाइ ब्रजराज सोँ ऐसोअ भगरो निवारि ॥  
मधुमंगल कह्यो कृष्ण सोँ दान लेहु बच्छ छाँड़ि ।  
इनसोँ दिन दिन काम हैं मति लेउ कछू बाढि ॥  
साँची कहत कै हँसत हो हमहिँ होत अबार ।  
सब सखियन सेना बेना करी गहने देहु मोतिन डार ॥  
मदनमोहन पिय हरषियो लियो हस्त करि हार ।  
अपने कंठ ले पहरियो गजमोतिन कौ चारु ।  
सब सखियन मिलि मतो मत्यो कीजे कौन उपाउ ।  
राधा गहने दीजिए और नहीं कछु दाउ ॥

ललिता विसाखा भाजियो राधा तजी अकेलि ।  
 'गोविंद'. प्रभु नव कुंज में पिय प्यारी की केलि ॥

१२८

[ गोरी ]

मनमोहना रसमत्त पियारो छांडि सकल कुल लाज ।  
 जस अपजस कोऊ कहो मोहि नाहिन काहू सों काज ॥  
 खरिक दुहावन हौं गई मिले ब्रजराज किसोर ।  
 गहि बहियो मोहि ले चलें ये आई तहां ते भार ॥  
 कुंजमहल क्रीड़ा करी कुसुमन सेज विछाड़ ।  
 सुरति सिथिल अति दंपति पैं रहे कंठ लपटाइ ॥  
 विविध कुसुम माला गुही सुंदर कर कमल सँवारि ।  
 प्यारी राधे कौ दे घालियो पहिरे' घोष मँभारि ॥  
 कुंजमहल बनि ठनि चले राधे को' दै सैन ।  
 चतुराई बरनी ना परै ए सकल रूप गुन एन ॥  
 नंदराइ के लाडिले धेनु चरावन जांड ।  
 प्यारी राधा बिन ज्यो' ना रहे छिनु छिनु कल्प विहाइ ॥  
 मध गोकुल के लाडिले जसुमति प्राण अधार ।  
 राधा के तुम लाडिले पैं जैसे नंदकुमार ॥  
 मदन मोहन पिय बस करे अपने गुन रूप सुहाग ।  
 चित्त परस्पर दंपती पैं प्रति छिनु, नव अनुराग ॥  
 इत मनमोहन राजहीं सत्ता सखन लियें संग ।  
 उत ते' आई ब्रज बधू भरत आपुने रग ॥  
 मोहन पकरे भेद सो' दई परस्पर सैन ।  
 प्यारी कर काजर लियो आजे पिय के नैन ॥



इहि विधि होरी खेलहीं जाति बंधु संग लाइ ।  
'गोविंद' बलिबंदन करें पेंसुनो हो गोकुल के राइ ॥

१२६

[ काफ़ी ]

मनमोहन ललना मनु हरयो हो ।  
हरयो मन सकल घोख सिरताज ॥  
ग्रह ग्रह ते' सुंदरि चलीं देखन ब्रजराज कुंवार ।  
निरखि बदन विथकित भई हो ठाढे हैं सिंह द्वार ॥  
डिम डिम पटह भांभ डफ वीना मृदंग उपंग तार ।  
गावत पेत सुवल श्रीदामा बाढ्यो है रंग अपार ॥  
इत राधिका प्रभृत चद्राबलि ललिता गोपी अपार ।  
उत मोहन हलधर दोउभइया खेल मच्यो है दरवार ॥  
रतन खचित पिचकाई करलिये छिरकत घोषकुमार ।  
मदनमोहन पिय रसमाने हैं कछुव न अंग सँभार ॥  
सिथिलित कटि बसन मेखला उर गज मोतिन हार ।  
नियुरी अलक बदन पर राजत गलित कुसुम सिरमौर ॥  
मोहन प्यारी सेना दै हलधर पकराये जाइ ।  
आपुन हँसत पीतपट मुख दै आये हैं आँखि अँजाइ ॥  
बहुश्चो सिमिटि सकल सखियन मिलि मोहन पकरे घाइ ।  
अधर माधुरी पिवत पिवावत मुरलीऽब लई है छिडाइ ॥  
खरिक सकल सिमिटि ब्रजवासी चले हैं जमून जल न्हाइ ।  
वारि कुंवर पर नंदरानी हो देत विप्रन बहु दान ॥  
दुतिया पाट सिंघासन बैठे छत्र चँवर सिरताज ।  
राजत सहित श्रीदामा बलि बलि बलि जुवराज ॥

स्याम सुभग तन अति राजत हैं अरगजा पीत सुवास ।  
‘गोविंद’ प्रभु पर सकल देवता वरखत कुसुम अकास ॥

१३०

[ काफ़ी ]

राधारवन सुभाइ कहीं । सुनि दूती री ।  
दूती री बिनती सुनि लै कान । कहीं सुनि दूती री ॥  
कोमल गात वात कोमल । सुनि० । दूतीरी मैं पाए पहिचानि ॥ कहीं० ।  
चितवत कठिन कठोर कठिन । सु० । मृग बिपान से जानि ॥ कहीं० ॥  
मुरलीनाद व्याध घटा । सु० । दीपक मुख मुसकानि ॥ कहीं० ॥  
भौंह धनुष लोचन साइक । सु० । बंधत बंध हिरनानि ॥ कहीं० ॥  
स्याम कृत जेते घन तेते । सु० । प्रगट देखि उनमानि ॥ कहीं० ॥  
अहि ताही कौ प्रान हरै । सु० । पय प्यावै जो आनि ॥ कहीं० ॥  
धन पै पत्नी तृपा व्याकुल । सु० । जल वरसें जहाँ रात ॥ कहीं० ॥  
पट्पद की इह चाल । सु० । अलि कुसुम लपटानि ॥ कहीं० ॥  
पहलें मन पाछें सर्वसु । सु० । ए दोऊ संग समान ॥ कहीं० ॥  
‘गोविंद’ प्रभु नंद सुवन के । सु० । चरन छुबो जिम पांनि ॥ कहीं० ॥

१३१

[ धनाश्री ]

अरी वह नंद महर कौ छौहरा वरजो नहि माने—  
प्रेम लपेटी अटपटी मोहि सुनावै दोहरा ॥  
कैसेक जाउ दुहावन गैया आए अघोर घोहरा ।  
नख सिख रंग वोरें और तोरें मेरे गृह कौ होहरा ॥  
गारी दै दै भाव जनावें और उपजावें मोहरा ।  
‘गोविंद’ प्रभु बलि बलि विहारी प्यारी राधा कौ मीत मनोहरा ॥

१३२

[ धनाश्री ]

कुसुमित कुंज भए कालिंद्री तीर । तहाँ सीतल निर्मल जू समीर ॥  
 आलिगत कूजत कोकिल कीर । बहत मंद सुगंध समार ॥  
 ले पिचकाई भरि सर नीर । छिरकि सुगंध डारें अवीर ॥  
 वृका वदन लियें बलवीर । जाइछिरको राधा सेत चीर ॥  
 बहुत सखा सखियन की भीर । सुर सुदरी सुनि मुनिमन धीर ॥  
 वेनु मृदंग बजावत आभीर । 'गोविंद' गुनि जन स्यामसरीर ॥

१३३

[ धनाश्री ]

बल्लभ खेलै हो अति रस रंग भरे होरी ।

बाजत ताल मृदंग भौंभ डफ बीना मुरली धुनि थोरी ॥  
 चोवा चंदन अगर अरगजा कुंकुम भरी कमोरी ।  
 तब प्यारी राधा धाइ अचानक श्रीलछमनमुत पर होरी ॥  
 ललिता चंद्रावलि मतो करि श्रीबल्लभ गहे भरि कोरी ।  
 हंसि मुख चूमि नैन अंजन दै बोलत हो हो होरी ॥  
 फगुना दियो मँगाय सवन को भूपन बसन पिछोरी ।  
 देत असीस जियो 'गोविंद' सुत जुगजुग अविचल जोरी ॥

१३४

[ सारंग ]

तें मोहन कौ मन हरयो तो बिन रह्यो न जाइ री प्यारी ।  
 कुंज महल बैठे पिपा नव पल्लव तल्प संवारि री प्यारी ॥

\* "प्यारी ते जाजन कौ मन" ... और "तो बिन रह्यो" ऐसा भी प्रारंभ है ।

वीच जुही विच सेवती और विच विच नवल निवारीरी प्यारी ॥  
 तुव पंथ वैठि निहारि के नव कुंज कुटी के द्वार री प्यारी ।  
 लोचन भरि भरि लेत हैं सुंदर ब्रजराज कुंवार री प्यारी ॥  
 अपने कर नख गूथहीं हो विविध कुसुम की चोली री ।  
 तेरे उर पहिरावही चलो वेगि उठि बोल री प्यारी ॥  
 कबहुँक नैननि मूँदि के करत तुव वदन ध्यान री प्यारी ।  
 तन पुलकित भुज भेंटही करत सुधाधर पान री प्यारी ॥  
 चंद देखि आनंद में ही तुव मुख की उनहार री प्यारी ।  
 इह छवि बाहि न पूजहीं कलंक विचार री प्यारी ॥  
 जदपि सकल ब्रज सुदरी कबहुँ न मन अरुभाइ री प्यारी ।  
 चातक जलधर बूँद ज्यों भुव जल तृपा न जाइ री प्यारी ॥  
 पिय कौ प्रेम सखी मुख सुन्यो तवै चली उठि धाइ री प्यारी ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय सों मिली रहसि कंठ लपटाइ री प्यारी ॥

१३५

[ मारंग ]

स्याम रंगीली चूतरी रंग रंगी है रंगीले दिहारी हो ।  
 अति सुरंग पचरंग वनी पहिरे श्रीराधा प्यारी हो ॥  
 चंपक तन कंचुकी खुली स्याम सुदेस सुदारी हो ।  
 माँडनि पिय पट पीत की ता ऊपर मोतिनि हारी हो ॥  
 प्यारी के सीस फूल सिर सोहे हो मोतिनि मांग सवारी हो ।  
 विविध कुसुम बेंनी गुही चंपक बकुल निवारी हो ॥  
 सदननि भलमली भूलही सिर सटकारे केस हो ।  
 कठुला खुंभी यजराय की मृगमद आउ सुदेस हो ॥

नक बेसरि अति जगमगे दूरि करें नव जोती हो ।  
 कंठसिरी मोतिसिरी बीच जंगाली पोती हो ॥  
 चौकी हेम जरायकी रतन खचित निरमोला हो ।  
 नोग्रही कर पोंहचिया हो खये बरा अति गोला हो ॥  
 कटि किंकिनी रुनभुन करें पग नृपुर भलकारा हो ।  
 चलत हंसगति मोहियो सोभा करत अपारा हो ॥  
 इडि दिधि बनि सुंदरी चली एसिक पिय पासा हो ।  
 कुंज महल मोहन मिले पूजी मन अभिलापा हो ॥  
 ब्रज वृंदावन भूपनी पिय प्यारी की जोरी हो ।  
 'गोविंद' बलि बलि जाइ नवल किसोर किसोरी हो ॥

१३६

[ सारंग ]

बरजो जसोमति अपनो लाल । जमुना तट ठाढो करत आल ॥  
 मेरी बाँह मरोरी तोरी माल । अरुकंचुकी फारी परमि गाल ॥  
 भरन न देत जल श्रीगोपाल । मुख पर डारत ले जु गुलाल ॥  
 मेरे माथे पति हैं रिसाल । सास नैनद मोहे करें जंजाल ॥  
 सुनि चकित भए लोचन विसाल । बैठे गोद 'गोविंद' प्रभुआएबाल ॥

१३७

[ सारंग ]

तू तो प्रीति की रीति न जानै एरी गँवार ।  
 जाकौ मन मिलाइ चित लीजे जासौ और बहीये नार ॥  
 फागुन में ही चोंप होतु है तू कहा जाने पिय की सार ।  
 अगवारे पिछवारे 'गोविंद' प्रभु गाशी देत उधार ॥

१३३

[ गोरी ]

गोरे अंग वारी गोकुल गाँव की ॥

वाकौ लहर लहर जीवन करै थहर थहर करै देह ।  
 धुकर पुकर छाती करै वाकौ बड़े रसिक सौ नेह ॥  
 कुअटा को पान्यो भरे नए नए लेज जु लेहि ।  
 घूँघट दावै दाँत सौ उह गरब न ऊतर देहि ॥  
 वाकौ तिलक बन्यो अँगिघा वनी अरु नूपुर भनकार ।  
 बड़े बगर तें निकरि नंदलाल खरे दरवार ॥  
 पहिरें नव रंग चूनरी अरु लावन्य लेहि संझोरि ।  
 अरग थरग सिर गागरी मुह भटकि हँसे मुख मोरि ॥  
 चाल चले गजराज की नैननि सौ करै सैन ।  
 'गोविंद' प्रभु पर वारिके दोजे कोटिक मैन ॥

१३६

[ गोरी ]

नव निकुंज बैठे पिया नव कुसुमनि संज सँवारी हो प्यारी ।  
 नवल नवल नव नागरी नवल बने गिरधारी हो प्यारी ॥  
 नव केंसर कौ चोलनां नवरंग पाग सँवारि हो प्यारी ।  
 नील पीत पट ओढनी नव सत वरमि कुँवारि हो प्यारी ॥  
 नवल नवल रितुराज सो खटरितु संग सुहाइ री प्यारी ।  
 नव पल्लव अंग ओप ते रतपति कौ मनुहार री प्यारी ॥  
 सप्त सुरनि धुनि वाज ही तान मान बंधान री प्यारी ।  
 तो विनु पिया न भावहीं लागत जैसे शानी री प्यारी ॥  
 तें लालन कौ मनु हरयो तुहि तुहि जपै साल री प्यारी ।  
 छिनु उठत छिनु बैठही छिनु में होत दुधा घरी प्यारी ॥  
 पिय कौ विरह मन जानि के विविध जु धरे सिंगार री प्यारी ।  
 नव सत अंग सँवारि के नव कुसुम धरं दल भार री प्यारी ॥

कुंज सदन बैठे पिया कुंजन कुंज के द्वार प्यारी ।  
 आई मिलि नव नागरी देखि मवै मुसकाइ री प्यारी ॥  
 अधर अमृत रम घूँट ही छिरकै मुख तमोल री प्यारी ।  
 झुंडन आई भूमि के झुंड मच्यो दै बाल री प्यारी ॥  
 कनक बेलि अंग सोहनी जैसे स्याम तमाल री प्यारी ।  
 तैसें पिय अंग सोहना कंचन की बनमाल री प्यारी ॥  
 मृदु मुसिकाइ के हँसि बोलत हैं मृदु बोल री प्यारी ।  
 कौककला गति ठानहीं उपजत रंग कलोल री प्यारी ॥  
 अरस परस सुख ऊपज्यो बाढ्यो रंग प्रमोद री प्यारी ।  
 'गोविंद' के मन ए बसों रसिक बढावन नेह री प्यारी ॥

१४०

[ गोरी ]

ठगत जुवति जन काहू महा ठग माई ।

डारत चितवनि मुरकी महा ठग माई री ॥

मुरलीमंत्र सुनाई । महा० । खेलत हँसत पासि मेलि । महा० ।

बीरी मरि खिराई । महा० । मननि मानि सिंगारि । महा० ।

चाचरि चेतकुलाई । महा० । निंदत नंद सुवन कहे । महा ।

सखा सबन बुलाई । महा० । जित हीं जाई तित ठाढे । महा० ।

चेरन लकुटी लपटाई । महा० । बगर बगर डगर । महा० ।

तबहिं और किसोर भोर । महा० । होत न छिनु प्यारो न्यारो । महा० ।

दिग तारा सुख देंन । महा० । 'गोविंद' प्रभु सग उठि धाई । महा० ।

जो जानें सो पताई । महा ठग माई री ॥

डोल—

१४१

[ सारंग ]

गहवर सघन निकुंज छाया तर शेषो डोल—  
 तहाँ नागरि दाउ प्रेम सो भूले ।  
 भूपन अंग बने हीरा मानिक जटित मानो—  
 धन तडिन छवे राजत नील पीत दुकूलें ॥  
 वीरी खात खभावत मुदित मन गावत—  
 सारंग राग तान ही सो मन ही मन फूले ।  
 केसर चोवा अवीर गुलाल उहें—  
 और फैली कपूर धूले ॥  
 मृदंग ताल डफ वीना मधुर सुर चहें ओर—  
 हूँढि उपमा काहि देउँ को सम तूले ।  
 इह सुख देखि कौन धीरज को धरै—  
 कहै सो 'गोविंद' सुर नर मुनि मन की गति भूले ॥

१४२

[ सारंग ]

भूलन डोल माई नवरंगी लाल ।  
 झुलवति सब मिलि ब्रज की बाल । छिरकि गुग्गुंध भुरकी गुलाल ॥  
 वाजत मृदंग ताल पखावज वीना रसाल । गावत मधुर सुर बालगोपाल  
 नाचत हंसत सब उघटत चाल । सुधिन रही कछु अखिया निहाल ॥  
 लटक लटक जात तरुन तमाल । बोलत पिकसुक मधुर रसाल ॥  
 कुंकुम रंग करे भाजन विविध भरे । लेत हैं निसंक सबै पिचका जु धरे ॥  
 उडत गुलाल लाल अवीर सुरसाल । रह्यो हैं गगनि छाई महो अमरे ॥  
 'गोविंद' प्रभुइह रसकहाँ लोवखानों ॥ जोई करिरहत ध्यान सोई कयो न जानों ॥



१४३

[ कान्हरो ]

कान्ह कनक हिडोरें भूलत रितु बसंत मुरारी ।  
 वाम भाग अब लावत राधा अंग अंग सकुंवरी ॥  
 पहिरें उदधि निचोल लाल कुंडल कपोल धुनि भारी ।  
 देत तरुनी झोटा मोटा पटरी जो कमल कर धरी ॥  
 हार भार कुच चारु चपल द्रग सहज चलत अनुहारी ।  
 मनहुं चारु खंजन खेलत वारिज उडुराज मँभारी ॥  
 कोउ ब्रज भाँम अनीर उडावे भरि भरि कंचन थारी ।  
 कोउ चोना चदन लिए ठाडी कोउ बीडा जलभारी ॥  
 कोउ ठाढी कर चँवर डुरावति बल दंपति अनुहारी ।  
 कोकिल धुनि वाजित्र बजावहिं गावहिं सरम धमारी ॥  
 कोउ अजुरी पुहूपनि बरसावहिं विश्रुत रूप निहारी ।  
 नंद सुवन 'गोविंद' प्रभु की यह लीला मंगलकारी ॥

फूलभाण्डली—

१४४

[ सारंग ]

देखि री देखि हरि के महल ।

चहुँ ओर फूली द्रुम बेली तमाल सोहे हरल ॥  
 कुंद माल की बनी तिवारी सुमन जूथिका सहल ।  
 भीतर भवन गुलाब निवारी करन केतकी पहल ॥  
 बहुत भाँति फूलन के झरोखा तामर कलसा रहल ।  
 फूलन बंदनवार सँवारी छाजे छबि सों छहल ॥  
 बोलत मोर कोकिला अलि गन और खगन की चहल ।  
 'गोविंद' प्रभु प्यारी सों मिलिके मधुर वचन हँसि कहल ॥

१४५

[ सारंग ]

देखिरी देखि भवन सुखकारी ।

फूलन सों रचि पचि कीने हैं श्रीवृषभान दुलारी ॥  
 लाल गुलाल के खंभ मनोहर छज्जेन की छवि भारी ।  
 चंपक बकुल गुलाब निवारो नीकी है चित्रसारी ॥  
 कुंदमाल की वनी तिवारी विविध पुहुप की जारी ।  
 सुमन जूथ के कलसा सोहत ता पर वंदनवारी ॥  
 भूमि रहे चहुँ दिसा भूमका गेंदन की छवि न्यारी ।  
 खेलत ता मधि लाल लाडिली मुदित भरत अंकवारी ॥  
 फूलन की पाग फूलन कौ चोलना फूलन पटुका घारी ।  
 फूलन के लहँगा सागी मधि फूलन अँगिया कारी ॥  
 फूलन की सेत फूलन के वदन फूलन की चौकी मनुहारी ।  
 फूलन वने गेंदुषा तकिया चहुँ दिसि फूलि रही फुलवारी ॥  
 फूलन पंखा कर लिये ठाढी फूलि रही ब्रजनारी ।  
 'गोविंद' प्रभु फूले अति सोभित रस फूले गोवर्द्धनधारी ॥

१४६

[ केदारो ]

रस मरे पिय प्यारी बैठे कुसुम भवन ।

कुसुमनि की सेज अरि कुसुम धितान तने--

तैसोई सीत मंद सुगंध पवन ॥

कुसुमनि के आभूषन कुसुमनि के परदा--

कुसुमनि के बीजना गुंजत अलि पिकरी सुख सवन ।

'गोविंद' बलि बलि जोरी सदाई विराजो--

सुख वरसत लालन राधिकारवन ॥

१४७

[ सारंग ]

राधा गिरिधरलाल मिलि बैठे हैं फूलनि मंडली राजें ।  
 बिच बिच कुंद गुलाब बिच बिच मोरसरी छवि छाजें ॥  
 अति विचित्र फूलन की तिवारी करन केतुकी कुंजो आजें ।  
 रायवेलि के खंभ मनोहर मधुकर मधुर सुर गाजें ॥  
 वरन वरन फूलन के फोंदना बंदनवार और समाजें ।  
 अति प्रवीन ललितादि सँवारत मदन गोपाल रीभित्रे काजें ॥  
 गावत राग सारंग सप्त सुर मधुर मुरली धुनि वाजें ।  
 'गोविंद' प्रभुकी या बानिक पर निरखि निरखि उडुपति जिय लाजें ॥

१४८

[ सारंग ]

फूलन की मंडली मनोहर बैठे जहाँ रसिक गिरिधारी ।  
 जाई जुही और कुंद केतकी रायवेलि सों सरस सँवारी ॥  
 चंपक बकुल गुलाब निवारी विविध भाँति कीनी चित्रसारी ।  
 बैठी तहाँ रसिकिनी राधा फूलन की पहिरें तन सारी ॥  
 बरन बरन फूलन के आभूषन फूलनि पाग बनी अति भारी ।  
 'गोविंद' प्रभु फले अति सोहत निरखि फूली वृषभान दुलारी ॥

१४९

[ सारंग ]

आजु हरि कुसुम चौखंडी बैठे देखें ।

कुसुम चोबार कुसुम की छरी कुसुम के कलस अलेखें ॥  
 कुसुम किवार कुसुम के परदा कुसुम वितान तन्यो ।  
 पिंछवारी कुसुम की बाँधी कुसुमासन सु बन्यो ॥  
 कुसुम की गादी कुसुम के तकिया कुसुम सों सेज बनारी ।  
 कुसुम सों कोमल दंपति बैठे कुसुम सिंगार सँभारी ॥  
 कनक कलस कुसुम वासित जल भरि राखे द्वै पास ।  
 कुसुम चँवर लै ठाठे द्वारे निरखत 'गोविंद' दास ॥

.१५०

[ सारंग ]

फूलन के कंजन में फूले फूले फिरत ।

बीनत फूल लाल ललना मिलि फूलन की फेंट भरत ॥

पिय प्यारी की बेंनी बनावत फूल के हार सिगार करत ।

‘गोविंद’ प्रभु प्यारी फूलन पर फूले फूले विहरत ॥

रामनवमी—

१५१

[ सारंग ]

प्रगटयो राम कमलदल लोचन ।

निरखि निरखि जननी कौसल्या मिटि गयो उर कौ सोचन ॥

देत दान दुज बंदीजन कौ दसरथ के दुख मोचन ।

‘गोविंद’ सुर नर तूर बजायो भए हैं जगत के रोचन ॥

१५२

[ कान्हरो ]

आजु बघायो दसरथराइ के चलो मखी देखन जाँहि ।

घर घर पुर आनंद भयो है फूले अँग न माँहि ॥

कौसल्या की कूख कल्पतरु प्रगट भए श्रीराम ।

देव लोक अरु भुव लोक में भूपन मन के काम ॥

दसरथ भागि सराहिए हो कौसल्या बढ भाग ।

नर नारी सब गावही उमगि उमगि अनुराग ॥

जुवती जूथ मिलि आवहीं हाथन कंचन थार ।

मानहुँ कमलनि ससि चढि चले नृप दसरथ दरवार ॥

भोतिन चौक पुरावहीं सथीये रचि दुहुँ वार ।

हैं ठाडे सब यों कहैं जियो राजकुमार ॥

बालक बृद्ध तरुन सबै भवन रह्यो नहि जाइ ।

ऐसो दिन माई आज कौ ऐसोई नित होइ ॥

भूषण वस्त्र पहरावहीं निकसि देत असीस ।  
 कुटुंब सहित सुत लाडिले जियो कोटि बरीस ॥  
 जिन जाच्यो सोई उन दीनों छिनु छिनु बढ़त हुलास ।  
 राम लला के रूप पै हो बलि बलि 'गोविंद' दास ॥

१५३

[ घनाश्री ]

वधावो श्रीदसरथराइ के' श्रीपति सिसु भए आय ॥  
 मरजादा पुरुषोत्तम प्रगटे वपु ललित रघुवीर ।  
 वसुधा भार दूरि करिवे कों आए हैं रनधीर ॥  
 ठौर ठौर तें मुनि सुनि आए प्रगट भए सुत चार ।  
 देखि मुखारविंद दुज बोले त्रिभुवन सोभा सार ॥  
 महाराज दसरथ तहाँ बैठे भूषण बमन बनाइ ।  
 जातकर्म विधि सों सब कीनी फूले श्रंग न मांड ॥  
 घर घर आनंद होत अजोष्या बंदनवार बंधाए ।  
 मोतिन चौक पूरि आँगन में मंगल कलस बनाए ॥  
 कनक थार बनाइ ले निकसीं जुवती जूथ तहाँ आई ।  
 नव सत साजि सिंगार किए तन गावति गीत बधाई ॥  
 मंगल सब्द करत द्विज जन सब होत नछत्र विचार ।  
 जे कछु चरित्र किये अरु करिहें कहत सबै निरधार ॥  
 मागध सूत पुरोहित, मिलि के' सुम आसीस सुनाइ ।  
 चिरुजीयो सुत चारि नृपति के जगपालक हरिराइ ॥  
 पंच सब्द द्वारे बाजत हैं रहे सकल जन भूल ।  
 प्रफुलित सुरपति तूर बजाए, बरखन लागे फूल ॥  
 देत दान दसरथ तिहि औसर मनमें आनंद पाइ ।  
 हय गज रथ पाटंवर भूषण सुरभी सरस बनाइ ॥

रतन जटित पालनो वनायो पोढे हैं रघुराइ ।  
 निरखि वदन प्रफुलित जननी तव वारत तन मन जाइ ॥  
 भृगुली कुलह पीत सिर मोभित भूपन विविध वनाइ ।  
 बाजूवंद पद्मोचीया कटुला सो वरनी नहि जाइ ॥  
 विविध भौति खिलौना ले ले खिलावत तहाँ माइ ।  
 मुसकत करत किलकारी देखि देखि सुख पाइ ॥  
 गावत गीत मनोहर वानी उर आनंद वढाइ ।  
 बहभागिन कौसल्या रानी चूमति लेत बलाइ ॥  
 नाचत हँसत सकल पुरवासी आयो है सुख देन ।  
 निरखि वदन राजा रघुपति कौ वारत कोटिन में ॥  
 सुर नर लोक आनंद भयो तव असुर संघारन आए ।  
 धर्म कर्म थापेंगे भूतल क्षों कहिके गुन गाए ॥  
 कहा वरनों वरन्यो नहि जाई वेदहुँ पाइत पाइ ।  
 श्रीरघुनाथ कमल मुख ऊपर 'गोविंद' बलि बलि जाइ ॥

१५४

[ धनाश्री ]

मेरो रामलला कौ सोहिलो सुनि नाचें सुर नारि ।  
 उमगि उमगि आनंद में डारे तन मन धन सब वारि ॥  
 ग्रह ग्रह तें सब सजि चली हो अपने अपने टोल ।  
 देत बधाई रहसि परसि परस्पर गावत मांठे बोल ॥  
 मंगल साजि सँवारि के हो हाथनि कंचन थार ।  
 मानों कमलनि संसि चढ़ि चले राजा दसरथ के दरवार ॥  
 अवध पुरी अति सोहहीं हो मंगल घुरे हैं निसान ।  
 मोतिनि चौक पुराइ के हो मंगल विविध विधान ॥

देव पितर गुरु पूजिके हो जातकर्म सब कीनी ।  
 द्विजवर कुल सनमानन देके दान बहुत विधि दीनी ॥  
 मागध सूत विरुदावली हो सूरज बंस बखानी ।  
 जाचक जन पूरन सब किये दान मान परिधानी ॥  
 विधि महेश सर सारदा हो देखि सिहात समोद ।  
 ध्यान धरे नहीं पाइये हो देखो कौसल्या की गोद ॥  
 विविध कुसुम बरसावहीं हो आनंद प्रेम प्रकास ।  
 रामलला के रूप पै हो बलि बलि 'गोविंद' दास ॥

श्रीमहाप्रभुजी उदखव—

१५५

[ धनाश्री ]

सब मिलि गावो आजु बधाई ।  
 श्रीमद् वृंदावन विधु प्रगटे आनंदनिधि ब्रजरार्ई ॥  
 तिलक तिलंग द्विजवर लच्छमन ग्रह आए भक्ति विस्तार्ई ।  
 वेद विदित सब जसु गावत मिलि वांधी बंदनवार ॥  
 वाजे' तूर तरुनी मिलि गावति निज मति सेवा सार ।  
 'गोविंद' प्रभु श्रीवल्लभ पद अंबुज सुमिरत भव निस्तार ॥

१५६

[ धनाश्री ]

श्रीमद् वृंदावन विधु प्रगटत आनंद कंद रूप धरे—  
 प्रगट भए श्रीलच्छमन भट गेह ।  
 अति कोमल पुलकित तन पूरत रासादि लीला—  
 निज जन पर बरसत नित ब्रजपति पदनेह ॥

अति निगूढ श्रुति विचार विसद करन पंडित जन—

झोटी काम सुंदर वपु आए द्विज देह ।

जग्य पुरुष कविजन कहें वार वार अस्तुति करें—

दास 'गोविंद' जिय में बसे गोकुलपति एह ॥

१५७

[ विलावल ]

श्रीवल्लभ वृंदावनचंद ।

अज्ञानांध निवारन कारन प्रगटे आनंदकंद ॥

मुदित भए मन दैवी जन के मिते सकल भव फंद ।

लुभित मए मन माइक जन के दृष्टि मूढ़ सति मंद ॥

जोग जग्य विच ध्यान अगोचर गुन गावत स्रुति छंद ।

करत पान सेवक चकोर लखि बलि बलि दास 'गोविंद' ॥

१५८

[ विभास ]

सदानंद मुख अनल आनंद मय श्रीवल्लभ द्विजवर अवतार ।

दैवी जीव उधारन कारन भूतल भक्ति क्रियो विस्तार ॥

श्रुति श्रीभागवत भगवद् गीता व्यासमूत्र कौ क्रियो विचार ।

मायावाद निवारि महाप्रभु सर्व वाद कीने परिहार ॥

अधम अनेक उधारे कृपा करि थाप्यो ब्रह्मवाद साकार ।

सेवा रीत सिखाइ स्वीयन कौ टारयो उर संताप अपार ॥

झोटी करौ विनु सेवा साधन ताते होत नाहें निस्तार ।

सन वच क्रम करि भज श्रीवल्लभ पावे प्रेम पीयूष सार ॥

'गोविंद' कहै श्रीविठ्ठल करुना दिनु कलि में नाहिन होत उद्धार ।

करि करुना भूतल में प्रगटे निज जन हेतु करन निरधार ॥



१५६

[ विभास ]

श्रीलछ्मन गृह संगलचार ।

सदानंद पूरन पुरूपोत्तम प्रगटे श्रीवल्लभ अवतार ॥  
 श्रीभागवत अरु भगवद्गीता व्याससूत्र कौ कियो विचार ।  
 सकल पुरान सास्र श्रुति स्मृति कौ महाविरोध कीनो परिहार ॥  
 मारग अनेक भंग करि महाप्रभु कृष्ण भक्ति कौ कियो प्रचार ।  
 विनु साधन अनेक जन उद्धरे श्रीलच्छमन सुत महा उदार ॥  
 सिव विरंचि सुक महा मुनि नारद सेस सहस्र मुख करत बखान ।  
 ध्रुव अवरीस प्रह्लाद विभीषण सचिपति अमर करत गुनगान ॥  
 इह विवेक वे ऊ नहिं जानत जो जानत दासोदर दास ।  
 श्रीवल्लभ पद रज धन 'गोविंद' कहत करो मेरे हृदै निवास ॥

१६०

[ सारंग ]

लालन पहिरत है नव चंदन ।

विविध सुगंध मिलाइ किये ब्रज जुवतिनि के मन फंदन ॥  
 लीतल मंद बहत मलयानिल मोहन मन कौ रजन ।  
 अंग अंग सोभा कहा वरना मनसिज मद के गंजन ॥  
 आरत चित्त विलोकत हरि सुख चलन चपल दृग खंजन ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय नसो जिय गिरिधर विरह निकंदन ॥

आक्षय्य तृतीया (चंदन) —

१६१

[ सारंग ]

आजु अति सोभित हैं नंदलाल ।

नव चंदन कौ लेप किए ता ऊपर मोतिन माल ॥  
 खासा कौ कटि बन्यो पिछोरा कुलह सरस बनी माल ।  
 कुंद माल श्रीकठ विराजित विच विच फूल गुलाल ॥  
 सारंग राग अलापत गावत अधुर सरस सुर ताल ।  
 'गोविंद' प्रभु की या छवि ऊपर मोहि रही ब्रजवाल ॥

१६२

[ सारंग ]

अक्षय तृतीया गिरिवर बैठे चंदन कौ तन लेप किए ।  
प्रफुलित वदन सुधाकर निरखत गोपी नयन चकोर किए ॥  
कनक वदन सिर बन्यो है टिपारी ठाढ़े है कर कमल लिए ।  
'गोविंद' प्रभु की बानक निरखत बारि फेरि तन मन जु दिए ॥

१६३

[ सारंग ]

चंदन पहारि आए हरि बैठे कालिंदी के कूल ।  
सघन कुंज द्रुम चहुँ दिस फूले ललित लता के मूल ॥  
कुंद माल श्रीकंठवनी अरु विच विच विविध भाँति के फूल ।  
एचिर प्रवाह बहत जमुना सधि तरु तमाल रहे हैं भूल ॥  
नाचत गावत वेनु बजावत सकल सखा लीने तब संगु ।  
'गोविंद' प्रभु की इह छवि निरखत होत नैन गति पंगु ॥

१६४

[ सारंग ]

सीतल उसीर ग्रह छिरको गुलाब नीर—

तहाँ बैठे पिय प्यारी केलि करत हैं ।

अरगजा अंग लगाइ कपूरजल अँचाए—

फूल के हार आछे हिए दरसत हैं ॥

सीतल भारी बनाइ सीतल सामिग्री धराइ—

सीतल पान मुख वीरा रचत हैं ।

सीतल सिन्धा बिछाइ खस के परदालगाइ—

'गोविंद' प्रभु तहाँ छवि निरखत हैं ॥

## जल क्रीडा—

१६५

[ सारंग ]

क्रीडत कालिंदी जल माँहि ।

नवल साजि सिंगार किए तहाँ श्रीराधा गल बाँहि ॥  
 आस पास सोमित ब्रज नारी मधि राजत नंदलाल ।  
 जल सीकर डारत चहुँ दिसि तें निरखि मुदित गोपाल ॥  
 आनंद मगन भए मिलि खेलत करत कुलाहल भारी ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय की इह लीला निरखि निरखि सब वारी ॥

१६६

[ मल्हार ]

गोविंद छिरकत छींट अनूप ।

उत वृषभानुनंदिनी राजत इत घनस्थाम स्वरूप ॥  
 पावन जल जम्बुना कौ निरमल करत विविध रस केलि ।  
 सजल बसन सोमित अंगनि में उठत तरंगनि रेलि ॥  
 कीनों बस गोवर्द्धनधारी वेद शृंखला पेलि ।  
 'गोविंद' प्रभु आनंदसिंधु में रहे मगन मन भेलि ॥

## स्नानाभ्यास—

१६७

[ टोडी ]

द्वेष्ट मास सुभ पून्यो सुभ दिन करत स्नान गोवर्द्धनधारी ।  
 सीतल जल हाटक घर भरि भग्नि रजनी अधिक सीतल सुखकारी ॥  
 विविध सुगंध पुष्प की माला तुलसीदल ले सरस सँभारी ।  
 कर लै संख न्हावत हरि को श्रीवल्लभ प्रभु की बलिहारी ॥

तैसेई निगम पढ़त द्विज आगें तैसेई गान करत मिलि नारी ।  
 जै जै सब्द चहँ दिसि ह्वै रह्यो इहि विधि सुख बरसत गिरिधारी ॥  
 करि सिंगार परम रुचिकारी सीतल भोग धरत भरि थारी ।  
 दै वीरा आरती उतारत 'गोविंद' तन मन धन दै वारी ॥

रथ—

१६८

[ विलावल ]

रथ की सोभा जात न बरनी ।

कंचन के सब साज बनाए विच विच मानिक जरनी ॥  
 रत्न खचित दोऊ कलस विराजत मुक्ता लट बहु बरनी ।  
 परदा के पट अरुन अधिक छवि तापर धुजा फरहरनी ॥  
 अस्य सिंगार दुहँ दिसि जा ते चरन चलत हैं धरनी ।  
 प्यारी सों अति मोद बढ़ावत और देखत डरनी ॥  
 रीझि बोलि लेत नंदरानी पुलकि प्रेम जल ढरनी ।  
 ब्रजजन हरखत निरखत नैननि 'गोविंद' पलकनि पटनी ॥

१६९

[ विलावल ]

तुम देखो साई हरि जू के रथ की सोभा ।

प्रात समें मानों उदित भयो रवि निरखि नेन अति लोभा ॥  
 मनिमय जटित अरु साज सरस सब धुजा चँवर चित चोभा ।  
 मदनमोहन पिय मध्य विराजत मनसिज मन के छोभा ॥  
 चलत तुरंगम चंचल भुव पर, कहा कहां इह ओभा ।  
 आनंद सिंधु मानों मकर क्रीडत दोउ, मगन मुदित मन गोभा ॥  
 उह विधि बनी ब्रज बीथिनि महियाँ देत मरुल आनंद ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय सदा बसो जिय वृंदावन के चंद ॥

१७०

[ मल्हार ]

तुम देखो माई रथ बैठे नंदलाल ।  
 अति विचित्र पहरि पट भीनो, उर सोहे बनमाल ॥  
 सुंदर रथ मनि जटित मनोहर, सुंदर हैं सब साज ।  
 सुंदर तुरंग चलत धरनी पर, रह्यो घोष सब गाज ॥  
 ताल पखावज वीन बांसुरी, बाजत परम रसाल ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय पर बरसत, विविध कुसुम प्रतिपाल ॥

१७१

[ मल्हार ]

तू मोहि रथ ले बैठि री यैया ।  
 इतकी ओर बैठिहे राधे, उतकी ओर बल भैया ।  
 गोप सखा सब संग चलेंगे, अरु गावेंगे गीत ।  
 बढेगी मेरे रथ की सोभा, सुख पावेंगे मीत ॥  
 ब्रजजन भवन भवन प्रति ठाढ़ी, देखन को मेरी आढ़ी ।  
 आरती लैके उतारि के मो पर, हूँ हैं मारग आढ़ी ॥  
 खुनत बचन आनंद मिधु में, मगन भई जसुदा माई ।  
 रसिक मनोरथ पूरन 'गोविंद' बैकुंठ तजि ब्रज आई ॥

१७२

[ जैतश्री ]

रथ पर बैठे मदन मोहन पिया, त्रिभुवन रूप निधान जू ।  
 अंग अंग सोभा कहाँ लौं बरनों, अल्प मति अभ्यान जू ॥  
 सिर सखी सोहै पगिया टेढ़ी, नीलांबर तिलक केसर कौ जू ।  
 मकर कुंडल कनक मनिमय, जतल के मोती बेसर कौ जू ॥

अधर सुधा मुरली धरें मोहन, धुनि सुनि मोही ब्रजनारी जू ।  
 कर कंकन कटि किंकिनि राजत, वाजत रुनभुनकारी जू ॥  
 नील पीत पर सोभित सुंदर, घन दामिनि विराजी जू ।  
 मोहन मोहिनी देख देख कें, बनी हैं अरुपम भॉति जू ॥  
 सुंदर स्याम सोभित हैं भालें, कंचन सुंदर रूप जू ।  
 ताल मृदंग जंत्र अति बाजें, ब्रघ री घम घमकार जू ॥  
 सप्त सुरनि मिलि सुंदरी गावें, सब अंवर जै जैकार जू ।  
 पवन मंद सुगंध सीतल बहे, रिसक्तिम बूंद विसाला जू ॥  
 मोर पपैया कोकिल कूजन, सोभित बरखा काल जू ।  
 इहि लीला रस कहां लों बरनों, निगम न पावे पार जू ॥  
 ए मुख नित अखंडन छाई, गिरि गोवर्द्धनलाल जू ।  
 निरखि नैन अधिक सुख उपजें, 'गोविंद' बलि बलिहारजू ॥

चर्पा ( मल्हार )—

१७१

[ मल्हार ]

आईं जु स्याम जलद घटा । चहुं दिसि तें घन घोरं—  
 दंपति अति रस रंग भरे बाँहजोटी, विहरत कुसुम बीनत कालिंदी तटा ॥  
 नेन्ही नेन्ही बूंदन बरखनि लाग्यो, तैसीये लहकन बीजु छटा ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय प्यारी उठि चले, ओढ़ें लाल रातो पट—

दौरि लियो जाइ वंसीघटा ॥

१७४

[ नट ]

चहुं दिसि तें घन घोर उनए वादर सघनां ।  
 गरजि गरजि तरपि तरपि दामिनि, भरपि कुँवरि डरपि प्रीतम—  
 के उर लगनां ॥  
 भिम काँवर सिर चूनरी अंचर, पिय पर तारति प्रेस मगनां ।  
 'गोविंद' बलि बलि पिय प्यारी रंग भरे, सुरति केल—  
 निसिउव निसि जगनां ॥

१७५

[ मल्हार ]

गरजत गगन उठे बदरा चहुँ दिसि, वरखारी आई आगम जनायो ।  
गुलाबी पिछोरा पाग गुलाबी, तैसोई गुलाब सिर धनुक तनायो ॥  
गुलाबी सिंहासन गुलाबी पिछवाई, गुलाबी कंठमाल धारिये ।  
इहि विधिसों गिरिधारी बिराजत 'गोविंद' प्रभु पर तन मन धन वारियो ॥

१७६

[ केदारो ]

† सघन घटा घन घोर नैन्हीं नैन्हीं वूदनि हो वरसे ।  
चहुँ दिस तें गरजत मंद मंद तैसिये कनक चित्रसारी—  
तामें पोढे पिय प्यारी तैसिये दामिनि अति दरसे ॥  
तैसेई बोलत मोर कोकिला करत रोर—  
उठत मन कलोल दंपति हो हिय हुलसे ।  
'गोविंद' बलि सुघर दोउ गावत, केदारो राग तान अति सरसे ॥

१७७

[ मल्हार ]

आजु ब्रज पर बरसत खासी ।  
देखत सुनत अधिक रुचि उपजत, तन मन होत हुलासी ॥  
आए मेघ चहुँदिस तें गरजत बिच-बिच चमकत चपला सी ।  
कोकिल सब्द करत द्रुम ऊपर, नाचत मोर कला सी ॥  
जल पूरित सगवर अति सोमित, पवन बहत मलिया सी ।  
सारस हंस चक्रोर सबै मिलि, कूजत हैं सुखरासी ॥  
देखि सकल सुख कहत परस्पर, मुदित भए ब्रजवासी ।  
करत केलि गिरिधर पिय, तहाँ कहें 'गोविंद' चरन उपासी ॥

† 'नन्हीं नन्हीं वूदनि सों बरसे' ऐसा भी प्रारंभ है

१ न्हानी न्हानी ( क ) = हो पिय बरसे ( क )

१७८

[ मल्हार ]

देखो माई उत घन इत नंदलाल ।

उत वादर गरजत चहुँ दिसि इत मुरली सब्द रसाल ॥

उत राजत है दंड इंद्र कौ इत राजत वनमाल ।

उत दामिनि चमकत है अति छवि इत पीतवसन गोपाल ॥

उत धुग्वा इत चित्र किये हरि वरखत अमृतधार ।

उत वग पाँति उडत वादर में इत मुक्ताफल हार ॥

उन कोकिल कौलाहल कूजत इत वाजत किंकिनी जाल ।

‘गोविंद’ प्रभु की वानिक निरखत मोहि रही व्रजवाल ॥

१७९

[ मल्हार ]

दुहुँ दिसि नेह उमगि धनु आयो ।

वरखत सुधा सुहात सेज पर हगखि मदन लपटायो ॥

आनंद केलि भेलि रस वुंदन वर विहार भरु लायो ।

‘गोविंद’ मुदित मुदित सुख ओल्हरि मनमथ मदन लरायो ॥

१८०

[ मल्हार ]

देख सखि वरसन लाग्यो सावन ।

गरजत गगन दामिनी चमकत रिभै लेहु मनभावन ॥

नाचत मोर रमिक मदमाते कोयल पिक बोलत हैं रिभावन ।

चहुँदिसि राग मलार सप्त सुर मगन भए सब गावन ॥

सुनि राधे अत्र कठिन भई रितु बिनु व्रजनाथ नाहि सुखपावन ।

जाइ मिली ‘गोविंद’ प्रभु कौ सब विरह विया जु नसावन ॥



१८१

[ मल्हार ]

पावस नट नटयो अखारो वृंदावन अवनी रग ।  
निर्त्तत गुन रासि बरुहा पपैया<sup>१</sup> सब्द उघटत<sup>२</sup>—

कोकिला गावति तान तरंग ।

जलधर तहाँ मंद मंद सुलप संच गति भेद—

उरपि तिरपि मानु<sup>३</sup> लेत मधुर मृदंग ।

‘गोविंद’ प्रभु गोवर्द्धन सिंघासन पर बैठे—

सुरभी सखा मध्य रीभे ललित त्रिभंग ॥

१८२

[ मल्हार ]

मदन मोहन बन देखत अखारो रंग ।

सुलप संच गति भेद बरुहा निते करे कोकिला कुहू कुहू तान तरंग ॥

उघटत सब्द पपैया<sup>४</sup> पियु पियु करै मधुव्रत गुंजमाल<sup>५</sup> सरस उपंग ।

‘गोविंद’ प्रभु रीभे सकल समा<sup>६</sup> सहित जलधर सुघर बजावत मृदंग ।

१८३

[ मल्हार ]

गावत रसिक राइ ब्रजनृपतिकुंवर ।

तीसरे सुरसंच बाँधि रतन खचित अधौंटी सोहत दच्छिन कर ॥

राग मल्हार अलापत चोखी ताननि मन हरचो गंधर्व खेचर ।

‘गोविंद’ प्रभु पर कुसुम बरसत कहत जै जै सकलाकलागुन—

प्रवीन हैं अति सुघर ॥

१८४

[ मल्हार ]

कौन करै पटतर तेरी गुन रूप राम राधा प्यारी ।

श्रीय<sup>७</sup> प्रभृति जेती जग जुवती वारि फेरि डारी तेररूप ऊपर ॥

राग मलार अलापति मकल कला गुन प्रवीन हैरी तू मुघर ।

‘गोविंद’ प्रभु को तू न्यायन वस करि कहत भले जु भले ब्रजराजकुंवर ॥

१ पपीहा (ख) २ उघटत और (ख) ३. मन लेत सरस मृदंग (क)

४. पपीहा(क,ख) ५ माल मानो (क) ६. समाज (क) ७ श्री अग प्रभृति(क)

१८५

[ मल्हार ]

लहेरिया मेरो भीजेगो वह देखो आवत है मेहु ।  
सुरंग रंग रँग्यो साँवरो अब ही धरेगो नेहु ॥  
सघन कुंज में चलो साँवरे आँट पीताम्बर देहु ।  
'गोविंद' प्रभु पिय हँसि कहें तो बढिहै अधिक सनेहु ॥

१८६

[ मल्हार ]

+ लाल मेरी सुरंग चूनरी देहु ।  
मदनमोहन पिय भगरो कोनें बद्यो सो अपनो पीतपट लेहु ॥  
तुम ब्रजराजकुमार कोन को' डर हों जु कहा कहोंगी मेहु<sup>१</sup> ।  
'गोविंद' प्रभु पिय<sup>२</sup> देहु वेग आवत चहुँदिस तें मेहु ॥

१८७

[ गौड मल्हार ]

वृंदावन अद्भुत छवि नाचत रंग भीने ।  
उघटत गति अति सुदेस सीस मुकुट दीने ॥  
काछिनी कटि अति सुदेस लाल अंबर सोहे ।  
'गोविंद' प्रभु गिरिवरधर ब्रजजन मन मोहे ॥

१८८

[ मल्हार ]

कुँवर चलो जु आगे गहवर मे जहाँ बौलत मधुरे मोर ।  
विकसित बन राजीव तहाँ कोकिला करत रोर ॥  
मधुरे<sup>३</sup> बचन सुनत प्रीतम के लीनो<sup>४</sup> प्यारी चित चोर ।  
'गोविंद' बलि बलि पिय प्यारी की जोर ॥

+ " पिय देहो मेरी सुरग " तथा "सुरग चूनरी देहु " ऐसे भी प्रारंभ हैं ।

१. को डरहोंष्य, कहा ( क ) को डर अब हों कहा ( ख )

२. गेहु ( क ग ) ३. अय ( ख ) ४ मधुर ( क ) ५ तब लीनों

१८६

\*स्याम देखि नाचें मुदित बन मोर ।

ता ऊपर आनंद उमगि<sup>१</sup> भरे सुनत मुरली कल घोर ॥  
 चहुँदिस तें कोकिल कल कूजत और दादुर की ठोर ।  
 'गोविंद' प्रभु सखा सग लिये बिहरत बलि मोहन की जोर ॥

१६०

[ मल्हार ]

दिन दिन होत कंचुकी गाढी ।

मजल स्याम घन रति रस बरखत जोवन सरिता वाढी ॥  
 अति भय भीत उरोज भुजन पर मोहन मूरति चाढी ।  
 'गोविंद' प्रभु मिलिबे के कारन निकसि करारे ठाढी ॥

१६१

[ सोरठ मल्हार ]

卐 वृंदावन कनक भूमि नितैत ब्रजनृपतिकुंवर ।

उघटत सब्द सुमुखी रसिक लेत अग्र तततत थैई थैई गति लेत सुघर ॥  
 लालकाछकटिकिकनो पग नू पुररुनभुनात बीच बीच मुरली धरत अघर  
 'गोविंद' प्रभु के श्रीदामा प्रभृति सखा करत प्रसंसा प्रेम भरि ॥

१६२

[ मल्हार ]

लाड़िलो लड़्याइ बुलावत धेनु ।

चढि कदंब घौरी धूमरि काजरि और पियरी पूरत मधुरें<sup>३</sup>सुर बेनु ॥  
 चुचकारत पोंछत सुंदर कर सकल सुमग सुख ऐनु ।  
 'गोविंद' प्रभु कौ मुखारविंद देखि हूँकि हूँकि आवत<sup>३</sup>स्रवत स्तन तें फेनु

\* 'देखो स्याम' • 'नाचें मुदित नचावत मोर' ऐसे भी प्रारंभ हैं ।

卐 'श्रीवृंदावन' ऐसा भी प्रारंभ है ।

१ भरि सुनत ( ख ग ) २ मधुर ( क ) सब स्रवत स्तन पें ( स ग )

१६३

[ मल्हार ]

कव की कहति प्यारी अजहूँ न रिस गई मोहन<sup>१</sup> मौन धरि—  
कहत कछु न री ।

कांनि न काहू<sup>२</sup>की करति सनमुख ही लरति—

ज्यों ज्यों वरजी न्यों त्यों भई अति दून री ॥

वावरी भई री प्यारी मेरे जान पिय कछो काहू कौ न कछो—

मानें तुव हृदय सून री ।

‘गोविंद’ प्रभु पिय चरन परसि<sup>३</sup>कें अँकों भरि मिले<sup>४</sup>—

रंग रह्यो जैसे हरद चूनरी ॥

हिंडोरा—

१६४

[ मल्हार ]

\* रंग मच्यो सिंघ हार हिंडोरे<sup>५</sup>व भूलनां ।

गौर स्याम तन नील पीत पट घन दामिनि इंदु विराजत—

निरखि निरखि ब्रज जन मन फूलनां ॥

उर पर वनमाला सोहै इंद्रधनुष मानों—

उदित मयो शोतिन माल बग पाँति सम तूलनां ।

वरसत नव रूप वारि घोष अवनि रतन खचित<sup>६</sup>—

‘गोविंद’ प्रभु निरखि कोटि मदन भूलनां ॥

१६५

[ मल्हार ]

नवल हिंडोरना हो भूलत मदनगोपाल ।

कुंज सदन विलास सोभित अति ही परम रसाल ॥

जुगल खभ सुरंग रोपे विविध चित्र सँवारि ।

अति अनूप सुहात विच विच सरस डांडी चारि ॥

१ मोहिनी मौन धरे ( क ) २ कछु करत ( क ) ३ परसि कटो ( क )

४. मिली ( क ) ५. फलित ( क )

६ ‘हिंडोरे<sup>५</sup>व भूलना’ अहो भूलत मेरो लाल रंग मच्यो ‘ऐसे भी प्रारन हैं ।

भूमका नव रंग पटकत लाल लटकन हारि ।  
 सिर कलस धुजा पताका, निरखे मखसुवारि ॥  
 ब्रज बधू जुरि आई, सब मिलि विविध भेष बनाइ ।  
 सुभग श्रीवृषभानकुंवरी, सखी मधि सुहाइ ॥  
 नैन सैन विलोकि पिय के, निकट बैठी आई ।  
 मुदित मन मिलि सहचरी, मुदित झुलाइ ॥  
 तरनतनया तीर सुंदर, विविध बहे समीर ।  
 लता कुसुमित भार मुकुलित, परसि पावन नीर ॥  
 मोर कोकिल हंस चातक, मधुप बोलत कीर ।  
 मंद बूंदन मेह बरसत, रुचित सुभग मरीर ॥  
 नील वसन मो अंग गोरे, पीत तन धनस्याम ।  
 अरम परस गवादिये भुज, विराजत सुख धाम ॥  
 देत झोटा सहचरी, ललिता विसाखा नाम ।  
 और सखी चहुँ चोर ठाहीं, गाय मुख गुन ग्राम ॥  
 जंत्र झोंक पखावज मुरली, मधुर बाजत तार ।  
 कोकिला कुल लाज सुनि जु, गावत राग मलार ॥  
 श्रीगिरिधरलाल की छवि, कहत न लेहो चार ।  
 निरखि 'गोविंद' दास तन मन धन दिये बलिहार ॥

५६६

[ मल्हार ]

भूलत मदनगोपाल हिंडोरना ।  
 नवल नवल ब्रज नारिनि संग कलोलना ॥  
 पावसरितु नव कुंज सघन घन गाजहीं ।  
 बोलत मोर चकोर हंस धुनि राजहीं ॥

पावन परसि लटकत लता सुहावनी ।

जमुना तट हरियारी भूमि मनभावनी ॥  
चंद्रवधू चटकत चपला चपला घनी ।

कारी घटा घुँसडे गगन आभा बनी ॥  
चंदन खंभ सुठार डांडी विच चार हैं ।

कंचन खंभ सुरंग मु लटकन हार हैं ॥  
पटुली हेम विछोना माजहीं ।

ता पर बैठे दंपति अति ही बिराजहीं ॥  
नखसिख रचे सिंगार सार बहु भाँति सों ।

अरसि परसि भुज ग्रीव मेलि अति खाति सों  
ललिता बिसाखा चंद्रभागा चंद्रावली ।

भामा स्यामा आदि सखी सब ही भली ॥  
झुकिझुकि झोटा देत मुहावनी नारि हो ।

रमकत भ्रमकत घमकिरहयो रंग भारी हो ॥  
प्यारी अति मकुँवारि मुकंचन बेली सी ।

सुंदर स्याम तमाल सो आतुर है लसी ॥  
कोटि काम लावनि कान्ह अरु कामिनी ।

मानों राजत घन स्याप संग सौदामिनी ॥  
प्रबल विहार विनोद श्रमति दोऊ भये ।

विवस होइ लपटाइ अंग अंग सो रहे ॥  
ताल मृदंग भाँक वेना बजे ।

मानों राग अनूप गान जुवती सजे ॥  
नाचत त्रिया सुधंग कृष्ण गुन गावहीं ।

तान मान बंधान सो भेद मिलावहीं ॥  
रसिक बिलास बन्यो श्रीगिरिधरलाल कौ ।

नित नौतन जस गावत 'गोविंद'दास कौ ॥

१६७

[ मल्हार ]

हिंडोरे माई भूलत गिरिवरधारी ।

सावन मास सरस घन गरजत, तैसिय भूमि हरियारी ॥  
 तैसिय रितु पावस सुख दायक, पवन चलत सुखकारी ।  
 तैसिय दादुर मोर करत सुर, कोइल शब्द उचारी ॥  
 ताल मृदंग और बेनु बाँसुरी, गावत हूँ ब्रजनारी ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय सदा विराजो, गिरि गोवर्द्धनधारी ॥

१६८

[ मल्हार ]

वृंदावन भूलत गिरिवरधारी ।

सावन मास सरस घन वरसत, तैसीय भौमि हरियारी ॥  
 फुले कुसुम सुभग जम्भुनातट, पवन बहत सुखकारी ।  
 निरखि निरखि सुख देत भोटिका, श्रीवृषभानुदुलारी ॥  
 दादुर मोर पपीहा बोलत, शब्द करत मनुहारी ।  
 गावत राग मलार भामिनी, पहिरे भूमक सारी ॥  
 वाजत ताल मृदंग बाँसुरी, नाचत दे कर तारी ।  
 मदनमोहन राधावर ऊपर, 'गोविंद' तन मन वारी ॥

१६९

[ मल्हार ]

हिंडोरे माई भूलत नंदकुंवार ।

सोहत संग सुभग श्रीराधा, करत विविध मनुहार ॥  
 पीत वसन राजत सांवल तन, प्यारी रचित सुरंग ।  
 नख सिख भूपन क्री सुंदरता, निरखत लजित अनंग ॥  
 थोरी वूँदनि वरसत- मेहा, बोलत चातक मोर ।  
 राग मलार श्रलापति ठाडी, मिलि सोहत चहुँ ओर ॥

ताल मृदंग रवात्र बांसुरी, वाजत वेन रसाल ।  
 अरस परस हँसि अंक भाल हैं, प्यारी मदन गोपाल ॥  
 गोपी सकल प्रेम रस माती, राजत रसिक विलास ।  
 रूप निधान निरखि गिरिधारी, प्रमुदित 'गोविंद' दास ॥

२००

[ अड़ानो ]

वंसीधर के निकट हरि भूलत रंग हिंडोरे ।  
 तैसीय घन घोटिक आयो तैसीय दामिनि मिलि मिलि दोरें ॥  
 तैसोई पपीहा टेरत पिय पिय तैसोई दादुर करत अति ठोरै ।  
 'गोविंद' प्रभु भूलत सन ही मन निरखि निरखि ब्रजनारी व्रनतोरें ॥

२०१

[ रामकली ]

नटवर भूलत सुरंग हिंडोरे ।  
 धरत चरन पटुली पर प्रीतम कर सौ परस्पर जोरे ।  
 गौरस्याम तन नील पीतपट मनु घन दामिनी जोरे ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधर शधा दोउ प्रीति निवाहत ओरे ॥

२०२

[ नट ]

भूलत नव रंग संग राधा गिरिधरन चंद—  
 सहचरी चहुँओर ठाड़ी आनंद भरि गावें ।  
 सप्त सुरनि राग रंग डफ ताल भेरि मृदंग—  
 सुधर राइ उदार तान मानिनी मिलि गावें ॥  
 वृंदावन जमुना तीर बोलत पिक मोर कीर—  
 मंद मंद गरजन घन मेघनि पुनि आवे ।  
 ब्रह्मादिक सिव सुजान मोहे सब सुर विमान—  
 पुष्प बरसा करत सब 'गोविंद' बलि जावे ॥



२०३

[ बिहागरो ]

भूलत लालन गिरिधारी भुंडनि आई आई ब्रजनारी ।

अरुन बसन साजे किंकिनी नू पुर बाजे गावे—

मानो कल हंस सोभा अति भारी ॥

घटा उनई आई दामिनी देत दिखाई बूदें—

बरखाई बज पगति न्यारी न्यारी ।

फूल रही फुलवारी द्रुमलता भार बारी—

कोकिला कूजत कुहूकुहू लाल मनुहारी ॥

भूलत पिय अरु प्यारी फूलत मन ही मन भारी—

हंसत परस्पर दे दे करतारी ।

गावत सुधर तान लेत सखी देत मान—

रसिक कुँवर पर "गोविंद" बलि बलि हारी ॥

२०४

[ मल्हार ]

सरसहिंडोरना हो भूलत कुंज में कुंजविहारी ।

ललितादिक सहचरी भुलावति मंग राधिका प्यारी हो ॥

खंभ सुरंग खचित मन हाटक डांडी चाहि सुहाई ।

लटकन लाल भूमका मुंदर निरखत मदन लजाई हो ॥

श्री वृंदावन भूमि मनोहर कालिंदी तट सोहे ।

कुसुमनि भार डार तर भूमति चितवत ही मन मोहे हो ॥

घन गरजत दामिनि अति चमकति मंद मंद सुखदाई ।

दादुर मोर चकोर कोकिला चातक रति उपजाई हो ॥

मुकुट तिलक कुंडल मुरली धुनि बनमाला गुंजा ।

पीतांबर नू पुर किंकिनी कटि युत बने हरि आनंद पुंजा हो ॥

वैनी गुही विच मँग मँवारी सीस फूल लटकारी ।

वैदी भाल कान करनेटी चंचल अँखियाँ सारी हो ॥

बेसरि ओट सुरग बेन पिकु कंठ सुधा मनिमाला ।  
 कठिन उरोज कंचुकी ऊपर सोहत पानि गोपाला हो ॥  
 खुभी चूनरी पाट कर पहुँची उदर सरोरुह रोमावली ।  
 पल्लव पानि मुद्रिका मोभित छुद्रावली गज गति चाली हो ॥  
 पाँडेनि जेहर मारी अंग मानो सोहत त्रिभंगी ।  
 वनी राधिका जु नखसिख लों सोहत संग त्रिभंगी हो ॥  
 हँसि हँसि मंद धरे पग अंचल मोहन कंठ लगावें ।  
 मुख चूमत गहि चिबुक साँवरो हुलसि अंग लपटावे हो ॥  
 कंचन लता तमाल बाल तरु धन दामिनि के अनुहारे ।  
 जुगल किमोर बने अति मुंदर लीला रूप पसारे हो ॥  
 सुदित महचरी राग अलापति झोटा देत सुखकारी ।  
 पूरन ब्रह्म निगम नाही पावत कौन भागि ब्रजनारी हो ॥  
 खोजत सेस महेस विधाता सोई सकल ब्रजवामी ।  
 कीन्हीं कृपा दास 'गोविंद'को दीनी आप खवासी हो ॥

२०५

[ मल्हार ]

\*भूलन आई ब्रजनारि गिरिधरलाल जू के सुरग हिंदोरना ।  
 लुभग कंचन तन पहिरें कसूभी सारी गावति परस्पर हँसि 'मुटु बोलना  
 इत नंदलाल रसिकवर मुंदर उत वृपभानुसुता छवि मोहना ।  
 मरकत रंग रह्यो पिय प्यारी 'गोविंद' बलि बलि रतिपति जोहना ॥

२०६

[ कान्हरो ]

हिंदोरी फूलनि कौ फूलनि की डोरी ।

फूले नंदलाल फूली नवल किसोरी ॥

फूलन के खंभ दोउ पटली फूलन की डांडी फूलन की जराव जरी है ।  
 फूलि फूलि जुवती देति देति हैं झोटा फूलो सदन तन डारत तोरी ॥

\* 'आछो मेरो लाल भूले भूलन' • भूलवन आई • पेटे नी प्रारंभ है ।

१. हँसि हँसि ( क )

फूले हैं सघन बन फूले हैं मधुवन फूलि फूलि जमुना बहत सलोनी  
'गोविंद' प्रभु आजु फूले फूले भूलत नदलाल वृषभानुकिसोरी ॥

२०७

[ मल्हार ]

हिंडोरे भूलत पिय प्यारी ।

तैमिय रितु पावस सुखदाइक तैसिय भोमि हरियारी ॥  
घन गरजत तैसिय दामिनी कोंधति फुही परत मुखकारी ।  
अवला अति सकुंवारी डरपति जिय पुलकि भरत अकवारी ॥  
मदन गोपाल तमाल स्याम तन कनक बेलि सकुंवारी ।  
गिरिधरलाल रसिक राधा पर 'गोविंद' बलि बलिहारी ॥

२०८

[ केदारो ]

दोऊ मिलि भूलत कुंज कुटीर ।

कंचन खंभ हिंडोरे विराजत - तरनि तनया तीर ॥  
प्रफुलित कुसुम मल्लिका मुकुलित रुचिद पद जहाँ बहत समोर ।  
सारस हंस मोर पिक अरु खग बोलत कीर ॥  
मम सुरनि मिलि गावत दोऊ वृषभानु कुंवरि बलवीर ।  
'गोविंद' प्रभु गिरिराजधरन पिय सुरति समट रनधीर ॥

२०९

[ घनाश्री ]

\*दंपति भूलत सुरंग हिंडोरे ।

गौर स्याम तन अति छवि लागत ज्यों घन दामिनि जात भोरे ॥  
विद्रुम खंभ जटित नग पटुली कनक डांडी सोभा देत चहुँओरें ।  
'गोविंद' प्रभु कों देति ललितादिक हरषि हँसति सब नवलकिमोरे

२१०

[ मल्हार ]

भूलत सुरंग हिंडोरे । राधा मोहन—  
 वरन वरन तन चूनरी पहिरें, ब्रजवधू चहुँ ओरें ॥  
 राग मलार अलापति सप्त सुरनि तीन ग्राम जोरें ।  
 मदनमोहनजू की या छवि ऊपर 'गोविंद' बलितून तोरें ॥

२११

[ कान्हरो ]

भूलत हैं नंदलाला भुलावें प्यारी राधा रतन जटित सुरंग हिंडोरे—  
 चहुँ ओर सखा सब ठाडे त्रिच मोहन ब्रजवाल ॥  
 राग कान्हरो सप्त सुर राजत गावत गीत रसाल ।  
 भुलावें लाडिली भूले 'गोविंद' प्रथु जसुमति वारे मनिमाल ॥

२१२

[ नट ]

भूलत ब्रजराजकुंवर संग भूलति वृषभानुसुता—  
 कुंज सदन में हिंडोरेना विराजहीं ।  
 अंग अंग सोहे सिंगार पीताम्बर नीलाम्बर—  
 गौर स्याम जोरी बनी परम छाजहीं ॥  
 बैठे भुज ग्रीवा धरे भांवते विनोद करें रतिपति अभिमान हरे—  
 सनमुख दृग साजहीं ।

सहचरी ललिता विसाखा चंद्रभागा मिलि गावति—  
 ताल मृदग भांभ मुरली मधुर वाजहीं ॥  
 गरज घन मंद मद चातक पिक मोर रटत—  
 पीय पियारी विहरत ब्रजतिय समाजहीं ।  
 'गोविंद' बलिहारी जाय निरखत लोचन सिराय—  
 गिरिधर छवि निरखत सत काम लाजहीं ॥

१ भूलत दोऊ लालन गिरिवरधारी—

देखत ब्रजजन मनुहारी ।

सग राधिका प्यारी गावत ऊँचे सुर मारी—

बाजत किंकिनी नूपुर धुनि उपजव न्याशी ॥

भोटा देत ललितादिक त्रिविध मलयारी—

इह सुख कहत न अनि आवें रसकत रंग रह्यो भारी ।

मंद मंद घन गरजे री स्रवननि को सुखकारी—

ध्यारो जुगल रसिक छबि पर 'गोविंद' बलि बलिहारी ॥

भूलत राधिका रस भरी ।

प्रथम ही पगु दियो पटुली सोधि आछी धरी ॥

कनक के द्वै खम राजत प्रीति बल्ली धरी ।

मदन मरुवा जगमगे नग नेह नग सों जरी ॥

एक लोचन वंशि चितवन एक साँचे ढरी ।

इहाँ हुलसि हुलसि सब गावहीं आनद उमंगि भरी ॥

चतुर चौकी अफपही नग नेह सों नग जरी ।

दास 'गोविंद' पिय विहारिन रीभ्रि गिरिधर बरी ॥

तैसोई वृंदावन तैमीये हरित भूमि तैसीये बीर बधू चलत सुहाई माई

तैसेई कोकिला कल कुह कुह कूजत तैसेई नाचत मोर—

निरखत नैना सुखदाई माई ॥

तैमीये नवरंग नवरंग बनी जोरी तैसेई गावत राग मल्लार मन भाई ॥

'गोविंद' प्रभु सुरंग हिंडोरें भूले फूले आछे रंग भरे—

चहुँ दिसि तें जु घटा जुरि आई ॥

पवित्रा—

२१६

[ सारंग ]

पवित्रा पहिरें श्रीगिरिधरलाल ।

श्रावन सुदि एकादसी मंदिर बैठे नंद के लाल ।  
जुवति जूथ मिलि आईं वधावन भरि भरि मोतिनु धार ।  
मेवा पकवान गोठ भरि लाईं श्ररोगत सखा सब ग्याल ॥  
निरखत देव मुनिजन हरखत वरखत मेव रझाल ।  
'गोविंद' प्रभु सदा सुख दीजे पचरंग पवित्रा वनमाल ॥

२१७

[ सारंग ]

पवित्रा पहिरत गिरिवरधारी ।

अति विचित्र अंग पहिरें भूपन लागत हैं सुखकारी ॥  
विविध पाट ले लेंके नीके कीये सरस समारी ।  
मंगल सव्द होत तिहें ओसर गावति मिलीं ब्रजनारी ॥  
प्रफुलित कमल वदन अवलोकति त्रिभुवन सोभा हारी ।  
'गोविंद' प्रभु गिरिराजधरन पर कोटिक मनमथ वारी ॥

२१८

[ सारंग ]

पवित्रा श्रीविड्डुल पहिरावत ।

व्रजजनस गिरिधरन चंद को निरखि निरखि सुख पावत ॥  
कुंकुम तिलक लिलाट दिए ब्रजजन मंगल जस गावत ।  
गजत ताल पखावज वेन सुर मुनि चहुँ दिशि तें सब धावत ॥  
हरखि हरखि अवलोकि वदन छवि नीराजन उतारत ।  
'गोविंद' प्रभु गोवर्द्धनवासी चरन कमल चित लावत ॥

२१९

[ सारंग ]

पवित्रा पहिरें श्रीविड्डुलनाथ ।

गिरिधर आदि बालक संग बैठे सोभित है सब साथ ॥  
अपने जन कीने हैं पवित्र लए दए पवित्रा हाथ ।  
'गोविंद' प्रभु करुनामय बरसत धरत कमल कर माथ ॥

## रक्षाबन्धन—

२२०

[ सारग ]

रच्छा बाँधति जसोदा मैया ।

सकल सिंगार विचित्र विराजित संग सोभित बल भैया ॥  
 कनक रचित सिंघासन बैठे तहाँ मिले गोप के छैया ।  
 ताल मृदंग संख धुनि वाजत सुनत ब्रज बधू धैया ॥  
 कर ले थाल लिलाट बनावत कुंमकुम तिलक सुहैया ।  
 दे अच्छत कर राखी बाँधति उर आनंद बहैया ॥  
 भाजन भरि पकवान मिठाई मेवा बहुत बनैया ।  
 अति सुगंध बामित बीरा ले देत आनि नंदरैया ॥  
 ईडुरि पिंडुरी वारति मुख पर जननी लेति बलैया ।  
 आरती उतारत मुख पर 'गोविंद' बलि बलि जैया ॥

२२१

[ सारग ]

सिंघ पौरि ठाडे मनमोहन द्विजवर रच्छा बाँधत आनि ।  
 परम विचित्र पाट डोरी राख रहे करपानि ॥  
 करत वेद मंगल धुनि हरखत दे आसीस सुभ जान ।  
 चिरजीओ नंदलाल कन्हैया ब्रज जन जीवन प्रान ॥  
 हरषि हरषि के देत विप्रन कों हीरा मानिक दान ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधर पद गाइ जस सदा रहे जिय ध्यान ॥

## नित्य-क्रम

जगावनो—

★

२२२

[ विलावल ]

अलहीयो तुम पर बारी हो नंदलाल ।  
 रेंनि वीती भोग भयो प्यारे जागो बाल गोपाल ॥  
 दूध दही पकवान लेहु तुम अंबुज नैन विसाल ।  
 सिंह पौर ठाडे बलदाऊ खेलत वल्लभ बाल ॥  
 धौगी धेनु दुहो मेरे प्यारे खरिक गये सब ग्वाल ।  
 घर घर अपनो दह्यो बिलोवे गावे गीत रसाल ॥  
 मुद्रित नैन सुनत माता के वन श्रवनी नंदलाल ।  
 'गोविंद' टेर सुनत उठि बैठे गोकुल के प्रतिपाल ॥

२२३

[ भैरो ]

उठु गोपाल भयो प्रात देखो मुख तेरो ।  
 पाछे गृह काज करो नित्त नेम मेरो ॥  
 उदित निस विंद तस दीसा ।  
 विदित भयो भाव कमलनि सों भँवर उडे जागो भगवान ॥  
 वदीजन द्वार ठाडे करत हैं किलोल बसंते ।  
 प्रसंसा गावे लीला अवतार ए बलवीर राजें ॥  
 अज हों देखों री मनमोहन मदनमोहन पिय मान मंदिर ते',  
 बैठे निकसि आइ छाजें ।  
 लटपटी पाग मंदार माल लटपटात मधुप मधु काजें ।  
 'गोविंद' प्रभु के जु सिथिल अरुन दौऊ विथकित कोटि मदन साजें ॥

२२४

[ विभास ]

जागो कृष्ण जसोदा जू बोले' इह औसर कोउ सोवे हो ।  
 गावे गुन गोपाल ग्वालिनी हरपित दह्यो बिलोवे हो ॥



गोदोहन धुनि दूर रख्यो, ब्रज गोपी दीप संजोवे हो ।  
 सुरभी हँक बछरुवा जागे, अनिमिष मारग जोवे हो ॥  
 बैन मधुर धुनि महुवरि बाजे, गोप गहें कर सेली हो ।  
 अपनी गाइ सब ग्वाल दुहत हैं, तिहारी गाइ अकेली हो ॥  
 जागे लाल जगत की जीवनि, अरुन नैन मुख सोहे हो ।  
 'गोविंद' प्रभु दुहत धेनु भौरी, गोप बधू मन मोहे हो ॥

२२५

[ रामप्री ]

दरस मोहि दीजे हो महाराज ।  
 भोर भयो रैनि वीती अब तो तिमिर जात है भाज ॥  
 ब्रज जुवती मही सथति मुदित मन, रहे भुवन सब गाज ।  
 सखा सिंहपौरि टेरतु हैं, सोभित सब समाज ॥  
 दूध दही नवनीत मिठाई, सिद्ध कियो सब साज ।  
 विनु देखे विरहानल बाढ्यो, तजी लोक की लाज ॥  
 'गोविंद' टेर सुनत उठि बैठे, भए सबनि के काज ।  
 जसुमति गृह उदयो हो मानों, रवि चौदह भुवन सिरताज ॥

२२६

[ विभास ]

प्रात उठे गोपी ग्वाल सब आए नंद द्वार, मदनमोहन को मुख देखनको ।  
 मातकहत उठी लाल बानी सुनत जाको, देख्यो मुख त्रिविध तापहरनको ।  
 संगल सुति गान करत द्वारद्वार ठाड़ी भई, गुनगावें गायक तुव करनको ।  
 देख मुख ब्रजजन ठाईं ग्रेह माथे, ले घट निकसीं जमुना जल भरन को ।  
 मन में विचार करत कहिये ले उपाय, करो प्रान प्यारे मिलन को ।  
 'गोविंद' प्रभु चलै वन संग ले ग्वालबाल, नैननि सैन करत चारत गोधनको ।

२२७

[ विभास ]

भोर भए उठि सोवत सुन काँ, बदन कमल निरखी नँदशानी ।  
 प्रमुदित मन सुत के गुन गावति, राग विभास सरस मृदु बानी ॥  
 जागो प्राण जीवन धन मेरे करहु कलेउ अपने जिय जानी ।  
 दूध दही पकवान मलाई, खीर खॉड माखन मधु सानी ॥  
 'गोविंद' प्रभु सुनत उठि बैठे, मात चरन परम हिते सानी ।  
 नंदनंदन कौ मुखारविंद मकरंद, पीवत ब्रजजन न अघानी ॥

२२८

[ विभास ]

सदनमोहन पिय भयो न भोर ।

प्राची दिस नहि अरुन देखियत, अरु सुनियत नहि वन खगगेर ॥  
 ग्रहत कंठ परस्पर दंपति पिय, विश्लेष कातर अति जोर ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय रसिक सिरोमनि, प्यारी के वचन लियो चितचोर

२२९

[ विभास ]

मेरे प्राण जीवन गोविंदा ।

दिनमनि उदित उठी अलि सैनी, निकसे हैं अरविंदा ॥  
 गोदोहन धुनि पूरि रह्यो ब्रज, निगम पढत द्विज छंदा ।  
 संग सखा द्वारे टेरत हैं, तुमको आनंदकंदा ॥  
 उठहु लाल देखो मुख तेरो, तुम हो विरह निकंदा ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय उठे हैं, एसभरे मानो निकस्थो घटाते चंदा ॥

२३०

[ रामश्री ]

रैनि विदा भई मेरे प्यारे ।

प्राची दिसा अरुन भए वादर, छर दीए दई ॥  
 चहुँ दिसि घोष सुनो सवननि, ब्रजनारी मथत मही ।  
 छाँडो नीद जागो बलि जाऊँ, विरह न जातु सही ॥

१. पिय जानि सिरोमनि ( च ) प्रभु रज्य मत्त परस्पर प्यारी ( ज )

वन में बनचर करत कुलाहल, चक्रवा पीर गई ।  
 दूध दही पकवान लेहु तुम, माखन अरु लुचई ॥  
 कहो सिगार विविध पर भूषन, केती बार कही ।  
 वचन सुनत सेज उठि बैठे, 'गोविंद' टेरत ही ॥

२३१

[ रामग्री ]

ब्रजबधू हरिदरसन को आर्ह ॥

सिंह पौरि ठाही सुनि जसुमति, भीतर भवन बुलाई ॥  
 अति आदर सों सोवत सुत कों, वदन उधारि दिखाई ।  
 चित्र लिखी सी ठाही चितवति, निरखति नैन सिराई ॥  
 दूध दही पकवान विविध ले, करि जगाई ।  
 'गोविंद'प्रभु मुख निरख विकल भई,मानोरक महानिधि पाई ॥

कलेऊ—

२१२

[ आसावरी ]

आजु गोपाल कलेऊ न कीनो ।

सखा टेरि सुनि निकसे वनको, अँटयो दूध घूँट नहि पीनो ॥  
 मैं बहुते समुभाइ कह्यो पै, मेवा माखन रंच न लीनो ।  
 अय हौं कहा करो मेरी सजनी, सुपरि सुपरि मेरो तन छीनो ॥  
 पटरस भोजन विधि सों कीनो, पाँइ लागिहों करति आधीनो ।  
 जाहि देहुँ 'गोविंद'प्रभु के कर, पाक परोसि बाँटि ले दीनो ॥

२३३

[ आसावरी ]

कलेऊ कीजिये नंदलाल ।

खीर खाँड माखन अरु मिसरी, लीजे परम रसाल ॥  
 सद्य दूध धौरी कौ अँटयो, तुम कों ही गोपाल ।  
 वेनी बढे होय बल की सी, पीजे हो मेरे लाल ॥  
 हौं वारी या वदन कमल पर, चुंबो सुंदर गाल ।  
 'गोविंद'प्रभु निय भोजन कीनों, जननी वचन प्रतिपाल ॥

हैं बलि बलि जाऊँ कलेऊ लाल कीजे ।

खीर खॉड घृत अति मीठो है, अब कौ कोर बच्छ लीजे ॥  
 बेनी बहे सुनो मनमोहन, मेरो कह्यो जु पतीजे  
 आँटयो दूध सद्य धौरी कौ, सात घूंट भरि पीजे ॥  
 चारनें जाऊँ कमल मुख ऊपर, अचरा प्रेम जल भीजे ।  
 बोहोरयो जाइ खेलो जमुना तट, 'गोविंद' संद करि लीजे ॥

मंगला—

आजु गिरिधरलाल नीकी वानक बने ।

लटपटी पाग मिह लटकि रही अकुटी तर—

अर्ध मीलित नैन जुग निस उनीदे बने ॥

तिलक खंडित अधर गंड अंजन रेख—

सरगजी माल उर विविध साँधे सने ।

बसन पलटत सुरति बेंन अंग अंग प्रति—

निरखि 'गोविंद' रमिक राधिका मन मने ॥

आजु बनयो ब्रजराज पियारो, ब्रजवनिता मिलि क्यों न निहारी ।  
 लटपटी पाग छूटी अलकावलि, अरुन नैन ब्रज लोचन तारो ।  
 सिथिल गात जो जँभात आलस भरे, डगमग चरन धरत दुख हारो ।  
 कोटिचंद रवि की दुनि हारी, कोटिक रनिपति छवि पर वारो ॥  
 विनु देखे गिरिधर मुख छिनु छिनु, होत भवन अति भारो ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय करो हो कृपा नित, गाइ गोपकुल काँ रखवारी ॥

अंग अंग सुंदर ललनारी, बलि बलि वानिक पर ।

सानो गजराज कलभ अति मद गल, लटकत शाकत धुनत कर ॥

अलकावलि विच कुसुम विराजत—

मृगमद तिलक खुल्यो मोतिन लर ।  
नेन विसाल कृपा रस सिथलित<sup>१</sup>—

‘गोविंद’ प्रभु छत्रि लागति री धोखराज लडिले सुदर वर ॥

२३८ [ विभास ]

तू आजु<sup>२</sup> देखिरी मदनमोहन ए बलवीर राजें ।  
मदनमोहन पिय मनिमंदिर तें बैठे<sup>३</sup> निकसि आई छाजें ॥  
लटपटी पाग \*मरगजी माला\* लपटात मधुप मधु काजें ।

‘गोविंद’ प्रभु के जु सिथिल अरुन द्रग देखियत कोटि मदन लाजें

२३९ [ विभास ]

श्रीगिरिधर मुख प्रात काल देखों ।

परम माधुरी आनंद मूरति नैननि भरि अवरखों ॥  
सोभा सदन कोटि मदन दारनें विसेखों ।  
तब ही आनंद होत सखी जब ‘गोविंद’ प्रभु देखों ॥

२४० [ रामग्री ]

हरिमुख निरखि निरखि न अघात ।

विरहातुर उठि अपने ग्रह ते’ आई सत्र अलसात ॥  
अधर अंजन सवन नूपुर नैन तंबोलनि खात ।  
अलक बेसरि बसन पलटे कंकन चरन सुहात ॥  
सिथिल अंग सुकेस छूटे अरुन नैन जंभात ।  
कमल नयन सों लगन लागी तजे सुत पति तात ॥  
निरखि ‘गोविंद’ प्रभु चकित भए आई सत्र परभात ।  
सेन सों संकेत कीन्हो चलीं सत्र मुसिकान ॥

१ मीतल ( क ) २ अत्र देखि री देखि ए बलवीर मोहन ( क )

३ बैठे ( क ) ४ उरमाक मरगजी ( ख ग. ) ५ लटपटात

मत्त मधुप ( ख ग )

२४१

[ विलावल ]

प्रातः समै स्यामा दर्पन ले अरस परस मुख कमल निहारत ।  
 रजनी जनित रंग सुख सचिंत निरखि निरखि उर नैन सिरावत ॥  
 सिथिल सिंगार विचित्र बनावत ठौर ठौर रति चिह्न दुरावत ।  
 'गोविंद' सखी देख दंपति सुख तन मन धन या छवि पर वारत ॥

२४२

[ विलावल ]

प्यारी के महल तें उठि चले भोर ।

सखी वृंद अवलोकि अग्रस्थित ढकत नील कंचुकी पीतपट छोर ॥  
 राधा चरित विलोक परस्पर तेज हास इत उत मुख भोर ।  
 'गोविंद' प्रभु ले चले दगा दें नागर नवल सभा चित चोर ॥

२४३

[ रामकली ]

आवत ललन पिया रस भीने ।

सिथिल अंगडगमगत चरन गति मोतिन हार उर चीने ।  
 पारिजात मंदार माल लपटान मधुप मधु पीने ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय तही जाऊ जहाँ अधर दसन छल कीने ॥

२४४

[ विलावल ]

आजु अति खरेई सिथिल देखियत रस भरे लाल ।

सब निसि जागे और सिथिल अरुन दोउ अंबुज नैन विसाल ॥  
 सिथिल भूपन कटि सिथिल वसन अरु सिथिल अरगजी माल ।  
 लटपटी पागसिर सिथिल अलकावलि अगलित कुसुम गुलाल ॥  
 मिथिल सिखंड सीस लटकि रहे आए भोर डगमगत चाल ।  
 सिथिल वैन कछु कहत आनकी आन 'गोविंद' प्रभु पिय हो वेहाल ॥

२४५

[ विलावल ]

लालन जहाँ जाउ जाके रस लंपट अति ।  
 आलस नैन देखियत रसमसे प्रगट करत प्यारी के रति ॥  
 अधर दसन छत बसन पीक सह अरु कपोल स्रमविंदु देखियति ।  
 नख<sup>२</sup> लेखन तन लखी स्याम पर जय पताक जीत्यो रतिपति ॥  
 कितव बिबाद<sup>३</sup> तजहु पिय हम सों जैरों तन स्याम तैसेई मन हो अति  
 'गोविंद' प्रभु पिय पाग सँवारहु<sup>४</sup> गिरत कुसुम सिर मालति ॥

२४६

[ विलावल ]

बलि बलि पाँउ धारिये आजु कछू मेरो लढनों—  
 ब्रजनृपतिसुत भौर ही आए हो रसभरे ।  
 भई बडी वार अच पाँउ धारिये हमें हू निवाजिये—  
 बास्यो अरगजा बासे वीरा ले आगें धरे ॥  
 कहि न सकत एक बात लालन जाके निस बसे—  
 ताके बसन पलटि पहिरे ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय सुजान सिरोमनि—  
 किधो बलदाऊ के हरे ॥

२४७

[ विलावल ]

दीजे मन सेरो जइये तहाँ जहाँ मन माने ।  
 औरनि कें तुम होवो जु कहॉते मैं नीके करि जाने ॥  
 बिनु गुन माल बिराजत ऊपर नख छत चिह्न पहेचानें ।  
 'गोविंद' प्रभु तहँई सिधारो जहाँ बाख्यो जाम बिहानें ॥

२४८

[ ललित ]

जागे हो रैन सब तुम नैना अरुन हमारे ।

तुम कियो मधुपान वूसत हमारो मन काहे ते जु नंददुलारे ॥  
उर नख चिह्न पिय पीर हमारे हिय कारन कौन पियारे ।  
अब तो सिधारो तहाँ रैन वमे जहाँ 'गोविंद' प्रभु पिय हमारे ॥

२४९

[ विलावल ]

\*जानि पाये हो लालन बलि बलि ब्रजनृपतिकुँवर ।  
आके दिवस निस जागि आए ते अब ही अनुसर ॥  
अपनी प्यारी के रतिके चिह्न हमें दिखावत आए देत लौन छाले पर  
'गोविंद' प्रभु सँवल तन तैसे ही हो मन जनमत ही तें—  
जुवति प्रान हर ॥

२५०

[ विभास ]

इंदु कुमुदिनी समेटी अरु चवनि भित्र भेटी—

मुकुलित अलि सरस कमल मुकुलित भए नलिन ।  
भयो प्रात मुक्त गात सियरे लागें—  
बोलत तमचुरन दीप जोति भई मलिन ॥  
कैसे जैहो रसिक राय नंद गोप दुहति गांह—  
जागें ब्रजवासी मोहि जात देखि हैं गलिन ।  
'गोविंद' प्रभु प्रेम मगन दंपति अति कंठ लगत—  
बढ़ाए व परिहरि के ससि पश्चिम दिसके चलित ॥

२५१

[ सूसो ]

अबधि वदि गए रात अब तुम आए मेरे प्रात ।

सिथिल गात अरसात जँभात पिय कहत घात तुतरात ।  
बार बार मुसिकातचलत डगमगात जावकभालसुहात नैन नौदशुकात  
'गोविंद' प्रभु गिरिधरबहुन! इक अधिक एडात जान तुम काहेकोलजात

❀ " बलि ब्रजनृपतिकुँवर " ऐसा भी प्रारंभ है ।

१. ही के जु बलि मान हर ( ख )



२५२

[ विभास ]

\* आए हो उठि भोर रसमसे नंददुलारे ।

अरुन नैन बेंन अटपटे भूपन, देखियत अधरनि रंग भारे ॥

कितव विवाद कित करत गुसाई, जहीं जाउ जाके हो प्रान प्यारे ।

‘गोविंद’ प्रभु पिय भले जु भले आए, जानि पाए जैसें तन स्याम—

तैसे मन कारे ॥

२५३

[ विभास ]

आए आए हों मन भावन, कहां ते भोर ही नंददुलारे ।

तुम कीनो रति सुख मोहि दीनो, अति दुख सांचे हो बोल तुम्हारे ॥

तुम कीनोमधुपान मोहि तो तुम्हारे, ध्यान ऐसे कैमें कीजिये प्रान प्यारे ।

अब तो सिधारे जहाँ रेंनि बसे हो तहाँ ‘गोविंद’ प्रभु तुमइ ह्यारे ॥

२५४

[ देवगवार ]

मानिनी मानि री मोहन द्वा रेठाटे ।

तेरी तो प्रकृति आनि पिय की पीर न जानि—

बातें तो बोहोत उफानि सों त्यों त्यों आगरे कपाट दिए गाटे ॥

बरखा रेंनि कारी तोसों तो हिलग भारी --

ऐसे री लालन पर तन मन धन वारि फेरि दीजे प्रान काठ ।

सुनत वचन प्यारी कंठ लागी गिरिधारी—

‘गोविंद’ प्रभुकोंहदौ प्रेम जलसों, बुझाइ दीनो आए विरहानल दाटे ॥

२५५

[ विभास ]

हो तेरें वारनं जाऊँ महरि जसोदा जू के लाल ।

छाँडहु भावता के मधुर सु गावत मुरली, सप्तपुर तान बजावत बाल ॥

परम रसाल विभास राग जम्यो, मानो प्रात ही अति सुभ काल ।

‘गोविंद’ प्रभु पिय सुधर रसिक मनि, अहो अहो स्याम तमाल ॥

\* ‘रसमसे नंददुलारे आए हो उठि भोर’ ‘ऐसा भी प्रारंभ है ।’

१ बुझायो ( क )

करत व्रत नंद गोप सकुंवारी ।

रितु हेमंत जानि जिय अपने, प्रथम माम सुखकारी ॥  
 भोर भए गृह गृह तें मुंदरि, चली वजावति तारी ।  
 मज्जन करति मंत्र पढि जल में, तट पर वसन उतारी ॥  
 कालिंदी सिकता की कीनी, देवी रूप सँवारी ।  
 पूजन करत हविष्य भाजन करि, विधि सों सब ब्रजनारी ॥  
 चोवा चंदन अवीर गुलाल, अरु ले नैवेद भरि थारी ।  
 वीरा पुष्प समर्पि धूप करि, ले आरती उतारी ॥  
 पैठी कंठ प्रमान मध्य जल, सोर सिंगार सँवारी ।  
 फूले स्याम कमल दल से, लागत देखि भयो सुख भारी ॥  
 सीत कठिन लागत कोमल तन, वेपति हैं मव वारी ।  
 कमल नयन कह्यो तब पाओ, कर जोरि कह्यो मनुहारी ॥  
 वचन सुनि सलिल तें निकसी, कीनो आइ जुहारी ।  
 देख्यो सुद्ध भाव ब्रज जन कौ, दीने वसन मुरारी ॥  
 नाम धरयो सब मिलि ब्रजवाला, रमनीक अति भद्रकारी ।  
 व्रत करि वर माँग्यो मन भावन, सब मिलि गोद पमारी ॥  
 चीर लपेटि दियो व्रत को फल, मन मो आपु विचारी ।  
 'गोविंद' प्रभु सों करत विनंती, हम हैं दासी तिहारी ॥

\* पूजन चलो हो वदं वन देवी, आओ हमारे कोउ संग—  
 भाव भगति मानति सत्रहिन की, बलि न काहु की कछु लेवी ॥  
 पुजवति सकल घोपकी कामना, सीतल सुखद<sup>१</sup> मरम सुरसंबी ।  
 'गोविंद' प्रभु सों कहति वृषभानुनंदिनी, सुनाइ सुनाइ—  
 कछुक बात औरै वी ॥

\* "आओ हो हमारे ..." ऐसा भी प्रारंभ है ।

२५८

[ रामकली ]

मोहन देहो बसन हमारे ।

जाइ कहोंगी 'ब्रजपति जू के आगे' करत अनीत लला रे ॥

तुम ब्रजराजकुमार लाडिले और सबदिन के प्रान प्यारे ।

'गोविंद' प्रभु पिय दासी तुम्हारी, सुंदर वर सकुमारे ॥

श्रृंगार —

२५९

[ विलावल ]

रति रस केलि विलास हास रँग भीने हो ।

कोऊ सुंदर नारि के लगाए गात ॥ रँग० ॥

अरुन नैन अति रसमसे । रँग० । मनोभोर भए जलजात ॥ लाल रँग० ॥

बोलत बोल प्रतीत के । रँग० । सुंदर सांवल गात ॥ ला० ॥

पियाअधर रसपान मत्त । रँग० । कहत कहूँ की बात ॥ ला० ॥

अति लोहित दृग रगमगे । रँग० । मनो भोर जलजात ॥ ला० ॥

चाल सिथिल भुव सिथिल भाल । रँग० । ससि मुख सिथिल जनात ला०

केस सिथिल वर वेस सिथिल । रँग० । वय क्रम सिथिल सिरात । ला० ॥

'गोविंद' प्रभु नंद सुत किसोर । रँग० । बहुनाइक विलखात ॥ ला० ॥

२६०

[ विलावल ]

अरुन नयन रसभर रँगभीने हो । रस रँग केलि विलास लाल रँगभीने हो

भलीकीनी भले आए प्रात । ला० । केस सिथिल वरवेस सिथिल । रँग०

सिथिल कमल जलजात । ला० । सकुचत हो कित लाडिले ॥ रँग० ॥

वेपथु अंग अंग गात । ला० । 'गोविंद' प्रभु नंद किसोर । ला० ॥

२६१

[ विलावल ]

चार पहर रस रँग किये रँग भीने हो ।

भली कीनी भले आए भोर । लाल रँग भीने हो ॥

अधरन रंग लागत फीको । मिटि गयो तिलक लिलाट ॥

केस सिथिल वर वेस सिथिल । रँग० । सिथिल भए सब अंग ॥

कमूँभी पाग मिर लटपट्टी । कछु जंभात अलमात ॥  
'गोविंद' प्रभु छबि निरखि के रँग । विवम भई ब्रजवाल ॥ लालरँग ॥

२६२

[ विलावल ]

जागत मव निसि कहाँ रहे । रँग भीने हो ।  
अलि कीनी भले आए प्रात ॥ रँग ॥

मानों भोर जलजात ॥ लाल रँग ॥  
बोलत बोल सु प्रीति के ॥ रँग ॥

मुंदर साँवरे गात ॥ लाल ॥  
प्रिया अधर रस पान मत्त ॥ रँग ॥

कहत कहूँ की कहूँ बात ॥ लाल ॥  
अति लोहित दृग रगमगे ॥ रँग ॥

पलकन में न ममात ॥ लाल ॥  
चाल सिथिल भुव भाल सिथिल ॥ रँग ॥

मुख ससि मिथिल जंभात ॥ लाल ॥  
केस सिथिल वर वेस सिथिल ॥ रँग ॥

वय क्रम सिथिल सिरात ॥ लाल ॥  
'गोविंद' प्रभु नंदकिसोर ॥ रँग ॥

बहुनाइक विख्यात ॥ लाल रँग ॥

२६३

[ रामप्री ]

सुपन में सगरी रेंनि गई ।  
भोर भए वनचर सुनि जागत ही पीर भई ॥  
जल विनु मीन चकोर चंद विनु तलफत निज मनही ।  
इहि दुख कहों कौन सों, सजनी जातु न मोपें सही ॥  
जब सुधि होत नंदनंदन की, विरहा अनल दही ।  
'गोविंद' प्रभु मिलें सुख, उपजे जात न काहू कही ॥

२६४

[ रामघी ]

सुनि सखी सुपने की कहूँ बात ।

सौँभ ही तें स्यामसुंदर आइ लपटे गात ॥  
 अधर अमृत पान करि करि हौं नाहिनें अघात ।  
 मुरति सुखद ममुद्र कौ सुख कछो नाहिन जात ॥  
 सुपन में गई रेंनि मगरी 'गोविंद' हौं जगी परभात ।  
 सज ते जानो स्याम मूरति उठि चले मुसिकात ॥

२६५

[ रामघी ]

सुपन में स्याम संजोग भयो ।

कमल नयन विधु बदन निहारत मव दुख बिसरि गयो ॥  
 कुंज महल में कुसुम सेज सुख मजनी जातु न मोपे कछो ।  
 आलिंगन अधरामृत पीवत मैं कछु नाहिं लख्यो ॥  
 सगरी रेंनि गई सुख सौं मोहि प्रीतम सुरनि दयो ।  
 'गोविंद' विरह भयो जागत ही नैननि नीर बख्यो ॥

२६६

[ गधार ]

प्रात समें उठि जननि जसोदा गिरिधर सुत कों उबटि न्हावावे ।  
 करति सिंगार बसन भूषन लै फूलनि रुचि-रुचि पाग बनावे ॥  
 छूटे बंद बागो अति सोभित बिच बिच अरगजा चांदा लावे ।  
 सूथन लाल फोंदना फबि रख्यो यह छवि निरखि निरखि सच्चु पावे ॥  
 विविध कुसुम की माल कंठ धरि श्रीकर मुली बेत गहावे ।  
 लै दर्पन सुतकौ मुख निरखति 'गोविंद' तहाँ चरननि चितलावे ॥

२६७

[ रामकली ]

कछुव कही न जाइ तेरी उनकी माई री विकट बात ।

आन आन प्रकृति कैसें बनि आवै जो तू डार तो है री वे पात पात ॥  
 अब कहाकहत साई जाइ कहो, प्रीतमसौं छाडिदेरी इत उतककीपाँचसात  
 अब एतेपर 'गोविंद' प्रभु पिय सुमुखि, मनाइ लैहैं<sup>१</sup> वातनि वातनि—  
 भयो प्रात ॥

शुद्धार

२६८

[ विभास ]

जहाँ जहाँ नैना लगत तहीं ताहीं तामों खगत अंग अंग—  
माधुरी वरनी न जाई ।

सुंदर भार कपोल मोहन मधुरे बोल नासिका देखत मन—  
रह्यो है लुभाई ॥

हँसत लालन मुख दसन जुन्हाई यह छत्रि कह<sup>१</sup> कहों—  
देखि धो हों आई ।

गोविंद<sup>१</sup> प्रभु की सुंदर वानिक पर बलि बलि बलि जाई ॥

२६६

[ घनाश्री ]

वदन सरोज ऊपर मधुपावलो मानों फिरि आई हों ।  
कुंचित कुच बीच बीच चंपकली अरुभाई हो ॥

लाल के नैन कृपारंग भरे सुंदर भुव भाई हो ।  
मकर कुंडल प्रतिविम्बित स्याम कपोलनि भाई हो ॥

लालकैमनि कौस्तुभकंठ लसे हृदै वनमाल सुहाई हो ।  
सुंदर सब अंग अंग 'गोविंद' प्रभु<sup>२</sup> बलि जाई हो ॥

२७०

[ घनाश्री ]

वागो लाल सुनहरी चीरा ।  
ता पर मोर चन्द्रिका धरि कें उर सोहत गिरिघर जू कें हीरा ॥  
सूथन वनी एक ता रंग की हँमुली हेम ग्रथित मन घीरा ।  
'गोविंद' प्रभु सखा संग लीन विहरत हैं कालिंदी तीरा ॥

२७१

[ घनाश्री ]

नवल नाइक नवल नाइका कुंज बसि रसिक केलि रवि मोर जागे ।  
सुमन मुख सेज पर बैठि सिंगार करि उठत अरसाइ अनुराग पागे ॥

<sup>१</sup> मनाइ लै रो ( क )

( ग )

सिथिल कचन नैन गतिरचित भूषन सिथिल जुगल छवि—  
 सोमित सिथिल बागे ।  
 उभय तन सिथिल भए मदन रति मानिकें नख सिख—  
 सुरति के चिन्ह लागे ॥  
 स्याम स्यामा दोऊ कुंजद्वारे खरे मानों रवि मणि—  
 मिलिहें सुहागे ।  
 गिरिधरन राधिका मुदित 'गोविंद' निरखि विकसे पंकज—  
 नैन ताप त्यागे ॥

२७२

[ विभास ]

आजु लाल अति राजें बैठेज्व निकसि छाजें—  
 सुधि न कछू री गात प्यारी प्रेम मगनाँ ।  
 लटपटी पाग सिर मिथिल चिकुग चारु—  
 उपटत उर हार प्यारी कंठ लगनाँ ॥  
 आलस अरुन अति खरेई विलोचन—  
 भरि भरि आवत पिय सी अनुरंगनाँ ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय जानि सिरोमनि—  
 सुरति<sup>१</sup> रंग रस मोर लों जंगनाँ ॥

२७३

[ ललित ]

बड़ी बड़ी अँखियाँ नींद भरी ।  
 लाल लाल डोरे कजरारी कोरें पिय हिय मँझ गडी ॥  
 सोचत रेंनि चैन की वार्ते पीक लीक छवि छाप पडी ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय वचन कहत हैं बहु विधि लाड लडी ॥

२७४

[ विलावल ]

धूमत रत रतनारे नैन सकल निसा जागे ।

लटपटी सुदेस पाग अलकनि की भलकन बिच—

पीक छाप जुग कपोल अधरन मिसि लागे ॥

बिन गुन उर माल बनी बिच बिच नख रेख बनी—

पलटि परे बसन पीठि कंकन सो दागे ।

बिबुक बन्यो बदन बनमाल लाग्यो चंदन—

डगमगात चरन धरन प्रिया प्रेम पागे ॥

वचन रचन क्रियो साँझ बेगि आये भोर साँझ—

बलि बलि या बदन कोमल सोभित अनुरागे ।

जाइ बसो वा ही घाम बिछसे जहाँ सकल जाम—

‘गोविंद’ प्रभु बलिहारी कर जोरें माँगे ॥

२७५

[ विलावल ]

कहा इह साँझ सवार कहावे ।

कितब बाद करत मनमोहन को तिहारि औगति को पावे ॥

रैनि बसे तहाँ शौँ धारो निपट निठुर को कौन पत्यावे ।

राजा मीत सुने नहि देखे जो अनुसरे सोई पछतावे ॥

कहो कछु और करो कछु और ऐसी रीति मोहि नहि भावे ।

काहे दुराव करहु मेरे प्यारे अंग अनंग चिन्ह देखावे ॥

सुनि इह वचन सपत करि के कहँ तुम बिनु कोऊ नहि सुहावे ।

‘गोविंद’ प्रभु रसीलो नागर नागरि पाइनि परसि मनावे ॥

२७६

[ आसावरी ]

निमि के उनीदे अति छबि लागत भरे प्यारी रसरंग ।

आलस बलित ललित जुग लोचन—

भरि भरि आवत कुंज केलि सुधि करिके प्रेम उमंग ॥



सुभग उरसि पर 'बिन्दु गुन मुक्तमाल—

कुंकुम खसित उपटित कुच उतंग ।

गोविंद' प्रभु कित करत दुराइ—

ए सब कहें देत तुम्हारे अंग अंग ॥

२७७

[ रामग्री ]

दरस मोहि दीजे हो नंदलाल ।

तन घनस्याम तमाल लाडिले अंचुज नैन बिसाल ॥

अंग अनंग चिह्न देखियतु उर राजित बिन्दु गुनमाल ।

दसन डंक अधर पर देखियतु अंजनु लाग्यो निजमाल ।

कौन त्रिया के रति रस भीने गोकुल के प्रतिपाल ।

'गोविंद' विरह गयो मुख निरखत गावति गीत रसाल ॥

२७८

[ विभास ]

एक रसना कहा कहां सखी री लालन की प्रीति अमोली ।

हंसनि खेलनि चितवनि जु छवीली अमृत वचन मृदु बोली ॥

अति रस भरे री मदनमोहन पिय अपुने कर कमल खोलत—

बंद चोली ।

'गोविंद' प्रभु की जु बोहोत कहाँ लो कहें जे बातें कही—

अपुनो हृदौ खोली ॥

२७९

[ विभास ]

एरी लाल प्यारो अति ही विचछन बस कीने तें सुहाग ।

सीतल सुवास कुसुमनि सिज्या रची—

तामे मदनमोहन निस जाग ॥

१. मोती माल बिन्दु गुन कुंकुम ( क )

२. हौं बोहोत कहा कहां ( क )

बैठे कुंज के द्वार तुव पंथ चाहत भरि—

आवत नैन विसाल तुव अनुगाग ।

दूती के बचन सुनि प्रेम मगन भई—

मिली जाइ 'गोविंद' प्रभुको मिटयो विरह हृदे दाग ॥

सुंथालु—

२८०

[ रामकली ]

\*अहो दधि मथति घोष की रानी ।

दिव्य चीर पहिरे दन्डिन कों कटि किंकिनि रुनभुन वानी ॥

सुत के गुन गावति आनंद भरि बाल चरित्रऽव जानी ।

श्रम जल बिंदु राजें वदनकमल पर मानों सरद वरखानी ॥

पुत्र सनेह चुचात पयोधर पुलकित अति हरखानी ।

'गोविंद' प्रभु घुटुरुनु चलि आए पकरी रई मथानी ॥

२८१

[ रामकली ]

नंदरानी मथि प्यावत धैया ।

बल मोहन खेलत आँगन में सुनत अचानत धैया ॥

नाचत हँसत करत किलकारी उर आनंद बढ़ैया ।

फूँकि फूँकि पय पीवत कमल मुख अरस परस दोऊ भैया ॥

बाल विनोद सुर नर मुनि मोहे जोग ध्यान विसरैया ।

'गोविंद' प्रभु पिय वदन चंद की जसुमति लेत बलैया ॥

२८२

[ ललित ]

प्रात समै कहा रोकि रहे जू होतु अवार विलोवन महियाँ ।

अचरा छाँडि देहु मेरे प्यारे करो कलेऊ कुँवर कन्हैया ॥

जो भावें सो लेहु मेरे प्यारे पीयो बहु करि देउं धैया ।  
 करो सिंगार पलटि पट भूषन आँगन मॉहि खेलौ दोउ भैया ॥  
 ले कर कमल फिरावत सिर पर बदन निहारत जसोदा मैया ।  
 'गोविंद' प्रभु जननी जीवन धन मन वच करम करि लेति बलैया ॥

२८३

[ ललित ]

माखन तनक दे री माइ ।

तनक कर पर तनक शोटी माँगत चरन चलाइ ॥  
 तनक नैन सों तनक अंजन नेत पकरयो धाइ ।  
 तब कंण्यो गिरि सेष संकयो सिंधु अति अकुलाइ ॥  
 तनक मुख सों तनक बतियाँ बोलत हैं तुतराइ ।  
 जसुमति सुतकी माधुरी मूरति 'गोविंद'बलि बलि जाइ ॥

छाक—

२८४

[ सारग ]

छाक ले आवो वेगि मेरी मैया ।

आजु प्रात ही न कीनो कलेऊ छुधित ह्वैदें दोउ मैया ॥  
 सद्य दूध धौरी कौ मधि कें लीनो नेसकु धैया ।  
 मेवा मिश्री छुवै न करसों बहुत अचगरो छैया ॥  
 विविध भाँति सो भोजन षट् रस ले दीने जसोमति रैया ।  
 ले जु चली 'गोविंद'प्रभु पिय पै दीनी जाइ कन्हैया ॥

२८५

[ सारग ]

छाक पठई जमुमति रानी ।

अहो गोपाल लाल कित हो जु जवै सुनी यह बानी ॥  
 अहो सखा छाक ले आवहु गालनि सों शति मानी ।  
 सघन कुंज में मिली जाइ और कीनों मनमानी ॥  
 टेरत सखा भोजन कों बैठे प्रीति जो अंतर जानी ।  
 'गोविंद'प्रभु पिय सब रस भोगी कमलनेन सुख दानी ॥

२८६

[ सारग ]

छाक ले चली प्रानपति पास ।

कुच भुज फरकि पुलिक तन आतुर पिय मिलिबे की आस ॥  
 मटुकी सीस काँधे दधि ओदन भोरी फल रम रास ।  
 पहुँची जाइ सघन बन सुंदरि गहवर अति सुख वास ॥  
 बल कों पठें सखा प्रति टेरनि आपुन भेंटे तासु ।  
 इह छवि निरखत सकुच ओट न्है बलि बलि 'गोविंद' दास ॥

२८७

[ सारग ]

बैठे गोवर्द्धन गिरि गोद ।

मंडली सखा मध्य बल मोहन खेलत हँसत प्रमोद ॥  
 भई अवार भूख जब लागी चितए घर की कोद ।  
 'गोविंद' प्रभु तहाँ छाकले आए पठई मात जसोद ॥

२८८

[ सारग ]

गोवर्द्धन गिरि शृंग सिलन पर बैठेऽव छाक खात दधि ओदन ।  
 आस पास ब्रज बालक मंडली मधि ऽव हो—

बल मोहन बैठे ऽव खात खवात प्रेम प्रमोदन ॥

काहू कों छीको नोइ छोरि गहि डारत—

वह वा पर वा की ही कोदन ।

बाल केलि क्रीडत 'गोविंद' प्रभु—

हँसि गिरि जात सुवल की हो गोदन ॥

भोजन—

२८६

[ विभास ]

कनक कटोरी भरि कुंकुम अञ्जित आगें ले राखी—  
मदनमोहन गोपाल ।

न्योतती हों आजु मनमोहन ले करि तिलक करौ निज भाल ॥  
पट रस विंजन विविध सवारों कूपोदन पकवान रसाल ।  
करो संकेत कहा ले आऊँ बेगि कहो गिरिवरधर लाल ॥  
न्योतो मानि संकेत बतायो या फूले द्रुम कुसुम प्रवाल ।  
करि सिंगार पाउँ धारे 'गोविंद' स्याम बरुन अरु नैन विसाल ॥

२८७

[ विभास ]

लेहु बलाह लाडिले तेरी भोजन कों कित कश्त अवार ।  
गर्ने लगाइ दियो मुख चुंवन अति आतुर हूँ परोसति थार ॥  
नंद बाबा संग जेवन बैठे करत बाल केलि सुख सार ।  
'गोविंद' प्रभु गिरिराजधरन पिय ब्रज सुखदाई नंद कुंवार ॥

२८९

[ विभास ]

जसुमति थार परोसि धरी है तुमहि बुलावति चलो दोउ भैया ।  
बाबा नंद की गोद बैठि कें भोजन करो हां ले हों बलैयाँ ॥  
पाछे आइ खेलो नंदनंदन कछुक मिठाई देहों नन्हैया ।  
'गोविंद' प्रभु गिरिराज धरन चलो बैठी जहाँ जसुमति मैया ॥

२९१

[ आसावरी ]

बोलत नंद कान्ह कहि बानी ।

अहो गोपाल लाल बलि जाऊँ कहत जसोदा रानी ॥

बालक सकल सहस संग लीने खेलत जहाँ रति मानी ।  
ले उठाइ चुचकारि गोद में आनंद उर न समानी ॥  
आवो हो तात सिरात मात अब कहा चित्त में ठानी ।  
'गोविंद' प्रभु के बदन कमल में मधुर कौर दै सानी ॥

२६३

[ आसावरी ]

भोजन करत हैं नंदलाल ।

चहुँदिसि बैठी ग्वाल मंडली मधि नायक गोपाल ॥  
विविध भाँति कीने पनवारे विंजन घरे रसाल ।  
मीठे मधुर ओदन ले कर हँसत हँसावत बाल ॥  
आपुन रुचि सों भोजन कीनो बोलत मधुरी बानी ।  
'गोविंद' प्रभु पिय सब सुख दाइक खेलत ज्यों रतिमानी ॥

२६४

[ सोरठ ]

भोजन करे श्रीराधिका-रवन ।

आस पास कर गसा लेत मुख सों सुख बरने कवन ॥  
अदन सदन कंचन चौकी पर जगर मगर दुति भवन ।  
लेखे थकि रह जात मुख सुधि पलकें भूलीं गवन ॥  
अचवन करिकें राइकों वीरी देति सखि इक भँजि रुचि पवन ।  
'गोविंद' सरन चलि सैन दरसन को मोहन मदन दवन ॥

२६५

[ आमावरी ]

अद्भुत और कन्हैया कीनो ।

सुनि री सखी कहत नहि आवे भोजन एक गसा नहीं लीनो ॥  
हमारे निकट सुवा हो मदन में बल समेत क्रीडा रस भीनो ॥  
मैं मनुहारि बहुत करि कीनी फेर न मन मंदिर पै चीनो ॥  
ऐसो चपल हठीलो डोटा सकल कला गुन गन परचीनो ।  
'गोविंद' प्रभु भोजन करिवे को पाक परोसिन दीनो ॥

## राजयोग—

२६६

[ सारंग ]

आजु की बानिक कही न जाइ बैठे स्व निकसि कुंज द्वार ।  
लटपटी पाग सिर सिथिल अलकावलि खसित बरुहा चंद—

रस भरे ब्रजराजकुमार ॥

श्रम जल बिंदु कपोल विराजत मनहुं ओसकन नील कमल पर ।  
'गोविंद' प्रभु लाड़िलौ ललन बलि कहा कहौ अंग अंग सुंदर वर ॥

२६७

[ सारंग ]

चितै मुसिक्यानी हो ब्रषभानकुंवारी ।

खसित मुरली कर नँदनंदन के जु लियो है लाल मनुहागी ॥  
गज गति चाल चलति ब्रजसुंदरि लटकत स्याम रसमत्त पियारी ।  
कटि किंकनी हार तरलित ताटक अलक घुँघरारी ॥  
देखि विवस भए मदनमोहन पिय चंपक तन बनी नील सारी ।  
आँकों मरि मिली रीनबल नागर को 'गोविंद' जन बलिहारी ॥

२६८

[ सारंग ]

तैं कछु घाली री ठगौरी पिय पर प्यारी ।

निसि दिन तुही तुही जपत प्रानपति णरी तेरी सौँलालन गिरिवरधारी  
स्मरवेग आवै सरूप तब सुधि न कछू री तन की बिहारी ।  
रसना रटत तुव नाम राधे राधे 'गोविंद' प्रभु पिया—  
जु ध्यान सौँ भरत अँकवारी ॥

२६६

[ आसावरी ]

नेकु चितें चले री लालन सखी ले जु गए चित चोरि ।  
 तव ते हौं द्वारे ठाढ़ी चितवति ही प्रीतम की मुसिकानी मुख मोरि ॥  
 हौं दधि मथन करत ही भवन में उभकि चले ब्रजराजकिसोर ।  
 लटपटि पाग केस विलुलित सखी ना जानों कहों तें आए उठि योर ॥  
 सब निमि जागे डगमगत चरन गति खसि खसि परत पीतपट छोर ।  
 'गोविंद' प्रभु की 'लखी न जात गति ऐसी व चतुरागरी कोरि ॥

३००

[ सारग ]

नेन निरखि अजहूँ न फिरे री ।

हरिमुख कमल कर रम लोभी मनो हौं मधुप तें मत्त गिरे री ॥  
 पल्लव सु लागहें सखी निसु वासर दोऊ रहत अरे री ।  
 जैसे विटप अटक गयो कारोतजि कंचुरी भेद भए नए री ॥  
 ज्यों सरिता परवत की खोरें प्रेम पुलक श्रम बुंद भरे री ।  
 बूँद बूँद हूँ मिले री 'गोविंद' प्रभु ना जानों कै पाट रहे री ॥

३०१

[ सारग ]

नेननि लागी हो चटपटी ।

मदनमोहन पिय निकसे द्वारें हूँ तोहत पाग लटपटी ॥  
 दूरि जाइ फिर चितए री मोहन नेन कमल मन हरन भृकुटी ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय चलत ललित गत कछुक सखा अपनी गटी ॥



३०२

[ सारंग ]

नेना ठग लिए मेरे ।

आवत हुती चली मारग में नेकु ललन मुख हेरे ॥  
मन बुधि चित फेरन कौं पठाए देखि रूप लुभाने—  
वेउ भए जाइ चेरे ।

अब कहा करौं मतौ देरी न मोहि सखी—

यह 'हवाल ' गोविंद ' प्रभु तेरे ॥

३०३

[ सारंग ]

बलि बलि आजु की बानिक लाल ।

कसँमी पाग पीत कुलह भरित कुसुम गुलाल ॥  
विश्व मोहन नव केसरि कौ तिलक ललित भाल ।  
सुंदर मुख कमलहि लपटात मधुव्रत जाल ॥  
बरुनी पीत विधुरित बंद सुभग उरसि बिसाल ।  
'गोविंद' प्रभु के परसत नख तरुनि तुलसी माल ॥

३०४

[ सारंग ]

भाई री रोहिनी नंद विराजे अतुलित बल प्रताप परिपूरना ।  
अति बिसाल आकर्ष अरुन अति नैन कमल मद घूरना ॥  
नील बसन परि धाइ मत्त गज ज्यौं अनुज—

बल जाइ कँपाइ खाइ ताल फल भूरना ।

'गोविंद' प्रभु ब्रजराज बच्छा विरुभाने—

होत ब धेनुक कुल कियो चूरना ॥

३०५

[ सारंग ]

\*लालन सिर घाली हो उगोरी ।

सुंदर मुख जौ लों नहीं देखियत भईय रहत तौ लों बौरी ॥

वह मुख कमल पराग चाखि मेर नयन मधुप लागी ढारी ।

'गोविंद' प्रभु घन तें कन आइहें जु रहत हृदौ कैसें तोरी ॥

३०६

[ सारंग ]

हौं नीकें जानत री आली तेरे हृदैं की सब बात ।

सकल घोष जुवतिन कौ सर्वसुहरचो ते' ही आली री साँवरे गात ॥

जाकौ कारज सिद्ध करत हैं विधाता ताहि न काहू की परवाह—

रहै री माई कहि रहो कोउ पाँच सात ।

'गोविंद' प्रभु निधनी कौ धन पायो 'तिनही ले छिपायो 'मोतें—

कित दुरात है री जो तू डार डार तो हौ री पात पात ॥

३०७

[ सारंग ]

शृषभानुनंदिनी गिरिधरनलाल मिलि कुंज के महल में केलि ठानी ।

परम सीतल सुखद तरनितनया निकट सघन घन सम सरस बहत पानी

कुंद केतकी जाई कुरव कुसुम लाइ परम रमनीक सघनीय बानी ।

हंस सारस मोर और खग की रोर मंद मारुत चलत मधुगानी ॥

कोक क्रीटिक कला प्रगट विलसत बला वारत तन मनहिं प्रानपतिरानी

कहत 'गोविंद' प्रभुरीभि रस बस भई मदनमोहन नवल जुवती सुखदानी

\* "मोहन सिर " ऐसा भी प्रारंभ है. १. तेई छिपायो ( क )

२. मोनों ( क )

३०८

[ सारंग ]

कुँवर बैठे प्यारी के संग अंग अंग भरे रंग—

बलि बलि बलि बलि त्रिभंगी जुवतिन सुखदाई ।

ललित गति विलास हास दंपति मन अति हुलास—

विगलित कच सुमन वास स्फुटित कुसुम निकट तैसीये सरदरेंनिजुन्हाई

नव निकुंज मधुप गुंज कोकिला कल कुंजत पुंज सीतल—

सुगंध मंद मंद पवन अति सुहाई ।

‘गोविंद’ प्रभु सरस जोरी नव किसोर नव किसोरी निरखिमदनफौजमोरी

छैल छबीले जु नवल कुँवर ब्रजकूल मनिराई ॥

३०६

[ सारंग ]

आजु लाल रम भरे निकुंज मंदिर में बैठे प्यारी संग ।

करन मदन केलि सुख सिधु रख्यो भेलि कंठ भुजन भुज मेलि -

गावत सुघर दोऊ अति तान तरंग ॥

कहा री कहौं भाँवरि कुसुमन गूथी बेनी सीस फूल—

गजमोती खचित मंग ।

‘गोविंद’ प्रभु चित्र करत प्यारी के उर<sup>१</sup> पर—

सुरति स्वेद अति वेपथु सकल अंग ॥

३१०

[ सारंग ]

सधन कुंज की छाँह मनोहर सुमन सेज बैठे पिय प्यारी ।

अरस परस अंसनि भुज दीने नंदनंदन वृषभानुदुलारी ॥

नख सिख अंग सिंगार सुहावत इहि छबि सम नाहिन उपमा री ।

रस बस करत प्रेम की वतियाँ हँसि-हँसि देत परस्पर तारी ॥

सनमुख सकल सहचरी ठाढी विहरत श्रीराधा गिरिधारी ।  
‘गोविंद’ दास निरखि दंपति सुख तन मन घन क्लीनो बलिहारी ॥

३११

[ सारंग ]

लालन बैठे कुंज थली ।

कुसुमित वन परिमल समोद तहाँ कूजित कोकिला मत्त अली ॥  
‘कुवलयदल कोमल सिञ्जा रची मृदुल सुहातवेनी ग्रथित चंपकली  
‘गोविंद’ प्रभु दंपति परस्पर रहे रस मत्त रली ॥

३१२

[ सारंग ]

आली री कुंजभवन बैठे ब्रजराजसुवन  
बोलत मुख रखिक कुँवर तू चलि प्यारी ।  
तेरे हित लोभी लाल उठि चलि भरि अंक माल—  
विरह रसाल छाँडि प्यारी तो ऊपर हौं वारी ॥  
छाँडि मान करि सिंगार दर्पन ले मुख निहारि—  
कोटि काम डारो वारि पहरें नील सारी ।  
‘गोविंद’ प्रभु रससिंधु भेलि कंठ भुजामें भुज मेलि—  
बस करि गिरिधारी ॥

३१३

[ सारंग ]

ए री जामें जेते गुन है लालन सो सब जानत हैं री ।  
सकल कला गुन निधान जानि ताकी तैसीये मानत है री ॥  
जाके आगें अपनी अधिकाई कोउ भूलें बखानत हैं री ।  
‘गोविंद’ प्रभु पिय सकल कला गुन प्रवीन बातें बोहोत उफानत हैं री

३१४

[ सारंग ]

जाहि तन मन धन दीजे जु तासों आलीरुसनो कैसे बनि आवे ।  
घोख नृपति सुत ऐते पर बहुनायक यातें कहत हों समुझि—

चितै अनखन कैसे पिय पावे ॥

नवल निकुंज नवल बैठे तातें हों पठई ऐसो तो समयो—  
तो ही सी बड भागिनी पावे ।

सोई तो विचित्र गुन रूप तिया—

श्री 'गोविंद' प्रभु कों रिभावे ॥

३१५

[ सारंग ]

पिय जु करत मनुहारी समुझि देखिरी पिय प्यारी ।  
कुंज के द्वार कब के ठाढे<sup>१</sup> हैरी मनमोहन ललना—

खरी<sup>२</sup> है निठुर ब्रषमान दुलारी ॥

अलक सँवारन के मिस भामिनि—

फेरत पिय तन नैन निहारी ।

'गोविंद' प्रभु कों मुख देखि सुख भयो—

तन दृष्टि सों भरत अंकवारी ॥

११६

[ जैत श्री ]

तोहि मनावन लाल ।

आये प्रेम सों अब तो मान निवाहिये सखी आतुर होतु नंदलाल ॥

सुंदर बदन विलोकि कें तजि गति कठिन रिसाल ।

कनक बेलि सी कामिनी तु लिपटी स्याम तमाल ॥

सुनि तिरछे हूँ के चह्यो मोहन रूप रमाल ।  
 नैननि सों नैना मिले तब रोस गयो तत्काल ॥  
 हेसि मुसिकाना मालिनी परी प्रेम के जाल ।  
 लीनी कंठ लगाइ केँ प्रभु 'गोविंद' गिरिधरलाल ॥

३१७

[ सारंग ! ]

नवल निकुंज महल रस पूजति रसिक राइ सारंग सुर गावत ।  
 झूटि गयो मान नवल नागरि कौ अंग अंग अतंगम गावत ॥  
 दारि आई हँसि कंठ लपटानी इह विविध तान मोहे सुनाओ ।  
 'गोविंद' प्रभु नट नागर नगधर इहि विधि गाओ मान मनायो ॥

३१८

[ सारंग ]

चितवत रहत सदा गोकुल तन ।

चार द्वार खिरकीन हूँ भौंकत अति आतुर पुलकित मन ॥  
 नरम सखा सुख संग ही चाहत सरत कमल दल लोचन ।  
 ताई समै मिले 'गोविंद' प्रभु कुँवरि विरह दुख मोचन ॥

३१९

[ सारंग ]

कहा री भयो मुख मोरें कछु काहू जु कह्यो ।  
 रसिक सुजान लाडिलौ ललन मेरी अखियनि मॉक रह्यो ॥  
 अब कछु बात फैलि परी जु प्रेम जांमन दियो भयो दूधतें दह्यो ।  
 त्रैलोक्य अति ही सुजांन सुंदर सरवसु हरयो 'गोविंद' प्रभु ज लह्यो ॥

३२०

[ सारंग ]

तू चलि बोलौ री नंदकुमार तो विनु रहि न सकत ।  
 विकसित बन 'राजीव हिये मत्त भँवर सीत सुगंध मंद वायु बहत ॥  
 जमुना पुलिन सुभग कुंजनि में तेरे री कारन नवपल्लव तलपरचत ।  
 सुनि सखी वह बंसी कल स्रवननि समुष्किरी तेरो ई नाम रटत ॥  
 कुर्वक बकुल<sup>२</sup> बेली घन चपो कुसुमनि दाम संचत ।  
 'गोविंद' प्रभु के तू कंठ लागि धौं री नव घन में जैस दामिनी लसत ॥

३२१

[ सारंग ]

अब कें फेरि लीजे हा सुघरराह वह तान ।  
 सरस मधुर नीकी चोख परी है तामें तान बंधान ॥  
 अबघर विकट सरस<sup>३</sup> गिरिधर पिय तुम ही पै बनि आवे—  
 मोहि तुम्हारी आन ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय रसिक सिरोमनि मदनमोहन<sup>४</sup> अति ही सुजान ॥

३२२

[ सारंग ]

ए री ह्यौं वृंदावन रग ।  
 सकल कला प्रवीन सा रि ग म प ध नी—  
 अलाप करत है उपजत तान तरंग ॥  
 निरत गति जति लेत गृ गृ त क्किटि धी लांग थोंग बाजत मृदग ।  
 'गोविंद' प्रभु के जु अंग अंग पर वारतां कोटि अनंग ॥

३२३

[ रामग्री ]

मोहन मधुरे बाजत वेंनु ।  
 सखा संग ले वन पाउँ धारत सोभित है संग धेंनु ॥

१ राजत ही भ्रमत भ्रमर ( क ) २ सघन ( ख, ग ) ३. सुघर ( ख, ग )  
 ४ मोहन पिय अति सुजान ( क ख )

लटकत चलत चतुर दोऊ भैया निपट नचावत नैन ।  
 कमल नयन मुख चंद सुधा रस दौरतु हैं सब लेनु ॥  
 म्रधन सुनत भुवन अचने में पल न परत मन चैन ।  
 'गोविंद' प्रभु मुमकाड वताई वन संकेत ही सेंनु ॥

३२४

[ सारंग ]

\* अबहि रंग राख्यो मुरली में कहा कहौ री लाल सुधर ।  
 नान तरंग सुर भेद अरु मिलवत जति गति—  
 विच विच मिलवत विकट अवधर ।  
 चोर साखनी की रेखता में रेखता में गाइनि टेरत लाँचे लाँचे सुर ।  
 विच विच लेत तिहारो नाम सुनि री सयानी—  
 'गोविंद' प्रभु ब्रजरानी के कुँवर ॥

३२५

[ टोडी ]

लालन गुरली नेकु बजाइये । बिनती करत प्यारी की मखी—  
 जानत हों सकल गुननि खिरमौर हीठ्यो दीजत तातें—  
 घोपराज कुँवरवर हमें हू है तान सुनाइये ॥  
 जैसे खग मृग पसु द्रुमलता बेली सोहें—  
 तैसे ही हमारी मखियन कौ मन रिझाइये ।  
 'गोविंद' प्रभु सकल कला गुन प्रवीन—  
 हमारे सवनन सुख उपजाइये ॥

\* "राग रग चरयो" पैला भी प्रारंभ है ।

१. मक्ख कना गुननि ( क )



३२६

[ टोडी ]

† विमल कदंब मूल अबलंवित ठाढे हैं पिय भानुमुता तट ।  
 सीस टिपारो कटि लाल काछिनी उपरेनां फरहरात पीत पट ॥  
 पारिजात अबतंस सरित सखी सीस सेहरो बन्यो <sup>१</sup>अलक भ्रकुटी लट ।  
 विमल कपोल कुंडल की सोभा मंद हास जीते कोटि मदन भट ॥  
 वाम कपोल वाम भुज पर धरि मुरली बजावें <sup>२</sup>गावें टोडी तान विकट ।  
 'गोविंद' प्रभु के श्रीदामा प्रभृति सखा करत प्रसंसा जै नागरनट ॥

३२७

[ आसावरी ]

कुसुमित बन मधि विविध कंलि क्रीडत रंगराई ।  
 बाँधी फोंग पट मल्ल युद्ध करें रस भरे दोऊ भाई ॥  
 करत बहस आपुस में कौन छुवे धाई ।  
 सो भैया हों <sup>३</sup>ता पर चढिकें 'गोविंद' प्रभुकी गैया <sup>४</sup>घेरन जाई ॥

३२८

[ टोडी ]

निर्तत रस दोऊ भाई रंग ।

सुलप संच गति लेत ग्र ग्र त किट धिकिट द्रम द्रम द्रम—

बाजत मृदंग ।

कनक बरन टिपागे सिर कमल बरन काछिनी कटि—

बनज धातु अति विचित्र सोहें स्यामअंग ।

'गोविंद' प्रभु त्रैलोक विमोहत देखत ठगे से—

ठाढे रहे कोटि अनंग ॥

३२९

[ टोडी ]

निर्तत कुसुमित बन सुंदर सुजान ।

षडज रिपभ पंचम मुर अलापत लेत विकट अवधर तान ॥

† "विविध कर्तव्य" • ऐसा भी प्रारंभ है ।

१ बनी है अलक लट ( क ग ) २ बजावत तान विकट घट ३ ता उदर  
 चदि ( क ) ४ गाइन ( क )

श्रीदामा सखा संग अतिरस भरे प्र प्र ता प्र प्र ता पूरत मान ।  
सकल कला गुन प्रवीन रसिकराय 'गोविंद' प्रभु पूरत रस तान वितान

३३०

[ आसावरी ]

टेरत ऊँची टेर सत्र ग्वाल ।

चलो सखा खेलन वृंदावन गाइ संग सत बाल ॥

भँवर चकई विविध खिलौना लीजे हो नंदलाल ॥

ले गोधन आगे निकसी ब्रजवनिता लेत बलैयाँ अचरज पाड ॥

'गोविंद' प्रभु पिय सदा विराजो हौं इह कहीं सीस नवाड ॥

३३१

[ धनाश्री ]

खेलत वृंदावन के चंद ।

इत सब गाइ चरावत अपने रग उत मखा मधि गोविंद ॥

सधन कुंज बहु दिसि फूले द्रुम कूजत विविध विहंग ।

निर्भर भरित बहत मलियानिल सीतल लता लवंग ॥

नाचत गावत वेनु बजावत लीला बरनि न जाई ।

'गोविंद' प्रभु पिय की छवि निरखत कोटि चंद निसि लुनाई ॥

३३२

[ नारग ]

ऐसी प्रीति कहूँ नहि देखी ।

जसुमति सुत बल्लभ सुत जैसी सेस सहस मुख जात न लेखी ॥

आग्यां माँगि चलत गोकुलको छिनु छिनु भाँकि भरोखन पेखी ।

मृनियत कथा जलद चात्रक की कुमुदिनि चंद चकोर विसेखी ॥

इनको कियो सयै जिय भावत करत सिंगार विचित्र विसेखी ।

'गोविंद' प्रभु गोवद्धन पै माँगत विछुरो पल जिन अर्ध निमेखी ॥

३३३

[ श्रीराग ]

हों बलि निर्रत मोहन जति ।

देसी सुगंध प्रवीनं ग्र ग्र त त थैई थैई लेत गति ॥

लाल काञ्च कटि पीत टिपारो छवि सोहन अति ।

'गोविंद' प्रभु त्रैलोक विमोहत रसिक कुँवर दोऊ ब्रजपति ॥

श्लोक—

३३४

[ नट ]

आजु बनि ठनि लालन आए री तेरे मांन करि न्योछावरि ।

जदिप बहुनाइक<sup>१</sup> कहँ न मन अटकयो री तेरे गुन रूप मोहे—

तातें तोसों है री भावरि ॥

ऐसे री लालन पर तन मन धन दीजे समुक्ति सयानी—

पल छिन घटति विभावरि ।

दूती के बचन सुनि प्रेम विवस भई मिली री<sup>२</sup> 'गोविंद' प्रभु सों—

राधे बाँधि सुहाग दाँवरि ॥

३३५

[ नट ]

आजु घने ब्रजराज कुँवर बैठे सिंघद्वार निकमि अंग अंग—

नव नव छवि बरनी न जाई ।

अलक तिलक नासिका कपोल लोल कुंडल छवि देखत

धावत कोटि कोटि रवि अरुन अधर दसनन में भौई ॥

लटपटी पाग लाल पीत कुलहें भरी गुलाल—

लटकत सिर सेहरो बन्यो मोभा अधिकारि ।

'गोविंद' प्रभु की बानिक निरखत<sup>३</sup> विथकित सब ब्रज जन मन—

रूप रासि गिरिवरधर सुंदर मन राई ॥

॥ "बनि ठनि देसा भी प्रारभ ह ।

१ तुम सों मन अटकयो री ( क ग ) २ मिले री गोविंद प्रभु राखे ( क )

३ देखत ( क ग )

३३६

[ नट ]

माई री आजु मनमोहन पिय ठाहे भिघ द्वार मोहन ब्रजजन मन ।  
तेसीये मोहन सिर पाग बनी री तेसीये कुल्हे सुरंग तेसीये—  
बनी माल बन ॥

तेसीये कंठमनि तैसोई मोतिन हार तैमीये पीत बरुनी खुलीहै स्यामतन  
'गोविंद' प्रभु के जु अंग अंग पर बारि फेरि डारो कोटि मदन ॥

३३७

[ पूरबी ]

आजु बनेरी लालन गिरिधारी या बानिक पर बलिहारी ।  
चंपक भरी कुलह सिर लटकत कसुंभी पाग छवि भारी ॥  
बरुनी पीत स्याम अंग अरगजा मोजे देखि<sup>१</sup> मनमथ मसुहारी ।  
'गोविंद' प्रभु रीभि वृषभान नंदिनी कंचुकी छोरि भरति अंकवारी ॥

३३८

[ नट ]

. \* अंग अंग मोहन मन कौ री मोहन ।

मोहन पाग मोहन कुल्हे सुरंग मोहन अलक बीच बीच<sup>३</sup> चंपकली  
छवि पोहन ॥

मोहन लिलाट तिलक मोहन और मोहन कपोल अवतंम सोहन ।  
मनि कंठ आजे मोतिन माल विराजे 'गोविंद' प्रभु बलि बलि—  
कोटि मदन टग टग जोहन ॥

३३९

[ पूरबी ]

गैयो गई दूरि टेरो जू कान्ह ।

जो ऊँचें टेरे सुनावो सब ब्रगदेगी सेरे जान ॥  
वृंदावन में चरत हरित वृन<sup>२</sup> चोकि चमकि टेरे परी कान ।  
दूध धार धरनी सीचत आई 'गोविंद' प्रभु झै—  
जहाँ करत कमल मुखपान ॥

१ बलि बलि जाऊँ ( क. ग ) २ देखत ( क )

३ " लालन अंग अंग मोहन " ऐसा भी प्रारंभ है

३. बीच बीच माली चंपकली (ग) ४ टगटगी (क) ५ हरे (च ग'३ मट्ट

३४०

[ पूरघी ]

छबीले लाल की यह वांनिक वरनत वरनी न जाई ।  
 देखत तन मन करि न्योछाधरि आनंद उर न समाई ॥  
 कंद मूल फल आगें धरि के रही री सकल सिर नाई ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय सौरति मानी पठई रसिक रिभाई ॥

३४१

[ नट ]

भूठी मीठी बतियन हो लालन कैसें मन मानें ।  
 मुखकी धूर्त्त विद्या करन आए हम सों हम न होइ ते त्रिया चलोआनें  
 जैसेई साँवल तन तैसेई हो मन अति जिय की राखेई रहत—

मुख की हम सों बातें ।

'गोविंद' प्रभु कपट नायक तुम भई बड़ी बार पाँउ धारिये—  
 नीकें करि हम जानें ॥

३४२

[ नट ]

\* तें री मोहन मनु हर लियो ।

नेकु चितै इन चपल नैननि ना जानों कहा कियो ॥  
 बैठे री कुंज के द्वार तुव मग जोबत भरि भरि लेत हियो ।  
 'गोविंद' प्रभुकौ प्रेम कहाँ लो कहों री आली तो बिनु जाइ न जियो ॥

३४३

[ नट ]

प्रीतम प्रीत ही तें पैये ।

जदपि रूप गुन सील सुघरता इन बातनिन रिभैये ॥  
 सत कुल जनम<sup>३</sup> करम सुभ लच्छन वेद पुरान पठैये ।  
 'गोविंद' प्रभु<sup>१</sup> बिना स्नेह सुबा लों रसना कहा नचैये ॥

१ रहे ( ग ) २. कपटाई भई भई बार ( क )

\* "प्यारी तें री" ऐसा भी प्रारम्भ है

३ जन्म कर्म प्रवीनता सनित पुरान ( क ) ४. बलि ( ख ग )

३४४

[ नट ]

वरजत कपो जु नहीं हो लालन अपनी मुरली को—  
 हमारी सखीन औ सर्वसु चुरावत ।  
 स्रवन द्वार व्है पैठति चित भंडार खोलति—  
 निधरऊ व्है धीरज ध्यान ले आवत ॥  
 रोम पुलकि जागे असुझा पुकार लागे—  
 तेऊ अंत नहिं पावत ।  
 'गोविंद' प्रभु भले जु भलोई न्याव देख्यो—  
 ता'पर रीझि अधर मधु प्यावत ॥

३४५

[ नट ]

बानिक बनि ठनि ठाडे मोहन सुंदर जमुना तीर ।  
 मोर मुकुट चंदन खौरि कुटिल अलक भोंहें धनुख—  
 द्रग खंजन स्याम वरन नासिका कीर ॥  
 अधर दसन अधर विव चिवुऊ गाढ ग्रीवा मुक्ता माल वनमाल-  
 उर गिसाल छोन कटि ना गभीर ।  
 पग नूपूर रुनक भुनक कंपित वसनमदनमोहन कर मुरली धरे—  
 धीर गोपीनाथ 'गोविंद' बलवीर ॥

३४६

[ नट ]

विनु देखे मोहन कछु न सुहाय सखी ।  
 कहारी कहां मन अरुभिरख्यो ई जव ते' इन नैननि वदन माधुगो चखा  
 तन सुधि बुधि न रही आलीरीदिन रेंनिन गनी जदपिसकलघोष<sup>१</sup> लखी  
 'गोविंद' प्रभुकों मैं सर्वसुदीनो जि यक्री कहत तोमों कोउ कछु रहो भखी

१ पते पर अधर मधु रस प्यावत ( क ) २. सघोष ( क )

३४७

[ नट ]

\* माई हम न भई बडभागिनि बँसुरी ।

कर अंबुज में रहति सदाई पलपल पीवत अधर मधुर रसु री ॥  
मुरलीमनोहर नाम यातें कहियत ऐसो और कौनकौ बढत जगजसुरी  
'गोविंद' बलि इम कहत पियारी माई याही तें विधाता लियो—  
है हमारो सर्वसुरी ॥

३४८

[ नट ]

मीठी मीठी बतियनिहो लालन मनुहारिकरन आए ।

कहा कहिए जु तिहारी<sup>१</sup> सुहृदताई जैसे तन ऐसेई मन हो—  
ताते ब्रज जुवतिनि मन भाए ॥

कितु सकुचत पिय खरे नीके लागत अपनी प्यारी<sup>२</sup>के रस छाए ।  
वनि धनि तेई<sup>३</sup> बडभागिन जुवती जिन कौन सुकृत कीने यों—

तातें 'गोविंद' प्रभु पिय पाए ॥

३४९

[ नट ]

मोहन नैनन तें नहीं टरत ।

विनु देखे तलावेली सी लागत देखत मन जु हरत ॥  
असन बसन सैनन की सुधि आवे न कछु न करत ।

'गोविंद' बलि इम कहत पियारी तू<sup>४</sup> सिख दै सिख दै—

सखी मोपें कैसेक आवे री भरत ॥

३५०

[ नट ]

मोहन मोहिनी घाली री सिर पर ।

जोई मोही रहत सदाई जो लों न<sup>५</sup> देखों ब्रजराजकुंवर ॥  
जदपि धीरजधरों सुनि मेरी आली तदपि मुरलीधुनि सुनत प्रानहर ।  
अव न रह्यो परे मिलौगी 'गोविंद' प्रभु अंग अंग लालन सुंदरवर ॥

१ 'हम न भई' - 'ऐसा भी प्रारभ है ।

२ तेरे हृदय की सु दरताई तैसेई स्याम ऐसे ही मन हो अति तातें ( क )

३ प्रान पिया के ( क ) ४ जो जे त्रिय पूरष सुकृत ( क ) ५ जु ( ख )

५ न देखियत ये ब्रजराज ( क )

३५१

[ नट ]

ॐ राधे तेरे गावत कोकिला गन रहें री मौन धरि ।  
 कोटि मदन कौ लियो है मन हरि ॥  
 कुंज महल में मोहन मधुरी तांन राखी<sup>१</sup> वितान तरि ।  
 'गोविंद' प्रभु री भू हृदैं मों लगाइ लई वृषमानकुंवरि ॥

३५२

[ नट ]

† लालन नांहिन<sup>२</sup> री काहू केवस के ।

बावरी भई री त्रिय उनसो<sup>३</sup> मन अरुभावे ये<sup>४</sup> तो सदाई अपने रमके ॥  
 निरखि परखि देखि जियकौ भरम गयो कामिनी वदन के मन कसके ।  
 जदपि कछू मोहिनी री 'गोविंद' प्रभु पें जुवती सभा में वदत जमके ॥

३५३

[ नट ]

× लालन बहुत मनुहार करी ।

हो तो तेरी रख<sup>५</sup> देखि रही री चाहत चुप जो पे कछु कहि आवे—  
 त्यों त्यों ऽ व मौन धरी ॥

मदनमोहन बैठे कुंज मंडप तुव मिलन आतुर—

धरी पल जात जुग भरी ।

'गोविंद' प्रभु तोसो सदाई प्रनत हैं री—

कौन टेव परी सो तें ऽ व निटुराई पकरी ॥

३५४

[ नट ]

सँदेमे ऽ व कैसे<sup>६</sup> हो प्यारे ललना मांनिनी मांनत तजति ।  
 कित्तीक बार तुम हों पठई जु अनेक जतन करि मैं ममुभाई उन—  
 अपने जिय जु कोटिक वात संचति ॥

\* "प्यारी राधा तेरे" ऐसा भी प्रारंभ है ।

१ राखी है जु ( ख ग )

\* "प्यारे लालन" " ऐसा भी प्रारंभ है ।

२ नाहिने ( क ) ३ इनमों ध वे तो ( ख ग )

× 'बहुत मनुहारि' "ऐसा भी प्रारंभ है ।

५ विल ( क )



कितीक<sup>१</sup> दूरि कुंज कुंज की ओट आपुन चलिये पिय जु—  
जीत्यो चाहो रतिपति ।

‘गोविंद’ प्रभु आए दूती के पाछे पाछे प्यारी के निकट—  
अंचल ओट दिए जु कछूस<sup>२</sup> नेन सकुचति ॥

३४५

[ नट ]

हंसत हंसत लालन आये री मेरे अंगना ।

हो तो तेरो भेख देखि ठगी सी रही मेरी आली री जो पे कछु—  
कहि आवे छवि भई मगना ॥

जिय की रिस गई अधिक रुचि बाढी मोहन मोही री—  
भयो री मन लगना ।

कर सों कर गहि हृदे सों लगाइ लई मिले री ‘गोविंद’ प्रभु—  
सब सुख निधि जगना ॥

खुन्ध्या ( ब्रज-आवनी )—

३४६

[ गौरी ]

अग्रतकिट ध्रुं ध्रुं ध्रुं ध्रुं ध्रुं ध्रुं ध्रुं न न न न—  
नृत्तत रसिक वर आवत गोधन संग ।  
लाल काछनी कटि किंकिनी पग नूपुर रुनभुनात मीस टिपारो—  
अति खरोई सुरंग ॥

उरप तिरप चंद चाल मुरलिका मृदंग ताल—

संग मुदित गोप बालक<sup>३</sup> गावत तान तरंग ।  
ब्रजजन सब हरखि निरखि जै जै कहें कुसुम<sup>४</sup> बरखि—  
‘गोविंद’ प्रभु पर वारों कोटि अनंग ॥

१ केतिक ( क ) २ बछुक नेननि मुसकाति ( फ ) ३ आली री ( ख ग )

४ पिय ए सब सुख ( ख ग ) ५ ग्वाल ( फ ) ६ सुमन ( क )

३४७

[ अठताल ]

अहो पिय कैसें कें धरत मृदुल चरन धरनि ।  
गिरि की काँकरी अति कठिन तून अँकुर रसनाधर जियहि—  
सुधि सुधि करि करि छतियाँ जरनि ॥  
सरसि सुजात गरभ की थिय मुसत हमारे कठिन उर—  
सहसा ही न धरि सके डरनि ।  
'गोविंद' बलि इमि कहति पियारी तुम हीं जीयनि —  
तन पुलकित प्रेम अँसुवा डरनि ॥

३४८

[ श्रीरा ]

आओ ; मेरे गोकुल के चंदा ।  
मई बड़ी बार खेलत जमुनातट वदन दिखाई देहु आनंदा ॥  
गाइनि<sup>३</sup> की आवनी की विरियाँ दिनमनि किरन होत अति मंदा ।  
आए तात मात छतियाँ लगि 'गोविंद' प्रभु ब्रजजन सुखकंदा ॥

३४९

[ पूर्वी ]

आगे आगे गोधन पाछे गिरिधर पिय अधर वेनु—  
सुर भेद बजावत ।  
मोरमुकुट गुंजा पियरो पट वनमाला उर हार विसद—  
ब्रज जुवतिनि विरह नमावत आवत ॥  
ग्याल मंडली मधि विराजत तन मन अति अभिलाख बढावत ।  
'गोविंद' प्रभु वन ते ब्रज आवत निरखत नैन परम—  
मुख पावत ॥

१. आये ( क ) २. गोविंद गोकुल के चंदा ( क. ग ) ३. गौ आवनि की  
भई है विरियाँ ( क ) ४. लाने ( क ग )

\* आज लाल टिपारें छवि अति बनी ।

त्रिच त्रिच चारु सिखंड बीच बीच मंजुरी नूत बिराजनी ॥  
 धेनु रेनु रंजित अलकावलि सगत्र गात सौधें सनी ।  
 मधुप जूथ उडि उडि बैठ सखी पारिजाति अवतंसनी ॥  
 अंगद वलय कर मुद्रिका खचिनग कटि तट पीत काछें काछनी ।  
 श्रीवत्स लच्छ उर द्वार त्रिमद सखि कंठ लसत कौस्तुभ मनी  
 त्रिजग भँवरी लेत सुघर ग्र ग्र ता धिधिधिक्रिट थुंग थुंगनि ।  
 ग्वाल लाल गति उघटनि 'गोविंद' प्रभु त्रैलोक विमोहत—  
 नितैत रसिक सिरोमनि ॥

आवत धारें माई धेनु सखन संग करत कलोल ।

'बदर पांडु मुख ललित अधर छवि भ्राजत कुंडल मृदुल कपोल ॥  
 गोरस छुरित सुदेस केस अति मुकट खचित मनिगन अमोल ।  
 मृग मद तिलक चपल सुंदर भ्रुव कृपा रंग रंगे नैन सलोल ॥  
 उर बनमाल <sup>३</sup>मधु गंध लुब्ध रस लटपटात मधुपनि के टोल ।  
 कनक<sup>४</sup> किंकिनी नूपुर कजित कल कनक कपिस कटि तट निचोल ॥  
 भ्रुव वज्रांकुस कमल<sup>५</sup> बिराजत पद नख दुति कोटि चंद नहीं तोल ।  
 चलत चाल भजराज मत्त जिमि 'गोविंद' प्रभु हँसि बोलत मधुरे बोल

ॐ " लाल टिपारें " ऐसा भी प्रारभ है ।

१. मृदुल हास मुकुलित अधर ( क ) २ अलोल ( क ग ) ३ सुगंध ( क )

४ कनक ( ग ) ५. वलय ( क )

३६२

[ गौरी ]

श्रावत वन ते चारें धेनु ।

सखा संग सुति वदत मधुप गन मुदित वजावत वेनु ॥  
अमृत मधुर धुनि पूरत स्रवननि उठि घाई सकल तजि ऐनु ।  
हृदै लगाइ व्रजेस्वर अंचल पट पोछत मुख रेनु ॥  
उन गर्दन मज्जन करवावति भूपन पीत वसेन ।  
'गोविंद' प्रभु खटरस भोजन करि विमल सेज सुख सेन ॥

३६३

[ श्रीराग ]

श्रावत वन तें व्रज कौ री गोधन संग ।

मधुव्रत मधुमाते सुति देत मुरली वाजे तान तरंग ॥  
पीत टिपारी लाल काछनी कटि बलेज धातु विचित्र सोहे—  
स्यामल अंग !

'गोविंद' प्रभुसखा अं स भुज धरें फेरत कमल गावत सुति उतंग ॥

३६४

[ गौरी ]

उमगि चली पति वरनी में ते स्याम सुभग तन भाई ।  
ताहू मं अति अंग राग सोभा कही न जाई ॥  
लाल पाग चौकरी विराजे कुलह सुरंग ढरकाई ।  
स्निग्ध अलक बिच बिच राखी चंपकली अरुभाई ॥  
देखन रूप ठगौरी मी लागी नैन रहे अरुभाई ।  
'गोविंद' प्रभु सव अंग अंग सुंदर मनि राई ॥

३६५

[ गौरी ]

कदम चढ कान्ह बुलावत गैया ।

मोहन मुरली कौ सव सुनत ही जहाँ तहाँ तें उठि धैयाँ ॥  
आवो आवां सखा सिमिट सव पाई है एक ठैयाँ ।  
'गोविंद' प्रभु बलदाऊ सों कहन लागे अब घर कौ वगदैयाँ ॥

१ वसन सजेन ( क ) २ चने व्रज कौ ( क. ग ) ३. वरनी न ( क )

४ पाग के पाई ( क )

३६६

[ श्रीराग ]

कनक कुंडल कपोल मंडित गोरज छुरित सुकेस ।  
 मद गज चाल चलत सुरभिन संग लाडिलौ कुँवर<sup>१</sup> व्रजेस ॥  
 नैन चकोर किये व्रजवामी पीवत बदन राकेस ।  
 अति प्रफुलित मुख कमल सवनि के गोपकुल नलिन दिनेस ॥  
 अति मद तरुन विधूर्नित लोचन अति विकसित रस कृपा अवेस ।  
 चितवत चलत माधुरी बरसत 'गोविंद' प्रभु व्रज द्वार प्रवेस ॥

३६७

[ श्रीराग ]

कमल लोचन कान्ह मधुर सुर गावे ।

अधर वंसी धरी त्रिजग ग्रीवा करी कुटिल अवलोकनि कहि नहिं भाव<sup>२</sup>  
 बदन अंबुज भास कुटिल कुतल अली के की पंखावली सीस सोहे ।  
 स्रवन गुंजा पुंज कर्णिका लंबिना भोंह मनमथ चोप भवन मोहें ॥  
 गंड मंडल चारु विमल कपोल दुति छुरलिका चुंबिना जगत जाने ।  
 परम निर्लज्जिता बंस कुल संग हो देखि 'गोविंद' प्रभु अनख मानें

३६८

[ पूरबी ]

गोधन पाछें पाछें आवत नटवर वपु काछें ।

छुरित गोरज अलक छवि मोपे बरनी न जाई—

कनक कुंडल लोल लोचन मोहन वेनु बजावत ॥

प्रिय सखा भुज अंस धरें नील कमल दच्छिन कर<sup>३</sup> मधुव्रत-

सुति देत छंद मंद मधुरें गावत ।

'गोविंद' प्रभु बदन चंद जुवती जन<sup>३</sup> नैन चकोर—

रूप सुधा पान करत काहे न जिय भावत ॥

३६६

[ श्रीराग ]

गोप वृंद संग निर्रत रंग ।

स रि ग म प ध नी झलाप करत उपजत तान तरंग ॥  
लाल काछि कटि पीत टिपारी वनज धातु चित्रित सुम अंग ।  
'गोविंद' प्रभु त्रैलोक विमोहन वारि फेरि डारों कोटि अनंग ॥

३७०

[ पूरवी ]

गोवर्द्धन चढ़ि टेरी हो गांग बुलाई धूमरि धौरी ।

स्याम जलद गंभीर गरज अि मंद मंद—

और मधुर मधुर सुर सुनत स्रवन फेरी होरी ॥  
दूध धार धरनी पर सिंचति धाई सबै पूछ फेरि फेरी ।  
'गोविंद' प्रभु कौ मुखारविंद देखि हूँकि सब आसपास रही घेरी ।

३७१

[ पूरवी ]

घेरो घेरो हो बलदाऊ ।

गैयाँ दूरि गई या वन में नहिं देखियत गिरि चढ़ि जाऊँ ॥  
बाल केलि क्रीडत संकरसन धाड गए हरि राऊ ।  
मथि पय पीवत ग्वाल मंडल से झजहूँ नहीं अघाऊँ ॥  
चढ़िअ हो छों चितवत हरि टेरि सुनी आऊँ ।  
'गोविंद' प्रभु पिय कौ आवत आनंद उर न समाऊँ ॥

३७२

[ श्रीराग ]

घेरो लाल आपुनी गैयाँ ।

नेकु मुरली बजाह सुनावो म्रवन सुनत ये जहाँ तहाँ तें—

आवेगी ४ घैयाँ ॥

चरन चरत दूरि गईं देखियत नहीं हरित कोमल तून देखत रही लुभैयाँ  
 'गोविंद' प्रभु ऊँचे टेरि टेरि बोलो भई अवार—

बगदाबहु नातरुखिजेगी रानी भैया ॥

३७३

[ गौरी ]

ठगौरी घाली री<sup>१</sup> मेरो मजु लियो हरो ।

सखी राममंदर ए री बिजु देखे जुग समान जात घरी ॥

बदन माधुरी पीवत मत्त भए ढीठ री अब मेरे नैननि कछुवान परी ।

'गोविंद' प्रभु जब देखत सखी सब सुधि बुधि बिसरी ॥

३७४

[ गौरी ]

ठाढे खरिक द्वारे नैननि ही में हंसत ।

गाँई दुहावन चली किमोरी लोचन हृदै बसत ॥

मृदु मुसिकाइ चली उलटी ह्वै उर तें अचल खसत ।

मुख की किरन सुधा रम पूरी पीवन मोहन तृमत ॥

'गोविंद' प्रभु की अटपटी बातें बरबस ही उर गसत ।

जो देखें सो मोहि रहे सखि ज्यों तेंबोल मुख रसत ॥

३७५

[ गौरी ]

ठाढे हैं दोउ भैया सिंघ<sup>२</sup>पौरि ।

अति उदार सकुँवार मनोहर निरखि सखी आई दौरि ॥

नीलांवर पीतांवर भूखन उर वनमाला मलय जु खोरि ।

ब्रजकुल मानसरोवर मंडल वे देखो कल हंसनि जोरि ॥

'गोविंद' प्रभु हरि नंदसुवन स्याम बलराम गौर दरमन ठगोरि ।

ऐसे पति हम कैसे पावे श्रीराधे सकर अरु गौरि ॥

❧ 'तें ठगौरी' . ऐसा भी प्रारंभ है ।

१. री सिर मेरो ( य )

तव तें रूप ठगौरी परी ।

जव तें दृष्टि परे मनमोहन रहत सदा संगही तवतें भेख मधुव्रत धरी ।

कसल वदन कबहूँन तजि सकल सुगंध चली छवि तरंग री ।

विकसित रहत सदा 'गोविंद' प्रभु सुरभी रेनु रंजित पराग भरी ॥

देखो माई आवत हैं वनवारी ।

मोरमुकुट कटि पीत काछिनी उर वनमाला धारी ॥

ग्वाल मंडली मधि विराजत मनमथ के मदहारी ।

'गोविंद' प्रभु पिय के मुख ऊपर त्रिभुवन सोभा वारी ॥

नंदनदन सुरभी संग आवत बने ।

केकी नव चंद्रिका मुकुट सिर पर धरयो मकर कुंडल रुचिर—

जुगल सवन-ठने ॥

कुटिल कच अलक गोरेंनु मंडित वसन भृकुटि कों बड दग मानों—

मदन सर तने ।

नासिका ललित वेंसरि अरुन अधर कर मुरलिका टेर गोपी—

विरह दुख हने ॥

मालवैजंती उर पीत पट करि कस्यो किंकिनी रटत नूपुर—

चरन रुनभुने ।

नख सिख सुभग नटभेख गोपालवर हंसत प्रमुदित संग—

गोप बालक घने ॥

नाद मरु नृत्परम गर्जना घोर में निरखि व्रजजन सकल—

देखि सुख सों सने ।

जयति गिरिराजधर धीर 'गोविंद' प्रभु तुव सृजस बनक सिव—

सेस स्रुति भने ॥



३७६

[ गौरी ]

वन ते वने आवत ब्रज ।

सिखी सिखंडदल कुसुम चूडा सब छुरित अलक गोरज ।  
 वनज धातु सांवरे अंग चित्रित उर पर वनी जु सज ।  
 प्रिय सखा अंस भुजा धरें लटकत चलत चाल मद गज ॥  
 अधर सुधा पूरित सब रंध्रनि मुरली कलित करज ।  
 'गोविंद' प्रभु ब्रजबासी हरखित निरखत<sup>१</sup> वदन नीरज ॥

३८०

[ गौरी ]

वन ते वने माई आवत ब्रजनाथ ।

गावत गौरी राग बल्लव बालक साथ ॥  
 कँसुभी पाग सिर कुल्हे चंपक भरीं सेहरौ कहँ कहँ कुसुम सिथिलाथ<sup>२</sup>  
 बजावत पत्र शृंग कोलाहल आवत घोख पथ ॥  
 प्रिय सखा भुज अंस लीला धरें रतन खचित मुरली सोहे हाथ ।  
 'गोविंद' प्रभु के मुखारविंद पर वारों कोटिक मनमथ ॥

३८१

[ पूरवी ]

बोलत धेनु गोवर्द्धन गिरि चढि ।

मोहन मुरली धुनि सुनि<sup>३</sup> स्रवननि—  
 धौरी काजर गाँग गुने री मुरि धाई प्रेम बढि ॥  
 आसपास सन घेरि रही व्है<sup>४</sup> वह वा पर वह वा पर चढि ।  
 'गोविंद' प्रभु सु हस्त कमल परस कियो वे तारें दूने दूध बढि ॥

३८२

[ गौरी ]

ब्रजरानी री तुव कुँवर वर ।

जब वह वेंनु अधर धरत तब ही खग मृग लता सरिता धेनु—  
 सुनि सखी उमगि भरत हैं री आनंदवर ॥

१ निरखि ( ख ग ) २ कुसुम ग्रथ ( क ) ३ सुनत स्रवननि त्रिवस  
 नई काजर गाँग गूजरी हिरन मुख धाई (ख ग) ४ है पकरि बाह वह (क)

श्रीर सखी सरसी हंस सारस अति सुख नैन मूँदत री—

गीत चारु सुदेस सुनि उनकें प्राण हर ॥

धनि मृगी पीवत ए सहे पति 'गोविंद' प्रभु कों—

लक्ष्मी सहोदर री वरन वर ॥

३८३

[ पूरवी ]

मुरली अरुन अधर धरें आवत हरि हरे इरें—

गाधत मुख रसिक तान सुरभिन संग लीने ।

मोरपच्छ सीस मुकुट मकराकृत कुंडल छवि—

वैजंती माल अंग चंदन ही दीने ॥

काञ्चिनी कटि नूपुर पद निपट वचन अटपटे रट —

नटवर वपु ग्वाल संग सोमित रंग भीने ।

'गोविंद' प्रभु गिरिवरधर ग्वालि निरखि थकित रही—

धावत मुख वारिज ऊपर मकर द्रग कीने ॥

३८४

[ गौरी ]

मोहन तिलक गोरोचन मोहन लिलाट अति राजें ।

मोहन पर मोहन कुल्हे मोहन सुरंग अति भ्राजें ॥

मोहन स्रवन मोहन कनक कुसुम मोहन अवतंस विराजें ।

मोहन अधर पुर मोहन मुरली मोहन कल गाजें ॥

मोहन मुखारविंद पर भूमत मोहन अलक अति मानों मधुकाजें

'गोविंद' प्रभु नखसिख मोहन जू मोहन घोखु सिरताजें ॥

३८५

[ गौरी ]

लाडिलौ वन तें वने आवत गोधन संग ।

गोरज छुरित कपोल अलक जु कृपारस नैन सुरंग ॥

लाल काञ्चकटि पीत उपरना वनज धातु सोहे अंग ।

दरसनीय वनमाल तिलक पर वारो कोटि अनग ॥

सुरति देत कुसुमनि गति मुरली वजावत तान तरंग ।

'गोविंद' प्रभु के अंग अंग पर सुंदर सीवा लहरितरंग ॥

३८६

[ श्रीराग ]

सोभा कहि न जाइ बन तें आवनी ।

प्रिय सखा अंस भुजा धरें लटकत चाल चलत गज—

मधुर मधुर सुर गावनी ॥

मुदित<sup>१</sup> सखा स्तुति मधुपगन मंद मंद सुरली बजावनी ।ब्रजजन<sup>२</sup> उमगि चले 'गोविंद' प्रभु देखन को—

निरखि मदन ताप नसावनी ॥

३८७

[ श्रीराग ]

सोभित सुंदर मृदुल गंड ।

गोरज छुरित कनक कुंडल मिलि अति छवि राजत घदर पंड ॥

सोहत लाल पाग लालन सिर लटकि रही सीस सिखंड ।

त्रिजग भँवरी हँसिलेत 'गोविंद' प्रभु अति प्रवीन नृत्तत तंड ॥

३८८

[ पूरवी ]

सोहत कनक कुसुम करन ।

अरु सोहत गोतिन अवतंस लटकत मनमथ मन हरन ॥

लाल पाग आधे सिर कुलहें चंपक वरन<sup>३</sup> ।

'गोविंद' प्रभु सिंघद्वारे ठाढे पिय सखा अंज भुज धरन ॥

३८९

[ पूरवी ]

सोहत गिरिधर मुख मृदु हास ।

कोटि मदन कर जोरि उपापित बलगित जु भुव विलास ॥

कुंडल लोल कपोलन<sup>४</sup> की छवि नासा मुकता प्रकास ।

सोभा सिंधु कहाँ लगि वरनों वारनें " 'गोविंद' दास ॥

१ सरित ( क ) २ वीधिन ( क ) ३ सोभित कनक कुसुम निकरन "   
 ऐसा भी प्रारंभ है । ३ भरन ( क ख ग ) ४. विराजठ ( ग )   
 ५ वलि वलि ( क )

३६०

[ पूरवी ]

सोहत लाल पाग साँकरे पेचन चोकरी ।  
सुंदर कर केसन बिच राखी सुग्रथिन कुंद करी १ ॥  
सुरति स्रमित अति सिथिल लोचन निर्रत भुव रम भरी ।  
'गोविद' प्रभु प्यारी संग बैठे जहाँ २ निविड निकुंज दरी ॥

३६१

[ सारंग ]

सुंदरता की ए री इद ।

कुंडल लोल कपोल विराजत बलगिन भुव जु तरन मद ॥  
विद्रुम अधर दसन दाडग द्युति दुलरी ३ कंठमनि हार विसद ।  
'गोविद' प्रभु वन तें ब्रज आवत मद गज चाल धरत पद ॥

३६२

[ गौरी ]

निर्रत मोहन रसिक सखन सहित गृ गृ त त थैई थैई तत थैई तता  
मृदंग ध्रुम ध्रुम ताल उपंग मिलि सु ति देत मधुपगन मधुमता ॥  
टिपारो सिर पीत लाल काछिनी वनी किंकिनी भुनभुनात—  
गावत सुरसता ।  
'गोविद' प्रभु गोप बालक संग जै जै जै करत प्रेम अनुरता ॥

व्यासू —

३६३

[ कान्हरो ]

गिरिधरलाल बियासू कीजे ।

पूरी दूध मलाई मिथ्री पहिलें कौर प्यारी कों दीजे ॥  
ते जेंवत लाल लाडिली दोऊ ललितादिक निरखत सुख लीजे ।  
'गोविद' प्रभु प्यारी कर बीरी पीक दान सखियन कों दीजे ॥

३६४

[ कान्हरो ]

मैया मोहे माखन मिश्री भावे ।

आँटचो दूध सदि धौरी कौ भरि कटोरा कौन पिवावे ॥

अजहुँ विहान करत मेरो भरी नींद री की ऊपर आवे ।

'गोविंद' प्रभु पर बलि बलि जननी ले उछंग पय पान करावे ॥

काव्यानु—

३६५

[ केदारो ]

लालन गिरिधारी नवल कुंजविहारी ।

अंग अंग पर मनमथ कोटिक वार डारी ॥

संग नवल नारी वृषभानु की दुलारी ।

सुरति केलि अंग अंग सुखकारी ॥

ग्रथित बेनी पियारी<sup>१</sup> चंपक जाति निवारी ।

परसत उर पुलकित भरत अंकवारी ॥

कंठ सुघर भारी मधुर तान संचारी ।

दंपति रागरंग राख्यो 'गोविंद' बलि बलिहारी ॥

३६६

[ कान्हरो ]

\* नवल नागरी संग नवल नागर राई ।

नवल कुंजविहारी मनमथ मनुहारी सुरति केलि अंग अंग सुखदाई ॥

नवल राग कान्हरो जु कहत सुघर नवल नवल तान लेत मन भाई ।

नवल रंग दंपति के देखत 'गोविंद' बलि बलि जाई ॥

३६७

[ कान्हरो ]

कुंजमहल में रस भरे खेलत पिय<sup>२</sup> प्यारी ।तैसोई तरनि तनया तीर तैसोई सीतल<sup>३</sup> सुगंध मंद बहत पवन—

तैसेई सघन फूली जुही निवारी ॥

१. पिय प्यारी ( क ) २. मंग प्यारी ( क ) ३. सीत ( ख ग )

\* "प्यारी नवल नागरी" मिया मी पारंभ है

तैसेई प्रफुलित बनराजीव तैसेई अलिकुल री—

स्रवननि कों अति सुखकारी ।

‘गोविंद’ बलि बलि जोरी सदाई<sup>१</sup> विराजो—

गावत तान तरंग सुधर मारी ॥

३६८

[ केदारो ]

रसभरे दंपति कुंजमहल में सुरति रसी ।

नव संगम री अर्ध घूँघट पर अवलोकन में ईपद् हास हँसी ॥

स्याम भुजन बीच प्यारी वदन विराजित—

मानो जलधर तें निकस्यो पूरन ससी ।

अमृत वचन किरन स्रवत पिय पर—

‘गोविंद’ प्रभु कीन्हें सुहाग सों वसी ॥

३६९

[ केदारो ]

कुंजमहल में ललना रसभरे बैठे संग पियारी ।

रचित रुचिर रमनीय वदन पर मृग मद तिलक सँवारी ॥

वन चय चिकुर कुसुम नाना रँग—

ग्रथित मृदुल कर चंपक वकुल गुल्दाब निवारी ।

‘गोविंद’ प्रभु रस वस कीने वृषमानुनंदिनी<sup>१</sup>—

सो तो मदनमोहन गिरिधारी ॥

४००

[ कान्हरो ]

कृपा रस नैन कमल फले ।

युव विलास देखत कोटिक मनमथ रहे भूले ।

वदन कमल पर कुटिल अलक छवि मोतिन<sup>२</sup> अवतंस रहे भूले ।

‘गोविंद’ प्रभु प्यारी संग बैठे<sup>३</sup> जहाँ कलिदी कृले ॥

१ दुखारी ( ख ग ) नंदिनी मदनमोहन ( क ) २. मोतिन हार अवतंस कृले ( क ) ३. बैठे कलिदी के फूले ( ख, ग )

४०१

[ केदारो ]

बैठे दोउ कुंज मंडप पिय प्यारी ।

दूल्है हो नवललाल गिरिधारी दुलही संग श्रीवृषभानदुलारी ॥  
लाल पाग लालन सिर सोभित नवल सेहरो छबि लागत भारी ।  
'गोविंद' प्रभु पिय इह सुख देखत अपनो तन मन धारी ॥

४०२

[ कान्हरो ]

\* रंग महल में रंगीलो लाल बैठो रंग भरे ।

हंसि गिरि जात पिय की अंक मधि वल्गु हास रसमत्त परस्पर मनहरें  
कुच अंतर गाढे आलिंगन देत ललन पिय भुज बस परें ।  
'गोविंद' प्रभु प्यारी संग गावत तान वितान तरें ॥

४०३

[ कान्हरो ]

जोरी सरस बनी ।

मदनगोपाल राधिका दुलहनि सकल सिंगार करी ॥  
गौर स्याम तन अधिक विराजत अरस परस रस उमगि भरी ।  
'गोविंद' दास विलाम महा सुख अंस बंध ब हो लय री ॥

४०४

[ केदारो ]

मदनमोहन बैठे मंजुल कुंज मंडप प्रेयसी मुदित संग ।

लटपटी पाग आधे सिर लटकि रही सेहरें चंपो भूमि लाल भरे रमरंग ॥  
गोरोचन तिलक अलक कुंडल छबि चारुप्रभात उपजत कौटि अनंग ।  
स्याम सुभग तन पीत पट राजत अंग अंग उछलित छबि तरंग ॥  
रसिक राइ रसमत्त पियारी सुंदर कर कमल धरत कुच उतंग ।  
'गोविंद' प्रभु सुहाग बस कीने री खसित मोतिन मंग ॥

४०४

[ कान्हरो ]

मुख सौं मुख मिलाइ देखत आगसी ।

विकसित नील कमल द्विग उदित<sup>१</sup> भयो किधौं ससी ॥

निरखि बदन मुमिक्याइ परस्पर करत बिहँसि गिरिजात अंकहँसी ।

'गोविंद' प्रभु<sup>२</sup> प्यारी जु परस्पर देखियत<sup>३</sup> परे प्रेम बसी ॥

४०६

[ कान्हरो ]

बैठे दोउ कुंजमहल पिय प्यारी ।

सोभा कही न जाइ विविध कुसुम तन—

पहिरें भूखन अरगजा भीनी सारी ॥

रति रसमग्न भए मिलि गावत राग कान्हरो भारी ।

'गोविंद' प्रभु पिय देखि दंपति सुख कोटिक रतिपति वारी ॥

४०७

[ कल्यान ]

❀ दंपति रंग भरे ।

बैठे कुंजमहल तें निकसि राग कल्यान अलापत—

रसभरे लेत परस्पर रंग वितान तरे ॥

लेत अति जति भेद कर किनरि इक सरी टोकतान सुठार धरे ।

'गोविंद' बलि बलि पिय प्यारी बांह धरे दोऊ प्रति सुघर खरे ॥

४०८

[ विहागरो ]

खेलत कुंजमहल गिरिधारी ।

विविध भाँति फूली द्रम बेली तैसिअ सरद निसा उजियारी ॥

तैसेई मधुप कोकिला क्जत तैसेइ पवन बहत मलियारी ।

हरखि हरखि मच अंग परसि के इहि विधि सुख वरखत गिग्धारी ॥

रसिक सिरोमनि नंदनंदन अरु रमिकराइ वृषभानुदुलारी ।

'गोविंद' प्रभु दंपति सुख सागर छिनु छिनु उठत तरंगनि भागी ॥

१. धकित भयो (क) २. पिय प्यारी परस्पर (क) ३. दंपति परे (ख ग)

४. 'बैठे कुंजमहल दंपति' पेना भी प्रारभ है ।



४०६

[ विहाग ]

करत हैं कुंज कुजन केलि ।

जमुना पुलिन सुभग वृंदावन गिरि गहवर रस खेलि ॥  
 सौरभ जल भरना सरिता सर अवगाहन पग पेलि ।  
 ब्रज विहार 'गोविंद' गिरिधर पिय राधानागर वेलि ॥

४१०

[ विहाग ]

क्रीडत दोऊ नवनिकुंज ।

स्याम स्यामा ललित लपटनि बढयो आनंद पुंज ॥  
 बढयो सुरत संजोग रस बस भए प्रेम तरंग ।  
 हाव भाव ब्रजभाव मृदु बधू बचन उदित अनंग ॥  
 राधिका गिरिवरधरन छवि कहत न बने बैन ।  
 बसो 'गोविंद' दास के उर संतत निरखो नैन ॥

४११

[ केदारो ]

कदंब बन बीथिन करत बिहार ।

अति रसभरे मदनमोहन पिय तोरयो पिया उर हार ॥  
 कनक भूमि विधुरे गज मोती कुंज कुटी के द्वार ।  
 'गोविंद' प्रभु<sup>१</sup> स्वहस्त करि पोहत सुंदर ब्रजराजकुंवार ॥

४१२

[ कान्हरो ]

लाल लाडिली सुजान रूप सदन गुन निधान—

कुंज कुसुम के वितान बैठे दोउ वे समान ।

चारु हास रति विलास मंद मंद मुसकान—

छवि बदन के सुंदरता पर वारों राधे ससि भान ॥

नाव सिख सोहत सिंगार गौर स्याम तन सुदेस—

सनमुख द्रग सर सार्धे मानों भ्रुकुटी कमान ।

सुरति केलि रसिक भेलि विच विच भुज कंठ मेलि—

तरनि तिलक गोपसुता नाइक सिरमौर कान्ह ।

चिरजीवो दंपति मेरे तन मन धन प्रान जीवन—

या नैननि तें न टरो तुम विनु चाहों न आन ॥

'गोविंद' गिरिराजधरन राधा सुख नंदनंदन—

प्रेम सहित हुलगाऊँ गाऊँ गुन रसिक गान ॥

४१३

[ ईमन ]

\* हँसि पीक डारी हो मेरे अँचरा परी-हौं जु चली जाति ही गली ।

मोहन बैठे छाजें निरखि बदन ग्रह तन न परें चैन—

कछुक सकुच ए री गुरुजन की जिय में लाज धरी ॥

सुंदर कर कमल फेरि केंसें न दई जहाँ री निवड<sup>२</sup>निकुंज दरी ।

ले चले मोहि जहाँ री 'गोविंद' प्रभु रह्यो न परे<sup>३</sup> प्यारी—

प्रेम हृदौ री उमगि मरी ॥

४१४

[ नायक ]

△ तू मोहि कित लाई इह गली मेरी माई ।

देखो देखो जोई डरपति ही सोई माई—

आगे<sup>१</sup> बैठे मोहन अब कैसे<sup>२</sup> जैवो मेरी माई ॥

रसन दसन धरि कर सों कर मीडति—

दूती सों खीजति आनंद उर न समोई ।

'गोविंद' प्रभु की तेरी हिली मिली दाते<sup>३</sup> हौं यच जानति—

लली कीनी बडे नग सों भेट कराई ॥

† "हौं जु चली जाति ही गली हँसि पीक" ... ऐसा भी प्रारंभ है.

१. आवति ही गली ( क ) २. नवनिकुंज ( ग ) ३. परत ( क ख )

△ "अरी तू मोहि ... आँर "इह गली मोहि ऐने भी प्रारंभ है ।

४१५

[ विहागरो ]

आगें चल प्यारी री जहाँ सधन नवल निकुंज<sup>१</sup> भारे ।

कर सो अंचल करखि<sup>२</sup> कहत सुजान सुंदर प्यारे ॥

निकट सरिता समीर मीतल री जहाँ कोकिला कलरव मोर<sup>३</sup>—

करत अखारे ।

बाँह जोटी रसमत्त मद गज चलत अति छवि<sup>४</sup> 'गोविंद'<sup>५</sup>—

बलि बलि हारे ॥

४१६

[ संकराभरन ]

अंचरा छौडो हो बलि जाऊँ ब्रजराज<sup>६</sup> लाडिले लडेंते ।

ज्यों ज्यों बचति पिय मदनमोहन त्यों त्यों होत बडेंते ॥

देखत सकल ब्रज तुम्हें तो सकुचनाँदि बाते<sup>७</sup> तुम्हारी राखो सेंते ।

दूती सों सेंन दे हँसि कहत 'गोविंद' प्रभु चलि<sup>८</sup> री लिवाइ—

जहाँ सरोवर तीर कुंज हौं आव चंपक वीथिनि गहि पाछें तें ॥

४१७

[ कान्हरो ]

अधर मधुर पूरित मुखरित मोहन वस ।

चलत दृगंचल चपल करत अति विलुलित पारिजात अवतंस ॥

मानो गजराज कलभ अति मद गल लटकत आवत प्रिय सखा—

भुज धरे अंस ।

'गोविंद' प्रभु कें जु श्रीदामा प्रभृति सखा जै जै करत प्रमंस ॥

४१८

[ कान्हरो ]

देखो देखो मुरली अकृति नचावत सप्तरंभ्र गाइनि<sup>९</sup> संग गावत ।

मँवरो उपग<sup>१०</sup> सर्व श्रुति धावति उघटत सब्द अधर दोउ पियकें—

अँखिया पलक कर ताल बजावति ॥

१. निकुंज भवन भारे(क) २. कर गहत सुजान(क) ३. हंस मोर (क) खसोर(ख)

४ छवि देत इन पर 'गोविंद' (क) ५ ब्रज जाडिले (ख) जाऊँ जाडिले (क)

६ ज्यों ज्यों अब बचति \* त्यों त्यों अब होत (क) ७. बाते सो खरी राखो(क)

८ चले लिवाइ(क) ९ गिरिवर संग(क) १० अग सरस (क ग) उपग सरस (ग)

अचट और अनघात अनागत चपल करज गति भेद जनावति—

कुंडल लोल रीम्भि मिर नावति ।

अलक सोभा कुसुमनि बरसावति बरुहा चंद्र धुकि देखत—

तिलक चट्टि प्रभु और 'छवि पावति ॥

४१६

[ केदारो ]

नेकु सुनावो हो मोहन मुरली तान ।

इते मान कित होत बडे ते' जानियत परम सुजान ॥

अपुने कर ले धरत लालन राग रागिनी गान ।

रीम्भि लपटाई रही मदनमोहन सों हृदे चापिकें रसन<sup>२</sup> दसान ॥

हँसि मुसिक्याइ कहत भलें ज़ भले सकल कला गुन निधान ।

'गोविंद' प्रभु सुहाग बस कीने त्रिलोकी जुवतिन<sup>३</sup> सुखदान ॥

४२०

[ ईमन ]

वेनु वजावता री मोहन कल ।

वाम कपोलवाम भुज पर धरि बलगित भुव रस चपल द्रगंचल ॥

सिंदूरारुण<sup>४</sup> अधप सुधारस पूरत रंध्र मृदुल अंगुली दल ।

अवधर विकट तान उपजत रम 'गोविंद' प्रभु बलि सुधर अनुज बल ॥

४२१

[ ईमन ]

\*लालन मुख वेनु वाजे<sup>५</sup> मंद मंद कल ।

वाम भुजा पर वाम कुंडल बलगित भुव<sup>६</sup> जुग चपल ॥

मोहत व्योम विमान वनिता खसित नीवी सुध्यों न अंचल ।

'गोविंद' प्रभ के तरुन मद माते विघर्नित लोचन जुगल ॥

४२२

[ केदारो ]

भले कहत लालन केदारो ।

सुंदर स्पाम सुवर मधुरे<sup>७</sup> मधुरतान तरंग रग रझो भारो ।

१. ओट (क) २. हसान (क) ३. जुवती निदान ४. किट्टुय अरुण

\* "मोहन मुख वेनु" ऐसा भी प्रारंभ है । ५. वाजत (क) ६. भुव जु(क)

७. मधुर तान नव रग रंग रझो (ख)

मोहन मुरली में लेत सुघर ब्रज कौ पियारो ।

'गोविंद' प्रभु सों इमि कहति पियारी 'गुन को उजियारो ॥

४२३

[ कान्हरो ]

महिमा धनि तुव मति श्रेष्ठतुव परम निपुनि नृत्त तेरो बन्यो—

स्यामा घुंदावन रीके बीसों विसा ।

सप्तसुर तीनग्राम इक्कीस मूर्च्छना बाइस सित मति राग मध्यरंग—  
रंग राख्यो सरगम प ध नि सा स स स स न न न न ध ध ध ध—

प प प प म म म म ग ग ग ग री री सा सा ॥

जो इन नैननिसेननिबेननिगोननि नयो हस्तक नयो भेद करि दिखा ई  
ले री प्रीतम कौ चित चोरि लीनो कीनो अरु बढी निसा ।

'गोविंद' प्रभु एस बस करि तोरि तोरि जोरि जोरि अबलोकत—

तेरी ताई अनतजि वे की भूलि गई दिसि विदिसा ॥

४२४

[ ईमन [

रसिक सिरोमनि राग कल्याण गावें ।

अब घर बिकट तान तरंग उपजावें ॥

सब विधि रसिक रसाल सुंदर मोहन बेंनु बजावें ।

'गोविंद' प्रभु कों वृषभानुनंदिनी रीभिरहसि कंठ लपटावें ॥

४२५

[ कान्हरो ]

आजु माई बने री लाल गोवर्द्धनधर ।

रतन जटित छाजे पर बैठे वृंदारण्य पुरंदर ॥

ग्रथित कुसुम अलकावलि अति छवि धुनत मधुप अवतंसनि पर ।

लटक जात लटक जात श्रीदामा अंक मधि हंसि मिलवत—

कर सों कर ॥

सनि कौस्तुभ हृदे पदकविराजत कंठ धनी 'गज मोतिन की लर ।

'गोविंद' प्रभु जु सकल ब्रज मोह्यो अंग अंग सुंदरवर ॥

१२६

[ लंकराभरण ]

\* आजु सखी बने गिरिधरन ।

निरखि वदन विथकित भई आली सिथिल भई गति चरन ॥  
 कसुंभी पाग लटकि रही आधे सिर रुरित चारु अवतंस करन ।  
 मिंघद्वार ठाढे पिय मोहन श्रीदामा अस भुज धरन ॥  
 चंपक कुसुम माल हृदे लंघित अरु अति छवि पीत उपरना फरहरन  
 'गोविंद' प्रभु चित चोरचो चिते करि ईष्ट हास त्रिलोकी—  
 जुवतिन मनहरन ॥

४२७

[ विहागरो ]

अंग अंग मन की मोहनी ।

कुलह सुरंग कुसुमन भरी लटकत कसुंभी पाग चोकरी सोहनी ॥  
 स्निग्ध निविड अलकावलि अति छवि विच विच चंपकली पोहनी ।  
 खरकि सिला<sup>१</sup> ठाढे 'गोविंद' प्रभु विकल<sup>२</sup> भई प्यारी खसित—  
 कर ते<sup>३</sup> कनक दोहनी ॥

४२८

[ ईमन ]

कहि न परे हो रसिक कुंवर की कुंवराई ।

कोटि मदन<sup>३</sup> नव द्योति विलोकत परसरित<sup>४</sup> नख<sup>५</sup> इंदु किरन की  
 जुन्हाई ॥  
 कंकन<sup>६</sup> वलय हार गजमोती देखियतु अंग अंग में भाई ।  
 सुधर सुजान सुरूप सुलच्छन 'गोविंद' प्रभु पिय सत्र विधि सुंदरताई ॥

४२९

[ नायकी ]

ठाढे कुंज भवन ।

लटपटी पाग छुटी अलकावलि घूमत नैन सोहें अरुन वरन ॥

\* " धनि आजु सखी ऐसा भी प्रारंभ है ।

१ सिखर ( क ) २ विषम ( क ) ३ खद्योत ( ग ) नख द्योति ( क )

४ परसत नव ( क ) ५ नख ( क, ख, ग ) ६ कनक वलय हार  
 लगभगत देखियतु ( क )

अंग अंग अरगजा भीजि रह्यो तन बागो लेत सलन ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय प्यारीकी बानिक पर निरखि भयो रतिपति जु सरन ॥

४३०

[ कंदारो ]

△ पीवत नैन अघात मनमोहिनी सय अंग अंग अंग ।  
 मोहन पाग सिर अलि बनी और कुल्हे चंपक भरी अति सुरंग ॥  
 मोहन लिलाट तिलक मोहन और नैन रंगे कृपा रंग ।  
 मोहन हृदे बनमाल मोहन मधुप गुंजत संग ॥  
 मोहन राग वेदारो अलापत मोहन मधुरी तान तरंग ।

'गोविंद' प्रभु नख सिख मोहन और जय जय बलि बलि ललित त्रिभग

४३१

[ कान्हरो ]

बलि बलि बलि लाल की बानिक पर त्रिभुवन मन मोहन ।  
 हरकनि नव रंग पाग लाल सिर अलक बीच बीच बकुल—  
 अस्त बक सोहत ॥

हसत लालन मुख कुसुम भरत मानो अमृत बचन मोतिन से पोहत ।

'गोविंद' प्रभु कौ<sup>३</sup>जु भुव<sup>४</sup> विलास रस देखि कोटि मदन—

तगटगी लागी जोहत ॥

४३२

[ कान्हरो ]

\*मो पे आजु की बानिक लालन कही न जाह ।

रही धसि पाग लाल आधे सिर कुलह सुरंग ता पर हीरालटकाइ ॥

वरुनी पीत पहरे छूटे बंध अरगजा मोजे तन प्रतिबिंबित—

स्याम झाई ।

दरसनीय बनमाल तिलक देखि विथकित कोटि मदन—

'गोविंद' बलि बलि जाई ॥

△ 'मनमोहिनी अंग' . 'ऐसा भी प्रारभ है । १. सिधिल ( क )

२ लाल की या बानिक ( क ) ३ के जु ( ख ) ४. श्रीभुव विलास देखि ( क )

\* "आजु की बानिक ऐसा भी प्रारभ है

४३३

[ कान्हरो ]

मोहन लाल की बलि जाऊँ ।

सुंदर स्याम रसीली मूरति उरोजन बीच बसाऊँ ॥  
 भृकुटी विकट कमल दल लोचन छवि निरखत न अघाऊँ ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधरन विमल जसु प्रेम कंध धरि लाऊँ ॥

४३४

[ ईमन ]

सखी आजु मोहन अति वनें ।

सीस टिपारो फरहरात वरुहा चंद्र अलक बीच चंपकली अति गनें ॥  
 लाल काछ कटि छुद्रघंटिका नूपुर रुनभुनात गति लेत—

ग्र ग्र ता ग्र ग्र ता त त तरग सनें ।

'गोविंद' प्रभु रस<sup>१</sup> भरे नृत्य<sup>२</sup> करत सकल कला गुन प्रवीन—  
 ब्रजनृपति निपुनें ॥

४३५

[ केदारो ]

\* सुंदर मय अंग अंग रूप रास राई ।

ग्रथित कुसुम अलकावलि धुनत मधुप अवतंसनि लटकत—

सिर लाल पाग सोभा कछु कही न जाई ॥

सुमग कर्मभी वरुनी विधुरित पीत वंद विविध मोजे—

प्रतिविवित स्याम सुमग भाई ।

'गोविंद' बलि धानिक पर त्रिभुवन मन मोह्यो—

कोटि काम तारो री नख<sup>३</sup> चरन जुन्हाई ॥

१. रस रग भेट ( क ) = निर्तन ( ग )

२. "अंग अंग रूप रास भाई री . पेना भी प्राग्भ है ।

३. मिस्र किरन जुन्हाई ( क )



४३६

[ केदारो ]

\* सखी नंदनंदन आजु अति विराजे ।

मुकुटसिर दीपन मनि लाल हीरा खचित जगमगत जोति—

ससि कोटि सम छाजे ॥

छुरित गोरज अलक ग्रथित कुसुम<sup>१</sup> स्तवक तिलक मृग मद —

ललित भाल राजे ।

भ्रुव चय हित सखी विशिख श्रवलोकनी देखि—

मनमथ कोटि कल्प आजे ॥

दसन चमकत अधररंग राजत अरुन कंठ कौस्तुभ —

लसत बनमाल आजे<sup>२</sup> ।

स्रवन कुंडल उरसि हार विभ्राजत सखी कुनित ककण—

रुनित किकिनी साजे ॥

तरुन घनस्याम सकुमार तन पीतपट अधर कर—

मुरलिका मंद गाजे ।

बाम दच्छिन मधुप जूथ स्रुति देत सखी 'गोविंद' प्रभु—

सुंदर मुख कमल मधु काजे ॥

४३७

[ सकराभरन ]

केसरि तिलक ललन सिर राजे ।

कपोल भूलक पर मनमथ कोटि वारो स्रवन खचित कनक फूल बिराजे ॥

कुटिल अलक छवि मनहुँ सुभग अलि कमल बसन पर रहे लुभाई—

मत्त मधु काजे ।

'गोविंद' प्रभु की बलि बलि बानक पर मोतिन माल कंठ—

कौस्तुभ मनि आजे ॥

△ "नंदनंदन आजु" "ऐसा भी प्रारंभ है ।

१ कुसुमन छवि तिलक ( क ) २ बिराजे ( क )

[ विहागरो ]

△ कहा री<sup>१</sup> कहां मोहन मुख सोभा ।

वदन इंदु लोचन चकोर मरे पीवत किरन रूप रस लोभा ॥  
अंग अंग उल्लसित रूप छटा<sup>२</sup> कोटिमदन उपजत तन गोभा ।  
'गोविंद' प्रभु देखें<sup>३</sup> बिवस भई प्यारी चपल कटाच्छ लाग्यो चोभा ॥

४२६

[ संकरामरत्न ]

वदन कमल ऊपर बैठे री मानों जुगल खंजरी ।

ता ऊपर मानो मोन चपल अरु ता पर अलकावलि गुंजरी ॥  
और ऐसी छवि लागे री<sup>४</sup> मानो उदित रवि निकट फूली—  
किरनि कदंब मंजरी ।

'गोविंद' बलि बलि सोभा कहां लौं वरनों सु मदन कोटि—

दल गंजरी ॥

४४०

[ विहागरो ]

मोहन मुखारविंद पर मनमथ कोटिक वारों री माई ।

जहीं जहीं अंगन दृष्टि परति हैं तहीं तहीं रहत लुमाई ॥  
अलक तिलक कुंडल कपोल छवि एके रसना मोपे वरनी न जाई ।  
'गोविंद' प्रभु की वानिक ऊपर बलि बलि रसिक चूडामनि राई ॥

४४१

[ ईमन ]

लालन मुख की लुनाई कैसेंउ वरनी न जाई ।

भाल तिलक कुटिल अलक बीच बीच चंपकली अरुभाई ॥  
अरुन नैन मदमाते तरुन वरसें किरन अघर अमृत मंद हास—  
की जुन्हाई ।

सुभग कपोल मृदु बोल 'गोविंद' प्रभु के जु अंग अंग—

सुंदर मनिराई ॥

\* " मोहन मुख सोभा कहा कहां री....ऐसा भी प्रारंभ है

१. कहा कहीं (ग) २. छटा में कोटि मदन उपजी तन (क) ३. देखि (क ग)

४. लागत (क)

४४२

[ ईमन ]

ए नैना लडिक्यात से ।

आलस अरुन आत ही रगमगे आनि मुसक्यात से ॥

कछु जु निरुपम रूप पान कियो<sup>२</sup> मेरे जान अकुलात<sup>३</sup> से ।‘गोविंद’ बलि सखी कहें मेरी दृष्टि जिनि<sup>४</sup> लगे लागे—धूँघट में देखियतु जम्हात<sup>५</sup> से ॥

४४२

[ कान्हरो ]

कहा री कइँ नैननि की सोभा ।

खंजन मीन बारि ले डारो निरखि निरखि मेरो मन लोभा ॥

कजरारे अनियारे चित लागि मोहि लई मृग चित लगचोभा ।

‘गोविंद’ प्रभु देखे सुख उपजत मोहि रहे मृग चित लागि चोभा ॥

४४४

[ कान्हरो ]

बने हैं आली सुभग विसाल लोचन ।

धूमत अरुन तरुन मदमाते देखियत मानिनी मान मोचन ॥

गोलक छवि मानो अरुन कमल में जुगल अलि परे संकोचन ।

‘गोविंद’ प्रभु कौ जु सुभग ललाट सोहें मोहन विस्व श्री तिलक-

गोरोचन ॥

४५५

[ कान्हरो ]

\* नैन छबीले तरुन मद माते ।

चंचल चपल अकुटि छवि उपजत अनि अनि अनि मुसिकाते ॥

भक्त कृपा रस सदाई प्रफुलित मानो कमल दल राते ।

‘गोविंद’ प्रभु कौ श्रीमुख निरखत पान करत न अघाते ॥

१ अनि अनि मुसक्यात ( क ) २ किये ( क ) ३. अलसात से ( क )

४, न लागे ( क ) ५ नचात से ( क )

❀ “छबीले तरुन ...ऐसा भी प्रारंभ है ।

४४६

[ कान्हरी ]

+ सोहत नासिका गिरिधर गज मोती ।  
 बोलत वीरा खात हँसत डोलें अरुन अधर की दीनी पोती ॥  
 कुंठल लोल कपोल विराजत जगमगात मुख मंडल जोती ।  
 'गोविंद' प्रभु देखत सुख उपज्यो रसना कहा कहि सकेवोती ॥

४४७

[ ईमन ]

कनक कुसुम अति सोहत स्रवननि ।  
 घूमत अरुन तरुन मद माते मुसिकाते अनियनि ॥  
 गोल पाग पर कुलह सुरंग तामें अलकरंख गवनि ।  
 'गोविंद' प्रभु त्रैलोक विमोहत कंठ कौस्तुभमनि ॥

४४८

[ केदारो ]

१ कनक कुंडल भाई—स्याम कपोलन में ।  
 कुंचित कच बीच बीच चंपकली अरुभाई ॥  
 विस्व मोहन तिलक देखत मनमथ रह्यो लुभाई ।  
 'गोविंद' प्रभु सुंदर वानिक परवोटि चंद्र वारो नख किरनजुन्हाई

४४९

[ ईमन ]

वनी मोहन सिर पाग ।  
 कुलह सुरग कुसुमनि भरी और सेंहरो चंपक छवि लाग ॥  
 सूथन लाल पीत वरुनी और अरगजा मोजे सोभा स्याममुभाग ।  
 'गोविंद' प्रभु कौ व्रजवामीन प्रति छिनु छिनु नव अतुराग ॥

+ "सोहे नामिका ऐसा भी प्रारभ है ।

१. कठ लमति कौस्तुभमनि ( क )

†स्याम कपोलन में कनक" ऐसा भी प्रारभ है ।

१५०

[ कान्हरो ]

राखी हो अलक बीच चंपक कली गनि गनी ।

जगमगात हीरा लाल कुलह पर पाग अति बनी ॥

सुभग, तरुन मद माते सुमिक्खाते अनि अनी ।

‘गोविंद’ प्रभु ब्रजराजकुंवर वर धनि धनि हो धनि धनी ॥

४५१

[ केदारो ]

\* तेरी हौं बलि बलि जाऊँ गिरिधरन छवीले ।

कुन्हे छवीली पाग छवीली अलक छवीली तिलक छवीली—

नेन छवीले प्यारी जू के रंग रंगीले ॥

अधर छवीले दसन छवीले वेंन छवीले हो अति सास सुठीले ।

‘गोविंद’ प्रभु नख सिख अंग अंग प्रति ललन रसीले ॥

४५२

[ ईमन ]

लाडिले लाल की बंदसि । कहि न परे हो—

कुलह चंपक भरी अति सुंदर<sup>३</sup> और लटपटी पाग रही आधेसिर धसि

वरुनी पीत पहरें छूटे बंद अरगजा मोजें सोभा स्याम उरसि ।

‘गोविंद’ प्रभु सुरति सिथिल दंपति प्रेम गलित बैठे<sup>३</sup>—

कुंजमहल तें निकसि ॥

४५३

[ केदारो ]

+अन कहा करों मेरी आली री मेरी अखियन लागे ई रहत ।

निसुदिन फिरत रूप रस माती आवे नहीं गृह काज करत ॥

जदपि मात पिता पति सुत<sup>३</sup> देखत तो हू न धीरज धरों मोहन—

वेंन सुनत ।

‘गोविंद’ प्रभुकों हौं जोलों न देखों आली तोलों छिन छिन—

कैसे मेरे प्रान रहत ॥

१ घूमत अरुन तरुन ( ग )

\* ‘ तुम्हारी हौं ’ ‘ गिरिधरन छवीले ’ ” ऐसे भी प्रारंभ है ।

२ अंग लालन रस के रसीले ( क ) ३ सुरंग ( क )

+ “मेरी अखिनि ही हो ” “अखियनि ही हो लागे” “ऐसे भी प्रारंभ है ।

३ हितु ( क )

४५४

[ नायकी ]

नेना हीठ भए । मदन गोपाल मिले—  
 वरजि वरजि हों रहीरी हारि मन तोउ न संद गए ॥  
 अब हों कहा करों मेरी सजनी गिरिधर छीन लए ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय सोंजु कहा कहों नित ए ठाठ ठए ॥

४५५

[ नायकी ]

नेना वरजो न मानें ।  
 घूँघट पट गढ तोरि निकसे पिया प्रेम अरुभानें ।  
 कहा री कहां गुरुजन भए वैरी वैरु किये सोंसों रहत रिसाने ।  
 'गोविंद' प्रभु विनु कयों जीवे गिरिधर, मुख विधु पानें ॥

४५६

[ नायकी ]

स्याम रूप चरि चरि आई जब तें हरिहोई अँ खियो भई री मरी ।  
 गुरुजन लाज सकुच केरी बंधन बहु भौंति जतन करि जेरी ॥  
 ए री गई तुराइ अगाध अगम कीनेकु न कहूँ अब इत उत हेरी ।  
 वीथी प्रेम मुदित हरि 'गोविंद' घूँघट ग्वाल्लि घिरत नहिं वेरी ॥

४५७

[ केदारो ]

\* देखत रूप ठगोरी लागी । नैन रहे अरुभाई—  
 टगटगी लागी ललन मुख निरखत नागरी अति अनुरागी ॥  
 विथकित भई मारग में मुधि न गात कुल पति भय भागी ।  
 'गोविंद' प्रभु दंपति रस मूरति प्रेम रस पागी ॥

४५८

[ संकराभरत ]

विधावा विधि न जानी ।

सुंदर वदन पान करन को रोम रोम प्रति नैन दिए कयों न करी—  
 इह बात अदानी ॥

स्रवन सकल वपु जो होते री सुनती पिय मुख अमृत बानी ।  
ए री मेरे भुजा होती री कोटि कोटि तो हौं भेंटति—

‘गोविंद’ प्रभु कों तो हू न तपति बुझाइ सयानी ॥

४५६

[ केंदारी ]

मोहन मोहनी मो पर घाली ।

छिन छिन पल पल जुग भर बिनु देखें मोहि स्यामसुंदर—

कहा करों मेरी आली ।

सुनति न सुनति देखत हू न देखति कछू की कछू कहति—

फिरति चलि चली ।

एते पर प्रान<sup>१</sup> तजिहों मेरी आली बिनु मिले री ‘गोविंद’ प्रभु—

यह बातन भली ॥

४६०

[ संकराभरन ]

मेशे मन मोहयो री इन नागर ।

कैसे कें घोरजु धरों सुनि मेरी आली बिनु देखें न रह्यो परे रूप सागर ।

चितवनि चलनि हसनि चित चोरति कोक कुलागुन कौ है आगर ।

‘गोविंद’ प्रभु श्रीमदनमोहन पिय की जू प्रीति उजागर ॥

४६१

[ ईमन ]

आजु बनी अति सारंग नेनी ।

मदनमोहन पिय रचि पचि कर गूथि बनाई बेनी ॥

मृदु मद तिलक लिखत भाल सकल कलागुननिधान रूप की एनी ।

‘गोविंद’ प्रभु रस बस कीने सोहाग तें मदनमोहन सुख देनी<sup>२</sup> ॥

१. मान निहोरो आली ( क )

२. रेनी ( क )

४६२

[ केदारो ]

आज तेरी फरी अधिक छवि नागरी ।

संग मोतिनि छटा वदन पर कुच लता नीलपट घन घटा रूप गुन आगरी ॥  
कवरी लजित फन नैन काजर अनी फल कुमकुम बनी परम सोभागरी ॥  
नासिका सुक चंचल अधर द्वै विव पर दसन दाडिम कली—

चिबुक पर डागरी ॥

कमनीय जटित किंकिनी अति रुनत पोत मुक्ता दाम कुच लाग री ।  
चलय कंकन चूडी मुद्रिका अति रुडी वेसरी लट करही कामरस राग री ॥  
चरन नूपुर वज्रत नख सिख चक्र चंद्रमा मदमुसक्यान बढ्योहैजु सुहागरी  
'गोविंद' प्रभु सु मिलो क्यों न भामिनी ॥

४६३

-[ कान्हरो ]

\* आवति माई राधिका प्यारी । जुवती जूथ में बनी ।

निकसि सकल ब्रजराज भवन तें सिंधद्वार १ ठाढे ललन कुंवर गिरिधारी ॥  
निरखि बदन भौह मोरि तोरि २ नृन औरे चालि औरे चितवनि—

तिहिछिनु अचरा ३ सँभारी

बूँधटकी ओटन्है लियो है लाल मनुहारी—

'गोविंद' प्रभु दंपति रस मूरति दृष्टि सों भरत अंक धारी ॥

४६४

[ ईमन ]

तेरे सुहाण की महिमा सो पे बरनी न जाई ।

मदनमोहन पिय बे बहु नाइक ताकाँ ४ मन लियो है रिभाई ॥  
कवरी कुसुम गुहत अपने कर लिखत तिलक माल रसभरे रसिकराई ।  
'गोविंद' प्रभु रीझि हूदें सों लगाइ लई लाडिले कुंवर मन भाई ॥

ॐ "जुवती जूथ में बनी आवति" ...ऐसा भी प्रारंभ है ।

१ पौरि (क) २ नृन तोरत (क) ३ अचरा (ख) ४. जाकाँ (क,ख)



४६५

[ ईमन ]

अति रसमाते री तेरे नैन ।

दौरि दौरि जात निकट स्रवननि के हँसि मिलवत करि कटाच्छ-

कहत रजनी रति वैन ॥

लटपटी चाल अटपटी बंदसि सगवगी अलक बदन पर विथुरी-

अंग अंग प्रफुलित मेंन ।

‘गोविंद’ बलि सखी कहै मैं तो तब ही लखी मेरे जिय—

तब ही तें अति सुख चैन ॥

४६६

[ ईमन ]

सरन नयन तेरे री सनमुख आइ मैं हेरे ।

हितवनि चितवनि घूँघट की ओट में ज्यों वारि घन घेरे ॥

नैन भरि काजर सो दै तमोल मुख सकल सिंगार जु पहिरे ।

‘गोविंद’ प्रभु रक्ष बस करि लीने कैसें करिहें कर जोरे ॥

४६७

[ कान्हरो ]

तेरे रूप री अनूप बन्यो स्यामसुंदर देखि पाछें लागे डोले ।

कंचन सो गौर गात अंग अंग छवि नाहिं समात सोमा सदन—

रोम रोम उठत प्रेम हिलोले ॥

नीलांबर सारी भारी सुखकारी है सँवारी अचरा में अनियारे—

नैन करत अलोले ।

‘गोविंद’ प्रभु गिरिधारी राधा प्यारी तें रिभाइ लीनें विभोलें ॥

४६८

[ केदारो ]

कहा कहि बरनों री तेरे बदन की जोति ।

स्रमजल कन इमि बिराजत री मानों पूरन सखि खचित मोति ॥

स्वैत पीत ता में अरुनाई दीनी री मानो सुहाग की पोति ।

‘गोविंद’ बलि सखी कहैं तुव पटतर कों नाहिन त्रिलोक जुवती—

सीव न करि सकै तो सों दोति ।

४६६

[ केदारो ]

तेरो मुख प्यारी जैसो सरद ससी ।

दसन ज्योतिजुन्हाई वचन सीतलताई अमृतहाससुहाई बोलतनेनमसी  
कस्तूरी तिलक भाल रति लंक छवि नछत्र भालमनि मंगलमी ।  
'गोविंद' प्रभु नंदसुवन चक्रोर वर पान करत वर मनमथ तापनसी ॥

४७०

[ केदारो ]

\* घूँघट में मोहन मुख जोवे ।

चंद वदनी<sup>१</sup> मृगलोचनी राधे मानों मोतिन की लर पोवे ॥  
आधो वदन दुगाड छबीली गिरिधर कौ मन मोहै ।  
ज्यों ससि विष बादर ते निकस्यो छिनु ढाप्या घन सोहै ॥  
निरखि गोपाल थकित भए ठाढे यह चतुर अति को है ।  
'गोविंद' प्रभु दोहिनी धूँले भौं मटकी कर दोहे ॥

४७१

[ कान्हरो ]

प्यारी री वदन कमल तेरो यातें धरें ई रहत हों कमल कर ।  
वरुहा चंद देखि कछु अनुसरत याही ते धरेंई रहत साथे पर ॥  
दसन जोति<sup>२</sup> अनुसरत या ही तें धरत कंठ मोतिन लर ।  
कंचन वरन तेरो या ही ते धरे रहत पीतांबर ॥  
तव स्वर कंठ मिलत कछु या ही तें धरत वंसी अधर ।  
'गोविंद'बलि डमि कहत प्यारी सो इनि वातनि<sup>३</sup> नेऊ रह्यो—  
जात वीतत वासर ॥

४७२

[ कान्हरो ]

△ तें कछु घाली री ललन सिर मोहनी ।

दुहत धेनु पिय रतिनायक सुंदर कर खचित कनक जटित दोहनी ॥  
तेरे सुहाग कौ प्रताप न रूख्यो परे मदनमोहन बस किए भटक मोहनी ।  
चितवनि हँमनि चलनि छवि तेरी गुन वस तेरे 'गोविंद' प्रभु हृदौपोहनी ॥

\* "मोहन कौ घूँघट में मुख जोवे" . ऐसा भी प्रारम है ।

१ प्रांगन ठाडी कुँवरि राधिका मोतिन २ अनुसार (स ग) ३ वातनि तें घनुमर (क) △ "मोहन सिर मोहनी तें कछु ..ऐसा भी प्रारम है ।

४७३

[ कान्हरो ]

मोहे नंदलाल ठगोरी लाई ।

सॉभ समें हौं गई खरिक् में नेंननि बान चलाई ॥  
 गोदोहन मिस आनि रहे हरि हौं जु अचानक नियरे आई ।  
 बाँह पकरि आलिंगन कीनो तब हौं अधिक रिसाई ॥  
 तन मन प्रान आकर्षन कीनो अब कैसें करहों री माई ।  
 या छबि पर वारों री सर्वसु 'गोविंद' बलि बलि जाई ॥

मान्—

४७४

[ केदारो ]

आजु बनी री कुंजुस्वरि रानी ।

चारु चिकुर सिथिल सगवगां विविध कुसुम बेंनी बानी ॥  
 नेंन सुरंग गिरिधर रसमाते कमल खंजन सोभा बिलखानी ।  
 'गोविंद' प्रभु कौ तू न्याइन बस करति<sup>३</sup> धनि धनि री—  
 विधना<sup>४</sup> आपुन चतुराई सकल तोमें आनी ॥

४७५

[ कान्हरो ]

आ बनी ब्रषभानुकुंवरि कहे दूती अंचल वारति—  
 तृन तोरति कहति भलें जु भलें भले मामा ।  
 बदन जोति कंठ पोति छोटी छोटी लर मोतिन की सदा<sup>१</sup>—  
 सिंगार हार कुच बिच अति सोमित हैं<sup>२</sup> मौलसरी दामा ॥  
 एक रसना गुन रूप कैसें कै बरनों विसद कीरति अंग अंग—  
 अति प्रवीन पिय मन अभिरामा ।  
 'गोविंद' बलि सखी कहै रचि पचि धिरंचि कीने<sup>३</sup>—  
 स्याम रमन कौ माई तुही है स्यामा ॥

४७६

[ केदारो ]

बोलत चलि ब्रजराजकुँवर बैठे पिय नव निकुंज घन ।  
रसिक राइ मनमोहनलाल<sup>१</sup> प्रति तजि मान मिलि—

बेगि कुसुम सुकुमार तन ॥

जमना जल तरंग मुन सजनी शी सीतल सुगंध मंद बहत पवन ।  
विविध कुसुम मकरंद पान करि गुंजत मत्त मधुप गन ।  
निविड़ कोकिला कल रव तैसोई उदित उडुराजु वरसत—  
सरद सुधाकन ।

' गोविद ' प्रभु रिभाइ ले रसिक राइ श्रानंदनंदन ॥

४७७

[ कान्हरो ]

फूतू चलि सखी री सिंगार द्वार<sup>३</sup> सजि सेवत किन पिय प्यारी  
माधुरी माधुरी बोलसरी ए री गुलाब कुल्हे मनुहारी ॥  
इह सुभाव न जाइ वरजी जुही केतिका ले समभाइ मान निवारी ।  
मेरो जो सिखंडी जोन मिले री 'गोविंद' प्रभु तो तो पर केवरो—  
नवल कुँवर बिच चंपो बिहारी ॥

४७८

[ ईमन ]

कुंज के द्वार ठाढे हैं मोहन देखत हैं मारग तेरो री प्यारी—  
चलि बेगि विलस न कीजे ।  
तु ही तन मन धन प्यारी तेरे हित रचि पाँच सेज सँवारी—  
आइ के सब सुख कीजे ॥

१. प्रीत न तज मन मिलि ( क ) २. वर ( क )

फूतू " चलि सखी री " ऐसा भी प्रारम्भ है ।

३. सार्जे सेवत कर्षों न पिय ( क )

तिहारो तिय ग्यान ध्यान तिहारो सुमरन—

तुव नाम जपत हैं छिनु छिनु छीजे ।

‘गोविंद’ प्रभु गिरिधर घोखराजसुत मो तो तिहारो गुन रूप भए—  
सब धाइ अंक भरि लीजे ॥

४७६

[ गौडी ]

उठि चलि मान तजि बावरी ।

रसिक कुँवर तुही तुही जु जपत हैं ना जानों तो सों कहा भावरी ।

पिय बहु नायक तिन सों यह<sup>१</sup> न कीजिए एते पर लालन—  
परिहैं आवरी<sup>२</sup> ।

‘गोविंद’ प्रभु के तू कंठ लागि धोरी मेरो कह्यो सुनि प्यारी—  
राखि बाँधि सुहाग दाँवरी ॥

४८०

[ सकराभरन ]

कौन काज प्यारी तू पिय सों रूसनो ठानति मेरे जान बावरी—  
भई री प्यारी ।

मदनमोहन बेटे तुव आनन को ध्यान धरत नवल कुँवर विहारी ॥  
सीतल मंद बहत पवन गुंजत अलि पिक री सवननि को—  
अति सुखकारी ।

‘गोविंद’ बलि सखी कहें पिय की भाँवरि तो सों कहाँ लागि<sup>३</sup>—  
वरनों रस बस कारे<sup>४</sup> ले गिरिधारी ॥

४८१

[ केदारो ]

कौन काज प्यारी पिय सों रूसनो ठाने ।

हँसत<sup>५</sup> खेलत नीके रंग में कछू जाने बियाता भूठो साँचो—  
कोटि कोटि मन मेरी आने ॥

१. ऐसी न ( क ) २. पाँव रो ( १ ) ३. लों ( क ) ४. करि लीने ( ख )  
करि ले री ( ग ) ५. सहज ( ख )

मत्र गुन रूप सुहाग सुंदरि तुव गिरिधर पिय चोप न जाने ।  
 'गोविंद' बलि बलि सखी कहे जुवतिन सिरमौर तेरो तो सुहाग—  
 सेस जाड<sup>१</sup> न बखाने ॥

४८२

[ केदारो ]

वावरी मई री त्रिय उन सों मनु अरुभावे वे तो सदाई आपुनि रसके ।  
 निरखि परखि देखें जिय कौ भरभु गयो कामिनि बधन कौन मन कमके  
 तदपि कछु मोहिनी 'गोविंद' प्रभु पेहि जुवति सभा में विदित जसके

४८३

[ केदारो ]

\* मान गढ क्यों हू न टूटत । अबला के बल को प्रताप—  
 आपुन होवा चढि गिरिधर पिय अबला तू चिला चाप मुकुट कटाच्छ—  
 मान घूँघट दरवाजो नहि खूटत ॥

विविध प्रनति हाथना चोल गोला उचाटि परत काम क्रोधहूँ नखूटत  
 'गोविंद' प्रभु साम दाम दंड भेद कटक ले घेर पारयो चहुँदिस—  
 उत रुखाई जल क्यों हूँ न खूटत ॥

४८४

[ नायकी ]

△ प्यारी रूसनो निवारि ।

कब की ठाडी मनुहारि करति हों रेंनि गई घरी चारि ॥  
 मेरो कहां तू मानि री सुहागिन अति प्रबनीन सकुँवारि ।  
 'गोविंद' प्रभु सों तू हिलिमिलि भौमिनितन मन जोवन चारि ॥

४८५

[ ईसन ]

मानिनी माँनि मेरो कह्यो । गोपीनाथ कुँवर तोहि चोले—  
 हों जु ललन सों पेंजु करि आई सो ते जु करी नैननि नहियाँ—  
 तातें सो में कछु न रह्यो ॥

१. वात (क)

क'ए री मान'... 'अबला के बलकों प्रताप मान गढ'... 'पेसे भी प्रारंभ हैं ।

२. हास लाल गोला चोले जु (क) ३. गोल (ख) ४. नहि फूटत (क) ६. सूखत (ग)

५. करि घेरा परयो चहुँ दिस पचित त्खाई जल क्यों नहि खूटत (क)

△ 'रूसनो निवारि'... 'पेसा भी प्रारंभ है,

घोखनृपतिसुत बहु बल्लभ<sup>१</sup> कौं कौन सुकृत फल तेजु रह्यो ।  
 'गोविंद' प्रभु तें सुहाग बस कीने तू परम विचित्र रस—  
 छिनु छिनु जात वह्यो ॥

४८६

[ केदारो ]

❁ मान<sup>२</sup>न कीजे री पिय सौं बावरी ।

वे ही काज कौं तू गिरिधर मान पारत री कित आप री ॥  
 तुव हित कारन ब्रजनृपति कुँवर कव के बैठे हैं संकेत गाँव री ।  
 'गोविंद' प्रभु सुंदर कर गूँथत कुसुम दाँवरी ॥

४८७

[ ईमन ]

रसिक कुँवरि बलि जाऊँ कह्यो जु मानो मेरो ।

पेँडे तें<sup>४</sup> नेकु इत उसरो जू कौन टेव तुम्हारी<sup>३</sup> हो वारि डारी—  
 कहाँ तें भयो भटु मेरो ॥

जिहि डर दूरि दूरि फिरत सकल ब्रज सोई मोको आनि भयो—  
 घरी घरी पलु पलु भेरो ।

'गोविंद' प्रभु सौं भौह मोरि तृन तोरि कहत प्यारी कौन सुभाव—  
 तुम केरो ॥

४८८

[ कान्हरो ]

सुनु री स्यामा चतुर सयानी ।

गिरिधर पिय तव विरह विकल भए कौन बात तें ठानी ॥  
 राधे राधे जपत कुंजनि में करति बात एक छानी ।  
 ऐसो समय फेरि नहिं पावे कहति हों तेरी बानी ॥

१ बल्लभ ए री कौन ( ख ग )

\* "बावरी मान" .. "आठरी मान" .. "मानि री मान" \* ऐसो भी प्रारभ है.

२ मानि बावरी मान न(ख ग) ३. बैठे हैं (क) ४. पेँडे ते नेकु इत उत रोको(क)

५ वारों कहाँ तें भयो भट ( क )

रसिक राइ वे त्रिभुवननाइक मिलिहों जाइ आनी ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय पे जु चली उठि कीनी जो मनमानी ॥

४८६

[ कान्हरो ]

हरि सों कैसी मान छवीली ।

नंदकुंवार रसीलो नाइक छॉडि देहु अरदीली ॥  
 इह जीवन धन दिवस चारि कौ काहे कौ वृथा करत हो नवीली ।  
 मिलि हो जाइ संकेत सदन में स्याम सिंधु में भीली ॥  
 उह ब्रजराजकिसोर रसीलो तू वृपभानुकिसोरि रसीली ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय आइ गए तव सरबसु दे विलसी री ॥

४६०

[ कल्याण ]

\* मान तजि बौरी । ए री नंदलाल सों—

चै बहुनाइक एते पे राजकुमार मेरो कहयो सुनि प्यारी लावे—  
 जिनि श्रीरी ॥

किसलय दल कुसुमन की सज्या रची तुव 'मग चितवत दौरि दौरि ।  
 'गोविंद' प्रभु सों तू यों राजेगी ज्यों दामिनि धन सों री ॥

४६१

[ कल्याण ]

ऐसी वर नारी को ऽव त्रिभुवन माँहि देखत सुनत जाके न हूँ दुलेरी ।  
 मदनमोहन पिय चेलि चाप तें मुकुट छवि वान पातिव्रत—

कवचु फूटि मरम छिदे री ॥

सुनत वेनु मोती देव बधू महपति मोहन तान उनके जिय भरिदेरी ।  
 'गोविंद' बलि उनहँ की ऽव कहा चली खग मृग द्रुम पसु—

सरिता मन खिंदे री ॥

\* "नंदलाल सों मान"...ऐसा भी मारंभ है ।

१. पय चाहत दौरि ( ख. ग )



४६२

[ ईमन ]

तू मनायो मानि<sup>१</sup> भामिनी । मान रो—

वातन कि भेरु करत है री लालन कब के बैठे घटत—

पल पल जामिनी ॥

जदपि सकल ब्रजमुंदरी री कौन काज तो बिन है री कामिनी ।

‘गोविंद’ बलि बलि पाउँ धारिए पिय सनमुख गजगामिनी ॥

४६३

[ ईमन ]

\*कब की हौं निहोरो करति ही वृषमानसुता तासो<sup>२</sup> कह्यो जु—

मानि मेरो ।

मदनमोहन पिय नव<sup>३</sup> निकुंज द्वार बैठे<sup>४</sup> पंथ निहारत तेरो ॥तेरे गी भगरें रेंनि वीतति अजहूँ कित करति है<sup>५</sup> री छिनु छिनु—

पल भेरो ।

सिंगारहार साजि ले अपने प्रान पिय सुख दे तेरे री जिय आली—

अजहूँ कछु फेरो ।

तोहि नाहिने प्रेम पीर तू कहा जाने<sup>६</sup> आँ की ‘गोविंद’ प्रभु—

हृदे कै मेटि विरह अंधेरो ॥

४६४

[ नायकी ]

हौ तोसो<sup>७</sup> कहा कहां आली री कौन बेरकी बेलावति ही मोहि ।नवल नागर नवल<sup>८</sup> कुंज कब के निसि जागत हैं प्रीति की तो—

रही इतनी सकुच नाहिंन तोहि ॥

१. “मनायो न मानी (ख) मानि भामिनी प्यारो (क) ”

\* “कह्यो जु मानि मेरो कबकी हौं” ...पेसा भी प्रारभ है ।

२. तो सौं (क. ख) ३. निकुंज (ग) ४. तुव मग जोयत तेरे री (क. ग)

५. री घरी घरी छिनु पल (ख ग) ६. नव निकुंज (क ख)

अव<sup>१</sup> कहा आयसु होत है अव मीकों जु तुमें<sup>२</sup> तो सुहाग के—  
 भर<sup>३</sup> आवे<sup>४</sup> सच सोहि ।

मोहि कहा तेरो ई प्रान प्रीतम सुख पावे सोई करो—  
 'गोविंद' प्रभु आपने कंठ राखि री तू पोहि ॥

४६५

[ विहागरो ]

आवत जात हौं हारि परी री ।

ज्यो ज्यो प्यारो विनती करि पठवत त्या त्यों तू गढ मान चढी री ॥  
 तिहारे बीच परे सो वावरी हौ चौगान की गेद भई री ।

'गोविंद' प्रभु सों मिले क्यों न भामिनी सुखद जामनी—  
 जात वही री ॥

४६६

[ कान्हरो ]

अति ढट्ट न क्रीजे री प्यारी चलि गिरिधारी लालन कुंजविहारी ।  
 प्रनत सुंदर सुकुमार कव के निसि जागत है<sup>५</sup>—

कुलिश समान हृदौ भारी ॥

उनके तो जिय में तू ही बसी प्यारी तेरे तो जिय की कछु—  
 जात न विचारी ।

अव एते पर 'गोविंद' प्रभु पिय सुमुखि मनाइ ले हें मेरी—  
 तो चरन रसना हारी ॥

४६७

[ गौरी ]

आजु ते नीके<sup>६</sup> करि जानी मैं देखी प्यारी अति ढट्ट भारी ।  
 मदनमोहन पिय हौ पठई और बहुत करी मनुहारी ॥

१. कहा आयसु (ख ग) २. तुम तो (ख) ३. वस ४ हैं री कुसुम मान  
 हृदौ भारी ( ख ) ५. सखी री तेरे जिय की मोये जात ( क )

तुव हित सों कर ग्रथित कुसुम चोली विच विच जाई—

जुही चंपक वकुल निवारी ।

‘गोविंद’ प्रभु सुहाग वस कीने री उठि चलि वेगि मिलि—

कुंज बिहारी ॥

४६८

[ विहागरो ]

\*अरी मेरी आली री लालन सुमुखि मनावत मैं मनायो न मान्यो ।

‘हंत हंत विलपति सुंदरपिय मखी वचन पथिक हू न जान्यो ॥

सुंदर कर गूँथि ला री माला सो तो मैं परसो नही पान्यो ।

दंत केस धरि चरन पतित पिय ता ऊपर मैं मान वितान्यो ॥

सुरकि<sup>३</sup>धरनि परी ब्रजसुंदरी पिय के रूप में मान समान्यो ।

‘गोविंद’बलि इमि कहति पियारी तू वेगि मिलाइ गोवर्धन रान्यो ॥

४६९

[ केदारो ]

अस्त भयो री चंद्रमा अजहुं न घटयो तेरो मान ।

उडुगन लगन लगे घुघरन तें घड़ी एक बहे विद्वान ॥

तरुरानी भोंह किये कल्लुक वह सिथिल होत मानो चढी—

रस की कमान ।

‘गोविंद’ प्रभु पिय मिलवे कों करै है मान गुमान ॥

५००

[ केदारो ]

अजहुं रेंन तीन जाम है । काहे कों अटवरात स्पामजू—

हो तो बाकी प्रकृति लिए ही रहत हों प्यारी तिहारी अति बाम हैं ॥

अब ही लिए आवति हों पेंज कि ए सुनहु म्याम मोहि तो—

तुम्हारे सुख ही सों काम है ।

‘गोविंद’ प्रभु अब तिहारी तुम ही जानो वहुरि रूठे तो—

हमारी राम राम है ॥

१ “आली मेरी आलीरी” .. “लालन सुमुखि मनावे” .. “मैं मनायो न मानें ..”  
ऐसा भी प्रारंभ है ।

१ तुव हित इत विलसित सुंदर ( क ) २ लाई री ( क ) ३ सुरकि ( क )

५०१

[ ईमन ]

सेत अँगिया तामें कीनी तिलवारी देखनि को आपु बनाई ।  
छोटे ह कुचनि पर तन इक स्यामताई मानों गुलाब फूलि रहे—  
अलि छौना भर लाई ॥

पहिरें सुरंग मारी अंग अंग की निझाई आनन पर—

अलक भलक दगन चंचलताई ।

लीजिये मनाइ रिभाइ 'गोविंद' प्रभु उला आए—

वादर तामें बीजुरी लडलहाई ॥

५०२

[ ईमन ]

बोहोत रही समुभाई मनायो मानत नाँहि गोपाल ।

आपुन ही चलिये<sup>१</sup> प्यारे प्रीतम मोहन गज गति चाल ॥

प्रीति की रीति रँगिलो ई जाने मनमोहन गिरिधरनलाल ।

'गोविंद' प्रभु हँसि वचन कहत हैं हठ छोडो ब्रजवाल ॥

५०३

[ ईमन ]

कहति कहति सब रेंनि गई<sup>१</sup> री नहीं मानति पिय प्यारी हो ।

समुभाये समुभति नहीं और खरीए<sup>२</sup> निठुर देखो भारी हो ॥

छल बल बुद्धि के<sup>३</sup> तो कीनों मेरी<sup>४</sup> तो चरन रसना हारी हो ।

अब<sup>५</sup> नाहिंन उपाय<sup>६</sup> कछू आपुन चलिये 'गोविंद' प्रभु जु—

विहारी हो ॥

५०४

[ कान्हरो ]

मनायो न माने राधा प्यारी ।

छूटे केस कर पर मुख दामें सोई जपत है लाल विहारी ॥

बिनती करत अनख हो मानत देत बदन पर गारी ।

'गोविंद' प्रभु पिय चलिये आप उठि देखों जियमें विचारी ॥

१. गई री प्रीति (क) २. खरी अति (ख) ३. इतनो में कीनो (क) ४. मेरे (ग)  
५. नहीं (घ ग) ६. सखी कछु (घ)

५०५

[ कान्हरो ]

मानि मानि री मोहन आपु मनावन आए ।

जो है लता त्रिभुवन को टीको सो तें प्रान जीवन करि पाए ॥

तब सखानि छॉडि री समझी बहुतें भावन पाए ।

‘गोविंद’ प्रभु पिय चली संग उठि गिरिधर पिय को रिभाए ॥

५०६

[ कान्हरो ]

प्यारी री लालन आए तिहारे<sup>१</sup> नैननि करी मनुहारी ।

मोहन करसों जब घूँघट दूरि कीनी घन में ते चद दरस दीनी—

रिस भरे एते नैन कुसुम गुलाब से पूतरी मधुप अनुहारि ॥

बहियाँ गहि सँभरे राई नार्हीं कही हियको हुलास मुसिकाइरही—

तब रोम पुलक मुख स्वेद फन वारि ।

गिरिधरलाल पिय हूँदै सों लगाइ लीनी घन में दामिनी मिलि—

सब सुख दीनी ‘गोविंद’ बलि बलि हारि ॥

५०७

[ नाइकी ]

\*लालन मनाके न मानति लाडिली प्यारी तिहारी<sup>१</sup> अति<sup>२</sup> कोप भरी ।

तिहारी<sup>३</sup> सों अनेक जतन छलवल करि मैं किए मान तो—

अब घटत नाहिंन त्यों त्यों अति सतर होत है खरी ॥

साम दाम दंड भेद एकौ नही चित चुभित तापर हों पाँइन परी—

दंत वृन धरी ।

नाहिनें कछु और उपाइ आनि बन्यो यह दाव—

‘गोविंद’ प्रभु आपुन चलिये<sup>१</sup> तुमें देखत ही बाकौ मन छुटिजेहे तिहिखरी

\* ‘प्यारे लालन ...’ ऐसा भी प्रारंभ है ।

१ तुम्हारी ( क ) २. अहो अति ( ग ) अति सी ( क ) ३ तुम्हारी ( क )

५०८

[ कान्हरो ]

प्यारी कौं मान सनावन आए ।

नवसत साजि भिंगार किये तन सहचरि भेष बनाए ॥  
 कर बीना मुख तान मधुर सुर विविध भाँति लै लै गाये ।  
 कहि री मखी कहॉ ते तू आई कहि ए प्राननाथ तें पाए ॥  
 सुनि म्यामा बैठे कुंजन में सो मन तो ए अरुभाए ।  
 सुनियत वचन वदन जब निररुगो तब मोहन सिर नाए ॥  
 व्है जु भई उगी सी ठाढी मनसिज वान चलाए ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय कौं जु उठि मिलिसरवसु दे जु रिभाए ॥

५०९

[ केदारो ]

प्रेयसी सनावत कुंजविहारी ।

वृथा मौन कित करति न मित मुख नेंकु चित्त इत प्यारी ॥  
 तुव मुख<sup>१</sup> चंद चकोर नैन मेरे प्याइ सुधा बलिहारी ।  
 रह्यो<sup>२</sup> हृदौ मम छाड़ विरह तम नेंकु<sup>३</sup> बोलि जैसे होई चंद्र—  
 चद्रिका उजियारी ॥  
 जो अति प्रकट करो भुज बंधन नख सों हृदौ विदारी ।  
 'गोविंद' प्रभु के प्रेम वचन सुनि छाँडि मान हृदे लागि<sup>४</sup>—  
 कुसुम सकुमारी ॥

५१०

[ ईमन ]

मान झूटि गयो री निरखत मोहन वदन ।

नैननि सों नैन मिलत मुमिकांनी गयो हँ विरह दुख कदन ॥  
 सुमग कपोल मृदु बोल लोल कुंडल छवि री अरुपरेश्व सदन ।  
 'गोविंद' प्रभु<sup>५</sup> मुख मोभा ऊपर वारि फेरि डारों—  
 कोटि कोटि मदन ॥

१. नैन चकोर री मेरे (ग) हित नैन चकोर करी मेरे (ख) २. हृदे (क.प)

३. नेंकु तो (ख) ४. कुँवरि (क) ५. प्रभु की मुख सोभा पर (क.प)

५११

[ केदारो ]

मिले पिय साँकरी गली ।

मदनमोहन पिय हँसि गहि' डारी मोतिन चंपकली ॥  
 चारिज बदन निरखि विथकित भई घृघट में न समात नैन अली ।  
 'गोविंद' प्रभु प्यारी जु परस्पर रहे रसमत्त रली ॥

५१२

[ केदारो ]

कौन पत्याइ तिहरी भूठी बतियाँ ।

तैसे ही स्यामल तन तैसेई हो मन में जाने कुँवर सब भतियाँ ॥  
 मुख की हम सों मिलवत जिय की औरनि सों—

त्रियन मारन कों भले पढे घतियाँ ।

नैननि सों नैन मिलत मान छूटि गयो—

'गोविंद' प्रभु प्यारी लाइ लई उर छतियाँ ॥

५१३

[ केदारो ]

कहि न सकति मैं आजु लाल आए मेरें ।

कमल चलावत नैन नचावत, हौं बलि गई अञ्चल मेरे ।  
 छूटि गयो मान सयान सखी री जब हरि कौ मुख हेरे ।  
 'गोविंद' प्रभु की इत बानिक निरखत हूँ जु गई जब चरे ॥

पोढबो—

५१४

[ केदारो ]

अब मोहि सोवन दे री माइ ।

गाइन के संग डोलत बन-बन दूखत मेरे पाँइ ॥  
 सांभ ही तें नैन मेरे नींद पैठी आइ ।  
 नैक मेरी पल न उधरत कछु न खायो जाइ ॥  
 प्रात उठि हौं करों कलेऊ फिर चराऊँ तेरी गाँइ ।  
 'गोविंद' प्रभु बलि जाइ जननी लिये कंठ लगाइ ॥

५१५

[ विहागरो ]

पोढे स्याम जू सुख सेज ।

कंठ श्री वृपमान-तनया सरस रस कौ हेज ।  
 तरनि-तनया-तीर सरकत मोहन माला तेज ॥  
 सोभा की विधि मोहे दंपति 'गोविंद' दास गनेस ॥

५१६

[ विहागरो ]

पोढे दोऊ कुसुम पर्जक ।

प्रेम पुलकि सनेह पूरन भरत हॅमि-हॅसि अंक ।  
 गौर तन सकुँवार स्यामा सुघर केहरि लंक ॥  
 स्याम सनमुख मुदित मुसिकत साधि लोचन वंक ।  
 नव निकुंजहि रची हित सौ सुरति केलि निसंक ।  
 निरखि 'गोविंद' रमिक दंपति भयो रतिपति रंक ॥

५१७

[ विहागरो ]

मिले दोऊ कुंजमहल मनभावन ।

कुसुम रचित सिज्या पर विहरत विथा जु नसावन ॥  
 रति श्रम स्रमिन अवलोकत पूरत पीत वसन जु रिभावन ।  
 'गोविंद' प्रभु पिय सब गुन आगर मगन भए लागे गावन ॥

५१८

[ विहागरो ]

स्यामा स्याम दोऊ कुंज में खेलें ।

अति कोमल किसलय दल सिज्या वंठे अंस भुज निज गेलें ॥  
 हॅसि-हॅसि करत भौवती वतियो प्रेम परस्पर मोद बढ़ावें ।  
 परिरंभन चुंबन आलिंगन सुरति समागम रति उपजावें ॥  
 वन्यो बिहार रमिक रसिकन कौ कुंज मदन सोभा सुखकारो ।  
 'गोविंद दास' परम रुचि उपजत राजत श्री राधा गिरिधारी ॥



राजत दंपति कुंजमहल में ।

बनि ठनि बैठे एक सेज पर डारे भुजा परस्पर गल में ।

करत विनोद अह। रँगभीने आनद सहित पिय प्यारी ॥

‘गोविद’ दास कहाँ लौ वरनो राजत अति राधा गिरिधारी ।

५२०

[ केदारो ]

मदनमोहन संग मोहिनी और कुंजसदन में विलसत नवरंग ।

प्राण ‘प्यारी प्राणप्यारो पिया दोउ लटपटाइ’ पागे आधे आधे—

बचन कहत माते अनंग ॥

परसत नख चिबुक बिदु चाहि रहत बदन इंदु—

हँसि-हँसि गिरि जात कबहूँ प्रेयसी उछंग ।

‘गोविद’ प्रभु सरस जोरी नव किसोर नव किसोरी—

गावत मिलि केदारो मधुरी तान तरंग ॥

५२१

[ केदारो ]

राइ गिरिधरन संग राधिका रानी ।

निविड नत्र कुंज नत्र कंज मिज्या रची नवरंग पीय संग—

बोलत पिक्र बानी ॥

नील सारी लाल कंचुकी गौर तन मॉग मोतिन खचित—

सुंदर सुहानी ।

अर्थ घूँ घट ललन बदन निरखत रसिक दंपति—

परस्पर प्रेम हृदे सानी ॥

लाल तनसुख पाग ढरकि भुव पर रही कुण्हेचपक सेहरो बानी ।

पानि सों पानि गहि उर सों लावत ललन—

‘गोविद’ प्रभु ब्रजनृपति सुरति सुखदानी ॥

१. पियप्यारी (क) २. लटपटात (क) लटपटी पागें आए (ख) ३. डुरि जात(क)

३२२

[ केदानी ]

कुंजमहल कुसुमनि सज्या पर पोढे रसिक रसिकिनी प्यारी ।  
 नव सत साज सिंगार किये तन सोमित है कुसुमनि की सारी ॥  
 तैसीए सरद चाँदनी फयि रही तैसाँ ई पवन बहत सुखकारी ।  
 तैसीए मधुप कोकिला कूजत तैसेई वचन कहत मनुहारी ॥  
 रति स्रम स्रमित जानि प्रीतम के चाँपति चरन वृषभानुदुलारी ।  
 इह सुख निरखि निरखि 'गोविंद' प्रभु तन मन धन कीनों बलिहारी ॥

५२३

[ विहागरो ]

तल्प रची नवकुंज सदन में पोढे दंपति करत विहार ।  
 अरस परस हँसि हँसि विलमे मिलि सुरत समागम परम अपार ॥  
 परिरंभन चुंबन आलिंगन क्रीडत ही भयो सिथिल सिंगार ।  
 कंकन बलय किंकिनी नूपुर धुनि विरमि विरमि उपजत झनकार ॥  
 स्रम कन वदन मदन रस लंपट राधा रसिकिनी नंदकुंवार ।  
 'गोविंद' निरखि हरखि गुन गावन जुगल किसोर—  
 सिल्या रुचिकार ॥

५२४

[ विहागरो ]

'दोऊ मिलि क्रीडत कुंजमहल में ।  
 मदनगोपाल राधिका दुलहनी मेलि भुजा परस्पर गल में ॥  
 रुचिर सुमन की सेज पर पोढे हास विलास करत छलबल में ।  
 'गोविंद' प्रभु गिरिधर प्यारी सँग शीके हैं भीजे स्रमजल में ॥

५२५

[ विहागरो ]

नव निकुंज नाइक नंदनंदन वृषभानसुता सुमन दलन सेस—  
 पोढे रच्यो सुरत रंग ।

हँसि हँसि दोऊ अरस परस रस बस भए प्रमुदित मन भुजमरि—  
लपटत हैं विलसत अंग अंग ॥

नेननि सों नेना और मुख सों मुख नखसिख लखि मानत सुख—  
रोम रोम प्रति कोटिक उदये हैं मानों आनन अनंग ।  
'गोविंद' बलिहारी प्यारी राधा गिरिधारी पर पल न तजो—  
मो मन जुग चख कमल संग ॥

५२६

[ विहागरो ]

पोढे माई ललन सेज सुखकारी ।  
रतन जटित सारोटा<sup>१</sup> बैठी पिय चापति चरन वृषभानुदुलारी ॥  
चरन कमल कुच कलसनि पर धरि<sup>२</sup> अंग अंग<sup>३</sup> पुलकित सकुमारी ।  
करि करि बीरी खवावति पिय कों सुंदर स्याम लेत मनुहारी ॥  
कठ लगाइ भुज दे सिरहाने अधरामृत<sup>४</sup> पीवत पिय प्यारी ।  
रीझि उगार देत 'गोविंद' प्रभु सुरति तरंग रंग रह्यो भारी ॥

५२७

[ विहागरो ]

पोढे माई स्याम स्यामा संग ।  
नंदनंदन कुसुम सिज्या रजित परम सुगंध ॥  
कोक कला प्रवीन दंपति केलि सुरति तरंग ।  
दास 'गोविंद' जुगल निरखत ललित कोटि अनंग ॥

५२८

[ विहागरो ]

पोढे दोउ कुंजमहल मनभावन ।  
कुसुम खचित सिज्या पर बैठे विरह बिथा जु नसावन ॥  
रति सुख स्रमित वदन अवलोकन पूछत प्रीति वचन मनभावन ।  
'गोविंद' प्रभु पिय सब गुन आगर मगन भए अब गावन ॥

१. सारोट में बैसी (ख) २. धरे (ग) ३. मधुरे वचन बोलति सकुमारी (क)

४. अधर अमृत (ख) अवर पान रस करत पियारी (क)

बाललीला—

५२६

[ रामग्री ]

नचवत गोद ले गोविंद ।

निरखि निरखि जसोदा सुख पावत प्रफुलित मुख अरविंद ॥  
 स्याम गात सरोज आनन सोभित दधि के कंद ।  
 कुटिल केस सुदेस मधुकर पीवत माते मकरंद ॥  
 चलत घुटरुन चपल मोहन हँसनि कछु मंद मंद ।  
 दास 'गोविंद' प्रभ विलोकत होत जिय आनंद ॥

५३०

[ विभास ]

पक्व खजूर जंबू बदरी फल लेहों काछिनी टेरी द्वार ।  
 बालक जूथ सग बल<sup>१</sup> मोहन चोंके करत विहार ॥  
 सुंदर कर जननी नौ दीनों ले धाये तव<sup>२</sup> नंदकुमार ।  
 हीरा रतनन<sup>३</sup> पूरत भाजन ऐसे परम उदार ॥  
 लिये<sup>४</sup> लगाइ उदर सों नीके<sup>५</sup> खात जात मीठे परम रसाल ।  
 जूठी गुठली मारत 'गोविंद' के<sup>६</sup> हँसत हँसावत ग्वाल ॥

५३१

[ सारग ]

बडैया लावो मोर चकोरा ।

लाखी लाख के<sup>१</sup> लटकन लावो मानों कंचन के छोरा ।  
 सुनरा गडि के<sup>२</sup> हाथी लावो और सुंदर एक घोरा ॥  
 सुई सुवा सँवार ले आयो पोए पाट के डोरा ।  
 माली बंदनवार ले आयो विच विच राखे छोरा ॥

१. मनमोहन ( र.ग ) २. धाये मकुँवार ( क ) ३. रतन सपूरन ( क )

४. उर सों लगाइ खात खात चले मीठे ( र.ग )

बहोतक दियो नंद बाबा ने कहां कहां लगी औरा ।  
 जनमत ही इन कुँवर कन्हई सबहिन कौ चित चोरा ॥  
 चिरुजीयो हलधर गिरिधर दोउ भलो बन्यो यह जोरा ।  
 देत असीस चले 'गोविंद' प्रभु अपने घर की औरा ॥

५३२

[ विलावल ]

बल मोहन खेलत दोउ मैया ।

भनिमय आँगन नंदराइ के निरखि हरखि मन जसोदा मैया ॥  
 विविध केलि क्रीडत रसभीने सखा संग लिये लाल कन्हैया ।  
 इहि सुख निरखि 'गोविंद' सचु पायो मन बच कर्म करि—  
 लेत बलैयाँ ॥

५३३

[ विलावल ]

बाल केलि घनस्याम की जननी जिय भावे ।  
 सादर सो अवलोकि के अंतर सचु पावे ॥  
 चुंघन आनन सों करे फुनि फुनि उर लावे ।  
 सोवत जानि जिय अपने बैठी गोद खिलावे ॥  
 सेवा पकवान सिठाई दे नवनीत खवावे ।  
 बंगी चकई भँवरा खिलौना दे रिक्कावे ॥  
 औसर जिय जानि के गोपीजन धावें ।  
 अंबुज बदल निहारि के निसि विरह नसावें ॥  
 अद्भुत बालक जानि के सुत के गुन गावे ।  
 'गोविंद' लीला देखि के नैना यों सिरावे ॥

५३४

[ मारंग ]

महरि तू बडभाग जाके मोहन सो बाल ।

बल संग खेलत ब्रज के आँगन मधि—

फोरत दोरत बलि यह नीकी चाल ॥

ऐसी चपल चिकनियों तेरो कन्हैया वरनि गुन हों भई री विहाल ।

‘गोविंद’ प्रभु की वार्ते कहि न परत मोपै ब्रज कौ पतिपाल—

कंस केसी कौ काल ॥

५३५

[ सारंग ]

अब ही तें होटा चित चोरत आगें आगें कहा करोगे ।

नेकु बडे किनि होऊ बलि जाऊँ त्रिभुवन जुवतिनि कौ मन जु हरोगे ॥

देखत के नन्हे से उदर में सप्त दीप नव खंड—

रानी जसोदा कौ दिखाए सोई साँची अनुसरोगे ।

‘गोविंद’ प्रभु के जु नैन वैन रस<sup>२</sup> सूवत—

मेरे जन मनमथ सो लरोगे ॥

५३६

[ वनाश्री ] -

क्रीडत मनिमय आँगन रंग ।

पीत ताफता कौ भृगुला बन्यो है कुलही लाल सुरंग ॥

कटि किकनी घोष विस्मित सखी धाइ चलत बलि संग ।

गोसुत पूँछ भ्रमावत कर गहि पंकराग सोहें अंग ॥

गज मोतिन लर लटकन सोहें सुंदर लहरित रंग ।

‘गोविंद’ प्रभु के जु अंग अंग पर वारों कोटि अनंग ॥

१ जसुमति कौ दिखाए हैं जोई कहो सोई ( क ) २ सुव मचित ( ग )

५३७

[ टोडी ]

देखो जु मोहन काहू अबै मेरी ईदुरी दुराई ।  
 सूधें सूधें बेगि किनि<sup>१</sup> मानों यह कौने दीनी चतुराई ।  
 कछु<sup>२</sup> जु परस्पर करत सेंना ब्रैनी ताहि मोहि किनि<sup>३</sup> देहु बतारै ।  
 सबे सिमिट ह्यौ कहत कौन सौं ताकी फँटि पकरें किन धारै ॥  
 जो पे होइ<sup>४</sup> सोई किन मानों ताहि है ब्रजराज दुहारै ।  
 'गोविंद' प्रभु कछु हँसत बोहोतसे मो जान तुमही जु चुराई ॥

५३८

[ गौरी ]

अथैयाँ बैठे हैं ब्रजराज ।  
 मागध सूत पुरोहित और सब बडडे गोप समाज ॥  
 राम कृष्ण निकसे मदिर तें पाछे लागी माँ जु ।  
 "हँसि मुख चूमि उछंग लिए 'गोविंद' प्रभु पूरन भए काजु ॥

५३९

[ श्रीराग ]

खेलत तें आए धाए बैठे ब्रजराज गोद ।  
 हृदे लगाइ आघ्रान लेत हैं खेलत हँसत प्रमोद ॥  
 सुंदर कर उगार माँगत हैं चितै तात मुख कोद ।  
 'गोविंद' प्रभु कहे<sup>५</sup> चलो भोजन भयो बोलत भात जसोद ॥

५४०

[ सकराभरत ]

खरिक दुहाए आवति सब ब्रजबधू<sup>६</sup> बल्लभ पति सुत ठाढे रोकें मगुरी ।  
 एक चली मुख मोरि तोरि तन एक कहति निसिदिनु यह<sup>७</sup> इनें टगुरी ॥

१. क्यों न ( ख ग ) २. कछुक ( क ) ३. क्यों न ( ख ग )

४. बेगि सोई मानों ( क ) ५. हरि ( ख ) ६. प्रभु सौं कहे ( क )

७. जुवति ( क ) ८. वह यहो टगुरी ( क )

मखतूली ईदुरी मोतिन की भालरि भूमिका—

ठमकि नेकु चलत धरत भेद सों पगु री ।

‘गोविंद’ प्रभु सों कहति परस्पर एतो दिन दिन ही के भले बडे नगुरी ॥

५४१

[ कान्हरो ]

घुटरुन नंदलाल चले री माई कवहुँ कवहुँ धर में—

खेलत बल हरे ।

वाल रूप अति अनूप विधुरि कच मानों मधुप किलकि किलकि—

हँसे स्याम राजीव रज मरे ॥

तरजनि करि विधि विधाइ सिखवति पग चलन माइ—

प्राकृत ज्यो डगमगाइ गिरत धरनी परे ॥

‘गोविंद’ प्रभु नंदसुवन जसोमति अनुराग साग जाकी सज्या—

सेस नभ सकल भुव हरे ॥

५४२

[ कान्हरो ]

देहो लाल ईदुरियाँ मेरी । ए<sup>१</sup>तो निहोरो कीजतु<sup>२</sup>—

होत अवार मेरे संग की दूरि जाति बलि कौन टेव यह तेरी ॥

जदपि गाँव के ठाकुर सत्र के भामते तुम पेंडे में—

ब्रजबधून<sup>३</sup> राखत घेरि घेरि ।

‘गोविंद’ प्रभुरसमत्त परस्पर चलेरी जहाँ तहाँ कुंज अँधेरी गली ॥

अशाहनी—

५४३

[ धनाश्री ]

बरजि बरजि सुत अपनो री वारो ।

सदा विग्रह गृह काज करें क्योँ चोर चपल चतुर अति भारी ॥

धरति उठाइ दूध दधि भाजन जहाँरी सखी अति बहुत अँधियारी ।

कंठ चरन कर घृत बहु मनि गन जहाँ री जाइ तहाँ अंग उज्यारी ॥

१. ए निहोरो ( ल. ग ) २. कीजियत ( क ) ३. मज बधूबद ( ख. ग )



बैठे मनो कछू नहिं जानत ज्यों<sup>१</sup> बसुधा पर भवन है कारों ।  
बदन छिपाइ हँसी जननी तब 'गोविंद' प्रभु ब्रजलों बन तारो ॥

५४४

-[ धनाश्री ]

लाडिलौ लाल खेलत री वृंदावन ।

मौरा चकई पाट के लटकन जसुमति मनहिं रिभावन ॥

भगुली पीत तन कुलही बंधुना मनमथ कौ मनहिं लजावन ।

'गोविंद' प्रभु पिय इहि विधि क्रीड़त देखत अति सुख पावन ॥

५४५

[ आसावरी ]

स्याम सुंदर बन खेलत सखानि संग विविध केलि ।

कलिंदनंदिनी तट बाँधि फेंट पट करत जुद्ध भुज जु परस्पर पेलि ॥

काहू की मुरली चोरत काहू की शृंग गस्टिका काहू कौ छीकौ मांडौ—

काहू की चोरत सेलि ।

'गोविंद' प्रभु पिय रस भरे निरत प्रिय सखा के ग्रीवाभुज मेलि ॥

५४६

[ ईमन ]

卐 महरि पूत तेरो कैसेऊ बरज्यो न मानें—

बल मोहन की जोटीऊ और बालक संग लिए मरकट घेरें फिरें—

पाछे पाछे तें और लूटत घर मेरो ॥

दूध दही<sup>२</sup> घृत माखन तनक न उबरत कैसेक होय—

विसवास हम केरो ।

'गोविंद प्रभु के जू बाल विनोद सुनत नंदरानी मन ही मन—

मुसक्यानी साँची ही कहत अनेरो ॥

१. ज्यों ( ख ग )

卐 " कैसेऊ बरज्यो न मानें " ऐसा भी प्रारन है ।

२. दही ( क )

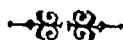
△ मोहन माखनचोरी करत फिरत । बरजो रानी 'जू—  
माखनचोरी करो तो भले ई करो ताको कछू न कहें 'री माई—  
और चोरी चित करत फिरत<sup>३</sup> ।

ताको रानी तुम हटको देखत मन जु हरत ॥

तन गति मन गति सब बिसरी री आवें न कछू गृह काज\* करत ।

निसदिन फिरत संग लागी-लागी 'गोविंद' प्रभु की मैया—

सुनि सुनि मन हरषत ॥



△ "बरजो रानी जू मोहन" पेसो भी प्रारभ हैं ।

१. नंदरानीजू (क)

२. हटके री (क), ३. कित करत देखत मन जुहात (क) ४ माता (च. ग.)

## प्रकीर्ण

★

व्रज-सुषमा—

५४८

[ आसावरी ]

श्री जमुना अधम उधारनी मैं जानी ।

गोधन संग स्याम घन मुंदर ललित त्रिभंगी दानी ॥  
 गंगा चरन परसि के पावन हरि विरंच सिव मानी ॥  
 सात समुद्र भेद जम भगिनि हरि नख सिख लपटानी ॥  
 रास रसिक मनि नित्य परायन प्रेम पुंज ठकुरानी ।  
 आर्लिंगन चुवन रस विलसत कृष्ण पुलिन रजधानी ॥  
 ग्रीषम रितु सुख दें नाथ कों संग लाडिली रानी ।  
 'गोविंद' प्रभु रवि तनया प्यारी भक्ति मुक्ति की खानी ॥

५४९

[ रामकली ]

जमुना जस जगत में जोइ गायो ।

जा पर कृपा श्रीवल्लभ प्रभु करे सोई जमुनाजू कौ भेद पायो ॥  
 वेद पुरान कों बात इहे अगम है प्रेम कौ भेद कोऊ न पायो ।  
 'गोविंद' कहें जमुना की जा पर कृपा सोई बल्लभ कुल—

सरन आयो ॥

५५०

[ रामकली ]

जमुना सी नाहिं कोऊ और दाता ।

जेइ इनकी सरन जात हैं दौरि के ताहि कों तिहि छिनु—

करी सनाथा ॥

एही गुन गान रसखान रसना एक सहस्र रमना क्यों न—

दई विधाता ।

'गोविंद' बलि तन मन धन वारने सवनि की जीवनि इनही—

के हाथा ॥

५५१

[ आसावरी ]

कृष्ण तरंगिनी रस रंगिनी जमुना जाको दरस परस सरस करत—

हिए जिए नैननि वैननि ।

कहा कहें कहिए देखि देखि रहिए जो लहिए आप व चैननि ॥

वृंदावन सरूप दरसावन भानुसुता लागी रहे नैननि ।

जाके तीर लखि लखि 'गोविंद' प्रभु वसत लसत कलिकुंज—

ऐननि ॥

५५२

[ आसावरी ]

चरन पंकज रेनु जमुना देनी ।

कलिजुग जीव उधारन कारन कटत पाप धार पेंनी ॥

प्रानपति प्रान इह आइ भक्तिनि नेह सकल यह सुखकी हो जुसेनी ।

'गोविंद' प्रभु विन रहत नहिं एकछिनु अतिही आतुर चंचल—

जो है वेंनी ॥

५५३

[ आसावरी ]

स्याम रंग स्याम हूँ रही री जमुने ।

सुरति स्रम विदुतें, सिंधुसी बहि चली मानो आतुर अली रहत भवने ॥

कोटि कामहि वारों रूप नेन निहारों लालगिरिधरनि संग करत रमने ।

हरखि 'गोविंद' प्रभु देखि इनकी ओर मानों नव दुलही आई गमने ॥

५५४

[ आसावरी ]

श्रीजमुना यह विनती चित धरिए ।

गिरिधरलाल मुखारविंद रति जनम जनम नित करिए ॥

विष सागर सार विषम अति विमुख संग तें डरिए ।

काम क्रोध अग्यान तिमिर अति उर अंतर ते हरिए ॥

तुम्हारे संग वसों निज जन संग रूप देखि मन ठरिए ।

गाऊँ गुन गोपाललाल के अष्ट व्याधि तें डरिए ॥

त्रिविध दोस हरिहो कालिदी एक कृपा कहि ठरिए ।

'गोविंद' दास इह वर मांगें तुम्हारे चरन अनुसरिए ॥

५५५

[ कान्हरो ]

धनि धनि हो हरिदास राई ।

सानुग सेवा करत सकल विधि तातें बलि 'मोहन जिय भाई ॥  
 कंद मूल फल फूल पत्र ले सिंघासन रुचिर बनाई ।  
 कोमल तृन गाइनि चरिबे कों सीतल २सिब भरना जु बहाई ॥  
 विविध केलि क्रीडत जु सखन सँग छिन उतरत छिनु चढत जु धाई ।  
 राम कृष्ण के चरन परस ते' पुलकित पहुपित रहत सदाई ॥  
 इनकों भानु कहाँ ते' वरनो कोमल कर लीनो जु उठाई ।  
 प्रेममृदित यों कहत गोपिका तिन पर 'गोविंद' बलि बलि जाई ॥

५५६

[ सोरठ ]

बरसाने हमारे रजधानी हो ।

महाराज वृषभानु महीपति जहाँ कीरति सुभ रानी हो ॥  
 गोपी गोप सो राजत बोलत मधुरी बानी हो ।  
 रसिक भुगटमनि कुँवरि राधिका वेद पुरान बखानी हो ॥  
 खोरि साँकरी मोहन ढूँकयो दान केलि रति ठानी हो ।  
 गहवर गिरिधर बहु विधि विलसत गढ बिलास सुखदानी हों ॥  
 दूध दही माखन रस घर घर रसना रहत लुभानी हो ।  
 पान करन कों अमृत सारस मानों खग कों पानी हो ॥  
 सदा सर्वदा परवत ऊपर सोभित श्री ठकुरानी हो ।  
 अष्ट सिद्धि नव निधि कर जोरे कमल निरखि ललचानी हो ॥  
 दीये लेत न चाखि पदारथ जाचक जन अभिमानी हो ।  
 'गोविंद' दास दृढ कीनो भागवत जग जानी हो ॥

५५७

[ केदारो ]

धनि धनि वृंदारण्यकुरंगिनि ।

श्रीमुखकमल पीवति सखी सादर कृष्णमार पतिसंगिनि ॥

चरनकमल कुंकुम रूपित तृन कुच अवलेप करति तत्रति—

आधिमनसिज पुलंदनि ।

‘गोविंद’ प्रभु कौ जु अमृत नाद सुनि थकित प्रवाह तरंगिनि ॥

५५८

[ म रग ]

△चे देखियत हमारे गोकुल के रख जू ।

प्राचीदिसि तें नेकु ही दच्छिन मेरी अँगुरी के अग्रज करो—

नेकु मुख जू ॥

गोवर्द्धन शृंगचढि कहत हैं<sup>१</sup> मोहन<sup>२</sup> बलदाऊजू हमें देखिवे—

की भूख जू ।

जनमभूमि चलि आए ‘गोविंद’ प्रभु तन पुलकित मन भयो—

अति सुख जू ॥

५५९

[ गौरी ]

\*इहाँ ते देखिये सकल व्रजदाऊ चढि गिरि शृंग कहत हैं मोहन—

इहाँ तो धावत सपत तुमहिं व्रजराज कां नेकु इहाँलौं चलि<sup>३</sup> आऊँ ॥

अकचका<sup>४</sup> काहू स्रभत भैया हो कनक कलस पर धुजा फहराऊँ ।

‘गोविंद’ प्रभु सौं कहत सखा ऐसैं हौं तुम्हें देऊँ दिखाऊँ ॥

५६०

[ नट ]

देखो बलि दाऊ सो भावन !

सकल वृद्ध फलफूल भेंट दे वंदत तुम्हारे चरन ॥

△ “ हमारे गोकुल के रख जू” ऐसा भी प्रारभ है ।

१. कद्यो मोहन ( ख. ग ) २. चलिपु दाऊजू ( क )

\* ‘चढि गिरि शृंग कहत हैं मोहन इहाँ तें’...ऐसा भी प्रारभ है,

३. बलि ( ख ) ४. अथ कहा कहूं ( क )

नाचत मोर भँवर सब गावत चितवति मृगी प्रेम भरि लोचन ।  
 'गोविंद' बलि धनि धनि बनवासी हैं मुनिन मयुर वचन—  
 बोलति कोकिला गन ॥

श्रीवल्लभ कुल—

५६१

[ विभास ]

भोर भए सुमरहु श्रीवल्लभसुत अघमोचन है नाम अनूप ।  
 करि करुना अघनीतल प्रगटे विट्ठलनाथ श्रीगोकुलभूप ॥  
 निज जन हेतु भक्तिभूतल सों कियो प्रचार धरि द्विजवररूप ।  
 मायाबाद निवारन कारन प्रगटयो आइ निगम को भूप ॥  
 रुकमनिपति कियो जगत उजारो लाजत हैं रति निरखि स्वरूप ।  
 जो पे' श्रीविट्ठल प्रगटन होते तो सब जीव परत अंधकूप ॥  
 रसना रटत होंतु मन आनंद है आनद समुद्र तनुज ।  
 'गोविंद' कहै मेरे प्रभु सोई जो श्रीगोपीनाथ अनुज ॥

५६२

[ विभास ]

निसि दिन वल्लभ वल्लभ कहिए ।

दुल्लभ श्री बल संग लीनें और वे दुख सहिए ॥  
 श्रीवल्लभ पद प्रीति रीति यह काहू सों न जनइए ।  
 श्रीवल्लभ स्वरूप महिमा जस वल्लभ जन सों कहिए ॥  
 श्रीहरि बदन बहोत सुखदाइक श्रीवल्लभ गुन गइए ।  
 श्रीविट्ठल करुना तें 'गोविंद' श्रीवल्लभ पद पइए ॥

५६३

[ गौडी ]

वल्लभ श्रीवल्लभ श्रीवल्लभ गुन गाऊँ ।

नखसिख सोभा अनुपम बरखत हरिं रस अनूप द्विजवर कुलभूप—  
 सुधा बलि बलि बलि जाऊँ ॥

श्रगम निगम कहत ताहि सुर नर मुनि ललच'हिं—

सकल कला गुन निधान पूरन उर लाऊँ ।

'गोविंद' प्रभु नंदनंदन ललामन सुचित गत बढन ममरथ—

त्रय ताप हरन चरन रेनु पाऊँ ॥

५६४

[ विभास ]

मेरे तन मन धन श्रीवल्लभ सरबम जीवन प्रान आधार ।  
 प्राकृत धर्म रहित अप्राकृत निखिल धर्म सहित साकार ॥  
 निगम निरूपित श्रीपुरुषोत्तम बदनानल श्रीवल्लभ श्रवतार ।  
 श्रीभागवत प्रति मनिवर भूखन भूपित सब अंग सुगार ॥  
 कोटिकरी विनु सेवा साधन तातें हात नांहिन निस्तार ।  
 मन वच क्रम करि भज श्रीवल्लभ पात्रे प्रेम पीयूष सुमार ॥  
 करि करुना भूतल में प्रगटयो निज जन हेतु कृष्ण निरधार ।  
 'गोविंद' कहे श्रीविठ्ठल करुना विनु कलि मों नांहिन होतु उद्धार ॥

५६५

[ विभास ]

मेरो मन अटकयो श्रीवल्लभ सों अरु कछु नांहिन मोहि सुहाइ ।  
 रैन दिना मोहे कल न परतु है विनु सुमरें पल कल्प विहाइ ॥  
 तात मात सुत भ्रात गृहनि गृह खान पान सुख सब विसराइ ।  
 रसना रटत नाम गुन निर्मल हृद धर तनु बहुत सिराइ ॥  
 करि करुना करुनानिधान प्रभु ब्रजपति सेवा दई दिखाइ ।  
 'गोविंद' भवसागर उतरन को श्रीवल्लभ विनु नाहिं उपाय ॥

५६६

[ केदारो ]

लीजे मोहि बुलाइ । श्रीवल्लभ—

बहोत दिवस भयो दरमन भयो मोझे तातें मन अकुलाइ ॥  
 निसिदिन अति ही झीनहोत तब सुधि बुधि गई भुलाइ ।  
 'गोविंद' प्रभु तिहारे दरस विनु जुग कल्प विहाइ ॥



५६७

[ विलावल ]

श्रीवल्लभ सदा विशाजमान । कोउ और न दूजो इन समान ॥  
जाके सिव चतुरानन धरत ध्यान । जाकौ जस सुरनर मुनि करत गान  
प्रभु पुष्टि सृष्टि के जीवन प्रान । हरि वदन लमित वल्लभ सुजान ॥  
मायाबादिन कौ उतारयो मान । द्वित्रवल्लभलच्छमनकुनउदयोमान  
श्रीवल्लभ दिन फछुए न सोहेआन । श्रीवल्लभ चरनामृत कीजे पान ॥  
श्रीवल्लभ दयानिधि देत दान । त्रिभुवन वजाइ वाजे हो निसान ॥  
‘गोविंद’ गुन गावत सुखद तान । वरपत कुसुमनि सुर चढि विमान ॥

५६८

[ विलावल ]

\* श्रीवल्लभ चरन लग्यो चित मेरो ।

इन बिन और कछू नहिं भावे इन चरननि कौ चेरो ॥  
इनहिं छॉडि जो और धावे सो अति मूढ घनेरो ।  
‘गोविंद’ इहि निश्चै करि लीनो सोई ज्ञान भलेरो ॥

५६९

[ विलावल ]

रह्यो मोहि श्रीवल्लभग्रह भावे ।

सुनि मैया तू मो डर माखन दूध दह्यो छिपावे ॥  
तू अति क्रूर कृपन है कहा कहूँ नित प्रित मोहि खिजावे ।  
मेरे प्रान जीवन धन गोरस सो तू मोतें दुरावे ॥  
खीर खॉड परवान विविध ले प्रात ही मोहि जगावे ।  
तेल सुगंध लगाइ प्रीत सों ताते नीर न्हवावे ॥  
भूखन बसन विविध मन भावे पलटि पलटि पहरावे ।  
नेन अँजि तिलक मृगमद कौ दर्पन मोहि दिखावे ॥

\* “चरन लग्यो चित मेरो ” ऐसा भी प्रारंभ है ।

पट्टस व्यंजन मोहि जिवावे हित सों वीरी खवावे ।  
 भँवरा चकई विविध खिलौना ले कर मोहि खिलावे ॥  
 विविध कुसुम अपने कर गुहि के माला हू उर लावे ।  
 सुख पर्यंक सँवारि मृदुल अति ता पर मोहि सुवावे ॥  
 डोल भुलावे रथ वैठावे हिंडोरा पालना भुलावे ।  
 रितु वसंत जानि जिय अपने ले सुगंध छिरकावे ॥  
 जनम द्यौस आवत जब मेरो आँगन चौक पुरावे ।  
 वाजे विविध बजे बहु घर घर वंदन माल बंधावे ॥  
 मेरे गुन गुनीः जनन पै मोकों सप्त सुरनि सुनावे ।  
 हरद दूब अञ्जत दधि कुंकुम मंगल कलस भरावे ॥  
 धेनु दिवाइ स्वजन पै मोकों आसिस वचन पठावे ।  
 केनिक बात कहूँ हौँ हित की मोपे कही न आवे ॥  
 मेरे लिये पवित्रा राखी अति सुंदर बनवावे ।  
 सेवा रीति भाँति निज जन को आपुहि करिके सिखावे ॥  
 नों दिन नए भोग करि मोकों हित सों भोग लगावे ।  
 दसमी विजे सजी रघुवर को जब अंकुर धरावे ॥  
 सुरभी वृंद न्योति इह निस पुनि पुनि लाड लडावे ।  
 बहु विधि पाक सँवारि मुदित मन दीप दान दिवावे ॥  
 सुरपति मान भंग प्रति पद दिन गों गिरिराज पुजावे ।  
 मेरे प्रादुर्भाव द्यौस निसि उर आनंद न समावे ॥  
 घसि गुलाब कीनों सो चंदन कपूर सुगंध बसावे ।  
 सीतल व्यार वारि सीतल में वदि मोहि रिभावे ॥  
 सीतल नीर सुगंध सुवासित कोरे अधिवासन लावे ।  
 भरि भरि नीर न्हावाय सीस पर मो तन ताप नसावे ॥  
 कातिक सुक्ल एकादसि दिन कुंज में मोहि विठावे ।  
 पाट सुगंध बसन पहरावत प्रबोधिनी पर्द मनावे ॥

सरद पून्यो है रास दिन मेगे नटवर भेख बनावे ।  
 मोरमृकुट पीतांबर काछनि मुरली करहि गहावे ॥  
 श्रुति मतिमंद कमल कलिजुग व्रत जगमगावे ।  
 'गोविंद' कहै श्रीवल्लभकरुना विनु रस कबहुँ न पावे ॥

५७०

[ विलावल ]

रे मन भजि श्रीविट्ठलनाथे ।

श्रौटे कुपथ देखि जिन भूले करत सु जनम अकाथे ॥  
 जो भवसागर तरिबो चाहे धारे प्रभु कर माथे ।  
 गिरिधर 'गोविंद' के प्रभु कौ गावे गुन गन गाथे ॥

५७१

[ विलावल ]

श्रीवल्लभ सुत विट्ठलेश पद सरोज पाऊँ ।  
 देवी देव अन्य भजन तजि सरन हौं जाऊँ ॥  
 पर निंदा दुष्ट संग विषय जु विसराऊँ ।  
 दारा सुत धन समर्पि निज समीप आऊँ ॥  
 श्रीभागवत स्रवन करूँ तिहारे गुन गाऊँ ।  
 सुमिरोँ निसिदिन हौं सदा तुम ही सिरनाऊँ ॥  
 करि करुना दीजे दान तिहारी मोहि सेवा ।  
 रंक जानि 'गोविंद' मिले भव उदधि खेवा ॥

५७२

[ स रंग ]

श्रीविट्ठलेश प्रभु समर्थ निज जन सुखदाई ।  
 सेवक संकट निवारि होतु हैं सदाई ॥  
 सुमिरेँ सुख होत है मोहि विसरे दुखदाई ।  
 याकी कृपा दृष्टि तें मैं पुष्टि भक्ति पाई ॥  
 रंक जीव जानि कें मोहि निकट बुलाई ।  
 जमुना के तीर 'गोविंद' दियो दरस दिखाई ॥

आश्रय (विनयी) —

५७३

[ गौरी ]

हमहिं ब्रज लाडिले सों काज ।

जस अपजस कौ हमें<sup>१</sup> डर नाही कहनो<sup>२</sup> होइ सो कह--

लेउ आज ॥

किधों काहु कृपा करी धों न करी जो सनमुख—

ब्रज नृप जुवराज ।

'गोविंद' प्रभु की कृपा चाहिये जो है सकल धोख—

सिर ताज ॥

५७४

[ गौरी ]

कहा करों वैकुंठे जाइ ।

जहाँ नहीं बंसीवट जमुना गिरि गोवर्द्धन नद की गाँइ ॥

जहाँ नहीं ए कुंजलता द्रुम मंद सुगंध बाजत नहिं वाइ ।

कोकिल मोर हंस नहिं कूजत ताकी बसियो काहि सुहाइ ॥

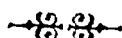
जहाँ नहीं बंसी धुनि बाजत कृष्ण न पुरवत अधर लगाइ ।

प्रेम पुलक रोमाञ्चय उपजत मन क्रम वच आवत--

नहिं दाइ ॥

जहाँ नहीं ए भुव वृंदावन बाबा नंद जसोमति माइ ।

'गोविंद' प्रभु तजि नंद सुखको ब्रज तजि वहाँ बसत बलाइ ॥



१. हमहिं कहा डर ( ख ) मोहि कहा डर ( क ) २. कहिनो ( ग )



# तात्परिकाएँ



## १. राग

अडानौ	आसावरी	ईमन	कल्यान
कान्हरो	काफी	केदारो	गौरी
गौड मल्हार	गौडी	जैतश्री	टोडी
दरवारी कान्हरो	देवगंधार	धनाश्री	नट
नाइकी	पूरवी	घसन्त	विलावल
विहाग	भैरो	मल्हार	मारु
मालकोस	मालव	मालव गोरा	रामकली
रागश्री	ललित	विभास	श्रीराग
सारग	सूहो	सोरठ	सोरठ मल्हार
संकराभरन	हमीर कल्यान	—	—

## २. वाद्य

अधौंटी	अमृतकुंडली	उपंग	कठताल
कातर	किन्नरी	घटा	भालरि
भाँफ	डफ	ढोल	तार
ताल	ताल तत्र	तूर	दमामा
दुंदुभी	वौसा	निसान	चूपुर
पखावज	पटह	पचसब्द	वांसुरी
व्याव	त्रेना	बेला	बैनु
त्रीन	भेरि	महुवरी	मुरभ
मुरली	मृदग	रवाव	रुंज
शृ गी	सहनाई	संख	—

## ३. ब्रजभाषा के ठेट शब्द

मटका	पान्यो	खरुवे	नाऽवै
ऊतरु	पनारि	जसोधा	अवऽव
अवार	भटको	उसरो	अचगरो
अथग	वाछरु	फुनि	चोम
बडेडे	मतौ	अचका	कुअटा
पान्यो	लेज	मुरकी	अवौटी
झैया	अलहीये	दहो	बछरुवा

धौरी	किधौं	आगरं	गुमान
खगत	चितए	कोद	गसा
हवाल	ढीढथौ	तलावेली	वंकरी
जैवो	लडिंकयात	चिकनियॉ	हटको

### ४. मुहावरे

लादी है लोग सुपारी

गोहन परौ

मारत गाल पटको

अटपटी कित देत

बडेई स्याम नाग

ठाठु ठयो

प्रेम की पाल

जैसे हरद चूनरी

लौन छाले पर

बार्ते तो बोहोत उफानि

इत उत की पाँच सात

रहो कोऊ पाँच सात

चौगान की गेंद भई री

गाल मारत घर वैमें

परी है आँट

पलहुँ न लाई

लगिये दूर ही तें पगु

कान दे री

लेत उछग

फूले अंग नमाहि

त्रन तोरें

मधुपान

तू डार तौ हैं री वे पात पात

राजा मीत सुने नहि देखे

रहो भुखा

हमारी राम राम है

### ५. वस्त्र-आभरण-शृङ्गार

पीताम्बर

कंचुकी

फेट

पाग, पगिया

पिछवाई

चीरा

नीलाम्बर

वनमाला

शख

लर

मीन

वलथ

वाजूवंद

भगुली-भगुला

सूथन

वागा

तनसुख, ताफता

लहरिया

उपरेना

गोपभेख

चूडी

चक्र

मुकुट

कौस्तुभमनि

अगद

टिपारा

तनिया

चौलना

अतरोट

चूनरी

काछनी

काछ (कच्छ)

भृगुपद-श्रीवत्स

पोत

गदा

कुंडल

किंकिनी

कुलह

मुक्तामाल

अंचल

कुलही, कुली कुलहै

पिछोरा

कांवर (री)

भूमकसारी

सारी

क्रीट

नक्षत्रमाला

पद्म

मकर

कंकन

सिरपेच

सीसफूल

कलगी	चुरा	तिलक	वेसर
पहुँची	सुदरी	मुट्टिका	नूपुर
भसिबिदुका	।	काजर	बघना
हार	गुंजा	कठुला	खुंभी
नकवेसर	कंठसिरी	मोलिसिरी	चौकी
निरमोला	मांग	वेनी	भलमली ;
नवग्रही	गोला	वैदी	करनेटी
छुद्रावली (छुद्रघटिका)	जेहर	चौकी	हंसुली
चिवुक्र	वरुहाचद	ताटक	सेहरा
चौकर	दुलरी	—	—

### ६. सामग्री

पायस	सूप	पूरी	पुआ
मेवा	मिठाई	मिश्री	संधाना
मलाई	दूध	दही	घृत
भाखन	नवनीत	गोरस	पान
गगाजल	पाक	साक	पय
चीड़ा	खीचरी	दही भात	लुचई
पैया	दधि ओदन	फल	मधुर ओदन

### ७. सम्पादन की आधार-सामग्री

सरस्वतीभण्डार/कांकरोली में प्राप्त गोविन्दस्वामी के पद संग्रह

३१	बन्ध. पुस्तक सं० ६/६३	४१ से ८७ पत्रों पर (मध्योत्तर)
२.	” ६/३	अशुद्धप्राय
३.	” ३४/५	पूर्ण
५४.	” ३४/१०	”
Δ५.	” १६/३	”, (सं० १८६३)
६.	” ३६/१	अपूर्ण
७.	” ५६/२	२५२ पूर्ण
८.	” १३१/६	अपूर्ण
९.	” १३२/६	२०२ से २५१ पत्रों पर
१०.	” १४३/४	X
११.	मथुरेश पुस्तकालय १४/६	२५२ पूर्ण

❧ ❧ Δ इन प्रतियों को क्रमशः क. ख. ग. मानकर पाठनेद दिये गये हैं।



घोरी	किर्घो	आगरं	गुमान
खगत	चित्प	कोड	गसा
हवाल	ढीढ्यौ	तलावेली	व फ़करी
जैवो	लडिक्यात	चिकनियाँ	हटकां

### ४. मुहावरे

लादी है लोग सुपारी	गाल मारत घर वैमें
गोहन परौ	परी है आँट
मारत गाल पटको	पलहुँ न लाई
अटपटी कित देत	लगिये दूर ही तें पगु
बडेई स्याम नाग	कान दे री
ठाठु ठयो	लेत उछग
प्रेम की पाल	फूले अग नमाहि
जैसे हरद चूनरी	त्रन तोरें
लोन छाले पर	मधुपान
वातें तो वोहोत उफानि	तू डार तौ हैं री वे पात पात
इत उत की पाँच सात	राजा मीत सुने नहिं देखे
रहो कोऊ पाँच सात	रहो भुखा
चौगान की गेँद भई री	हमारी राम राम है

### ५. वस्त्र-आभरण-शृङ्गार

धीताम्बर	भृगुली-भृगुला	तनिया	अंचल
कचुकी	सूथन	चौलना	कुलही, कुली दुल्हैय
फँट	वागा	अतरोटा	पिछोरा
पाग, पगिया	तनसुख, ताफता	चूनरी	कांवर (री)
पिछवाई	लहरिया	काछनी	भूमकसारी
चीरा	उपरेना	काछ (कच्छ)	सारी
नीलाम्बर	गोपभेख	भृगुपद-श्रीवत्स	क्रीट
वनमाला	चूड़ी	पोत	नक्षत्रमाला
शख	चक्र	गदा	पद्म
लर	मुकुट	कुंडल	मकर
मीन	कौस्तुभमनि	किंकिनी	कंकन
वल्लय	अगद	कुलह	सिरपेच
वाजूवद	टिपारा	मुक्तामाल	सीसफूल

फलगी	चुरा	तिलक	बेसर
पहुँची	मुंदरी	मुद्रिका	नूपुर
मसिबिदुका	।	काजर	बघना
हार	गुंजा	कठुला	खुंभी
नकबेसर	कंठसिरी	मोलिसिरी	चौकी
निरमोला	मांग	वेनी	भलमली !
नवग्रही	गोला	बैदी	करनेटी
छुद्रावली (जुद्रबंटिका)	जेहर	चौकी	हसुली
चिबुक	वरुहाचंद	ताटक	सेहरा
चौकर	दुलरी	—	—

### ६. सामग्री

पायस	सूप	पूरी	पुत्रा
भेवा	मिठाई	भित्री	संधाना
भलाई	दूध	दही	घृत
माखन	नवनीत	गोरस	पान
गगाजल	पाक	साक	पय
बीड़ा	खीचरी	दही भात	लुचई
घैया	दधि ओदन	फल	मधुर ओदन

### ७. सम्पादन की आधार-सामग्री

सरस्वतीभण्डार/कांकरोली में प्राप्त गोविन्दस्वामी के पद संग्रह

३१.	वन्य. पुस्तक	सं० ६/१३	४१ से ८७ पत्रों पर (मध्योत्तर)
२.	"	६/४	अशुद्धप्राय
३.	"	३४/५	पूर्ण
५४.	"	३४/१०	"
△५.	"	१६/३	" (सं० १८६३)
६.	"	३६/१	अपूर्ण
७.	"	५६/२	२५२ पूर्ण
८.	"	१३१/६	अपूर्ण
९.	"	१३२/८	२०२ से २५१ पत्रों पर
१०.	"	१४३/४	×
११.	मथुरेश पुस्तकालय	१४/६	२५२ पूर्ण

ॐ ५ △ इन प्रतियों को क्रमशः क. ख. ग. मानकर पाठभेद दिये गये हैं।

## ८. संशोधन-पत्र



अशुद्ध	शुद्ध	पद स०	अशुद्ध	शुद्ध	पद स०
थरावत	धरावत	६६	रखवारी	रखवारो	२३६
हुस	ईस	७१	आकत	आवत	२३७
गहज	गरज	७२	तेज	तजे	२४२
बटो	बढो	८५	आके	जाके	२४६
श्रीबल्लभ आत्मन धीबल्लभात्मज		६६	गात	घात	२५०
कूर	कर	११२	घात	बात	२५०
ले पियो	लेपियो	११६	अलि	भली	२६२
प्यार	प्यारी	१२३	कुच	कच	२६६
राइकेस	राकेस	१२५	रवि	रचि	२७१
न्हाइ	न्हान	१२६	धैया	धैया	२८२
वारी	ग्वारी	१२६	मधि	मधि	२८४
रसपति	रतिपति	१३६	कूपोदन	सूपोदन	२८६
अरि	और	१४६	औट	आर	२६५
कंजन	कुंजन	१५०	अनंगम गावत	अनंग समावत	३१७
जाइ	कोइ	१५२	सुगध	सुधंग	३३३
विस्ताई	विस्तार	१५५	पढैये	पढैये	३४३
श्रीविठ्ठल	श्रीबल्लभ	१५८	धारे	चारें	३६१
सुख	मुख	१६०	बालेज	वनज	३६३
वदन	वरन	१६२	पति	पीत	३६४
घर	घट	१६७	हो गी	है री	३७०
पर	पट	१७२	सकल	सफल	३७६
है दंड	कोदंड	१७८	मरु	अरु	३७८
वसीपट	वसीवट	२००	पुर	पुट	३८४
बज	बंक	२०३	नाव	नख	४१२
मन	मनि	२०४	अधप	अधर	४२०
चाहि	चारि	२०४	ईष्ट	ईषद्	४२६
विदित भयो गा। उदित भयो मान		२२३	सुरगा में	सुरग ता में	४४७
कहा	कहि	२३०	मृदु	मृग	४६१

अशुद्ध	शुद्ध	पद सं०	अशुद्ध	शुद्ध	पद सं०
सरन	सरस	४६६	गेलें	मेलें	५१८
विपाता	विधाता	४८१	सेस	सेज	५२५
चेलि	पेलि	४६०	नौ	जौ	५३०
मोती	मोही	४६०	साग	राग	५४१
अटवरात	अरवरात	५००	कुंज अँधेरी गनी	कुंज गली	अँधेरी ५४२
उला	उलर	५०१	चाखि	चारि	५५६
फन	कल	५०६	प्रति	प्रतिपद	५६४
मना के	मनावो	५०७	आँटे	आँरे	५७०
पूछत	पौछत	५१७	सुख	सुवन	५७४

विशेष—

मात्रा, रेफ, अनुस्वार आदि की न्यूनाधिकता की त्रुटियाँ यथाम्यान सुधार कर पड़े ।